# सांझ ढलेगी तेरी भी..

शंकराचार्यांश ब्रह्मानंद अक्षयरुद्र

ॐ गं गणपतये नमः

ॐ गुरवे नमः

ॐ शुकदेवाय नमः

# अनुक्रमणिका

# अध्याय 1
# स्वाध्याय और समर्पण का अमोघ फल

धन कमाकर दान से स्वर्ग आदि लोक या 108 दीपकों का दीवट या मंदिर बनाने से अथवा  हर माह प्रभु के मंदिर में सामर्थ्य के अनुसार शुद्ध गौघृत ( दीपक हेतु ) दान से या तुलसी बिल्वपत्र आदि के नियम से अनेक मन्वन्तर तक इष्ट लोक प्राप्त हो जाता है तथा श्रीमद्देवीभागवत महापुराण, भागवत, शिव पुराण के स्वाध्याय से करोड़ों कल्पों तक इष्ट धाम मिलता है ऐसा कर्मफल ही भगवान ने बनाया है यही नियम है क्योंकि संतों के वाक्यों में मानव के पाप ताप नष्ट करने की वो शक्ति है जो किसी भी उपाय में नहीं। अतः स्वाध्याय अवश्य करते

रहें। आज का तथाकथित अज्ञानी वक्ता आपको शास्त्र विरुद्ध बात कहता मिल सकता है पर शास्त्र यथार्थ पराविज्ञान ही कहते हैं। वे मिथ्याबाद का डंका नही पीटते। पाँच प्रकार की पूजा में एक मूर्ति पूजा है और एक स्वाध्याय भी पूजा का विशेष प्रकार है। शिव गीता के अनुसार भगवान शिव जी ने भी कहा है कि– ''मैं रुद्राभिषेक  ( रुद्री /अतिरुद्र ) या अभिषेक के बाद षोडशोपचार पूजा और पूजा के बाद सहस्र बार मेरे नाम का जप आदि से भी उतना  प्रसन्न नहीं होता जितना प्रसन्न स्वाध्याय ( शिव पुराण, शिव गीता , स्कंद पुराण, भागवत आदि का ध्यान से पढ़कर चिंतन मनन ) से होता हूँ।'' अतः हे मनुष्य गण ! स्वाध्याय को अनिवार्य समझें।  अंतःकरण की शुद्धि हेतु स्वाध्याय में जितनी शक्ति है उतनी शक्ति किसी में भी नहीं। यह बात जान जाओ । और हरि ने भी एकादशी रात्रि जागरण पर स्वाध्याय को

ही सर्वोत्तम बताया है कि जो रात को स्कंदपुराण या भागवत आदि से रात बिताता है वह अतिशीघ्र विशुद्ध बोध को पाता है और वह यदि मेरा भक्त हो तो वह मेरे परम धाम में सदा तक निवास करता है । पर चलते फिरते नाम जप ही अनिवार्य जानें।

जिसका मन स्वाध्याय में न लगे उसे आरंभिक काल में पूजा , तीर्थ यात्रा या मंत्र आदि के पुरश्चरण में समय का सदुपयोग करना चाहिए। पर ईश्वर का स्वरूप बोध जितनी शीघ्र स्वाध्याय ( गीता आदि पढ़कर मनन) से होगा उतना शीघ्र अन्य उपाय से संभव नहीं। यह परम सत्य है। हमने देखा भी है कि – जो लोग गीता ( कृष्ण गीता ,देवी गीता ,ईश्वर गीत आदि ) का स्वाध्याय ( अर्थ अनिवार्य) करते हैं उनका शोक तत्काल नष्ट हो जाता है वे द्वन्द्वात्मक प्रपंच से मुक्त होकर सदा के लिए ब्रह्म सुख का रसास्वादन करने लगते हैं और जो लोग गीता छोड़कर मात्र घंटी हिलाने में या फल फूल चढ़ाने में ही 24 घंटे लगे रहते हैं वे गीताहीन मानव चित्त की विश्रांति नहीं पा सकते वे तो अपनी पत्नी या बच्चों की तबीयत खराब हो जाये या थोड़ा–बहुत दुख की घटना घटित हो जाए तो ही विलाप करने लगते है और भगवान तक को कोसते फिरते हैं। वे गीता के ज्ञान से वंचित लोग ''संतान न हो'' या ''धन न हो'' तो भगवान या भाग्य को दोष भी देते नजर आते हैं।

अतः गीता को आनन्द का मूल समझें। गीता ही आत्मबोध कराती है गीता से भौतिक दुख नहीं भासता; वैसे भी जो उपलब्धि शाश्वत न हो उसके जाने पर शोक कैसा ?

**कुछ सहज मिले तो भोग लो**

**और**

**न मिले तो**

**ब्रह्म से एकरूप रहकर**

**ब्रह्मानंद का अमृत सुख भोगो**

**और आत्मिक सुधा का पान करो**

**यही गीता सिखाती है।**

## हमारी एक पुस्तक मैं ब्रह्म हूँ यही मुख्य शिक्षा देती है।

गीता सकाम भाव से साधना की आज्ञा कभी नही देती। क्योंकि गीताकार परब्रह्म जानता है कि जीव की तृष्णा कभी भी शान्त नहीं होने वाली। आज वह संतान या एक लाख धन मांगेगा तो कल संतान के रोग पर रोयेगा और 10 लाख की वित्तेष्णा पर रोयेगा और पुत्र की बीमारी ठीक हो जाये तो वह संतान की अच्छी पर्सेन्ट न आये तब भी रोयेगा और 95प्रतिशत से अन्डर टेन में आ जाये तो अच्छी नौकरी, अच्छी बहु आदि के लिए पुनः रोयेगा और नवीन कामना करेगा । और कभी अच्छी कार या अच्छे महंगे भवन के लिए रोयेगा। उसका रोना कभी भी बंद नहीं होने वाला। और पर्याप्त रतिभोग न मिले तो भी वह रोयेगा और कामकामी नहुष जैसा इन्द्र भी बन जाये तो कामसुख की प्रबल वासना पर वह संतों का अपमान तक कर डालेगा। कामसुख इतना घातक बताया है कि वह अपनी पत्नी को मनाने के लिए बिना सोचे समझे दो वरदान भी दे डालता है अतः स्वाध्याय करके तद्भावित ब्रह्मनिष्ठ हो जाओ। यदि तद्भावित न हो पाए तो आप वैकुण्ठ में भी ईर्ष्या का त्याग न कर पाओगे। वहाँ भी भक्ति के औसत के अनुसार अलग अलग पद दिये जाते है यह आप लोक रहस्य संदर्भ से जान सकते हो। और सम्यक् निज बोध न हुआ तो अहंकार व क्रोध भी नष्ट नहीं होने वाला।

और जय विजय की भांति पतन हो जायेगा।

अतः यही गीता सिखाती है कि सारी कामनायें छोड़कर ब्रह्म से एकरूप रहो।

भगवान ने श्रीमद्भागवत महापुराण के तृतीय स्कंध के अध्याय 25 के 39 व 40 वें श्लोक में सार बता दिया कि –

**"हे माता !**
**जो मनुष्य ( नर नारी ) संसार के भौतिक ऐश्वर्य**
**की ओर नहीं दौड़ता और**
**उन भौतिक उपलब्धियों**

**( अतुलनीय मासिक धन अर्थात 300000 प्रति माह,**
**पशु , 500 बीघा जमीन ,आलीशान महल,**
**सम्मान देने वाले भौतिक पद आदि )**
**को तिलांजलि देकर रात दिन मेरे ही भजन मे.....**

तल्लीन रहता है मात्र वही मानव संसार सागर से मुक्त होकर सदा के लिए वैकुण्ठ का अधिकार पाता है श्लोक 38 के अनुसार वहां कालचक्र की गति भी उसे पीड़ित नहीं करती और वह (श्लोक 37 के अनुसार) उस ऐश्वर्य को भी पाता है जो अतुलनीय होता है जिसकी उसने कभी भी कल्पना नहीं की थी। अतः हे नर नारियों ! अक्षयरुद्र अंशभूतशिव की मानों मात्र यही एक जीवन ( एक बार ही ये 20–30 साल ) हरि के लिए फक्कड़ होके देखो आप यदि सकाम हो तो भी वैकुण्ठ में आपके लिए भव्य महल तैयार है और शिव लोक में भी दिव्य भवन और अतुलनीय ऐश्वर्य तैयार है पर इस जन्म में धन, पद, भोग ,संभोग आदि की ओर मुख न करो।

**बस एक ही बार यह जीवन प्रभु के निमित्त दान कर दो।**

**बस एक बार।**

**बस एक बार।**

**बस एक बार।**

**केवल एक बार,,,,,,,,,,,,,,,**

आप इस लोक में भले ही राजा या मंत्री की जी हुजूरी कर डालो पर मासिक तीन लाख से अधिक नहीं मिल पायेगा और बहुत से बहुत पाँच साल का पद ही मिलेगा। पर अगले जन्म में फिर से कंगाल हो जाओगे और पाप का दण्ड तो अलग ही स्टॉक में रखा है वह भी (भक्ति से नष्ट न किया तो) रुलायेगा। अतः सावधान।

सब कुछ छोड़कर अक्षयरुद्र की भांति सरेंडर कर दो।

कुछ मिल जाए तो संतुष्ट रहो न मिले तो मरकर भव्य धाम में भव्य ऐश्वर्य तैयार है ही। एक तरफ ( अगले तीस वर्ष तक अर्थात कुल 11000

दिनों तक की जिन्दगी में ) मासिक 1 लाख की सैलरी और कुछेक क्षणभंगुर सुख और दूसरी ओर वैकुण्ठ या शिवलोक में अगले 10000000 कल्पों ( मोटे अंदाज में सहस्र कोटी  वर्ष न कि मात्र तीस साल) तक संपूर्ण ऐश्वर्य के साथ ब्रह्मसुख।

अतः छोड़ो ये नाशवान तुच्छ दूषित भोग। और हो जाओ प्रभु के। संपूर्ण योगक्षेम हरि वहन करेंगे।

मत कर चिन्ता हे अक्षयरुद्र!

बच्चा पैदा होने से पहले ही हरि स्तनों में दूध की प्रोसेसिंग आरंभ कर देते है तो फिर तू काहे फिकर करता है। बस आठों प्रहर विशुद्ध और अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक भक्ति कर । वायु मुफ्त में, चार गिलास पानी भी कौन मने करेगा और रही चार रोटी की बात तो ईश्वर तब तक अवश्य देगा जब तक कि आयु निश्चित है।

भज मन नारायण....नारायण .....नारायण

एक दिन तू देह से परे होगा ही और जिस पल होगा उस पल तू बैंक बैलेंस भी छोड़कर जायेगा तो फिर काहे बैंक में लाखों से करोड़ के सपने देखता है।  अतः धन और कीर्ति की कामना न कर ( यह वित्तेष्णा और लोकेष्णा भयंकर रुलाती है ) अतः छोड मनी अर्निंग का तनाव और ................

भज मन नारायण......

भज मन नारायण.......

भज मन नारायण.........

ध्रुव ने सरेंडर किया , हरिकेस ने सरेंडर किया तू भी कर ।

# अध्याय 2
# जितनी चाबी भरी राम ने

जितनी चाबी भरी राम ने ,उतना चले खिलोना। इस कारण जब तक हो तब तक खुश रहो। खाओ और भजन करो। कोई कुछ भी कहे। तनाव मत लो। वह अति करे तो स्थान छोड़कर अन्यत्र जाओ पर रोना हल नही। यह मैं अक्षयरुद्र सत्य कहता हूँ। बार बार सत्य । सदा ही आनंद से युक्त रहो। हवा मुफ्त। पानी भी सस्ता और एक माह में थोड़ा–बहुत गेंहू। बस । .............. देवी या प्रभु का भजन करो।

जय जय माँ । आपको हम सभी का नमन।

The more the key is filled by Ram the longer the toy will last- Therefore as long as you are happy stay happy- Eat and do bhajans- No matter what anyone says- Do not take stress- If he gets too aggressive then leave the place and go somewhere else but crying is not the solution- I say this Akshayrudra truth- Truth again and again.

माया तेरी

ओ माया तेरी

बड़ी है प्रबल राम!

बड़ी है प्रबल राम!

हाड़मांस के ऊपर

हाड़मांस के ऊपर

बड़ा ये सुन्दर चाम.............

माया तेरी

ओ माया तेरी

बड़ी है प्रबल राम!

महल खजाना
धन और बंगला
छूटना... फिर भी
हाय हाय करके
फिरते पाने
सबही सुबह और शाम..........
बड़ी है प्रबल राम!
माया तेरी............
बड़ी ही प्रबल राम।
कीर्ति शोहरत पाने को ही
भजन छोड़कर ये नर
करते व्यर्थ के काम ..........
ओ माया तेरी
माया तेरी
बड़ी है प्रबल राम !
क्षणभंगुर सुख की
भूख मिटाने
फिरते सारे...... मारे मारे
आठों ही याम
ओ माया तेरी
बड़ी है प्रबल राम !
बड़ी ही प्रबल राम
ओ रामा !
बड़ी है प्रबल राम।
ओ माया तेरी
बड़ी है प्रबल राम !

जीवन एक संघर्ष है इसमें जन्म सूर्योदय है और मृत्यु रूपी रात्रि की निकटता को साँझ की संज्ञा देने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी और यह साँझ को अवस्था का मूर्त रूप दिया जाए तो यह साक्षात वृद्धावस्था ही है

साँझ ढलेगी तेरी भी ,..
देख कर भी तू काहे
नहीं समझता
चिता जलेगी तेरी भी
छोड़कर जाना परम है सच
देह जलेगी मेरी भी
साँझ ढलेगी तेरी भी

हाँ संत की वाणी से कोई भी मंत्र सुनकर जप से शत गुना फल प्राप्त हो जाता है पर उनसे विधि विधान से मंत्र सहित विनियोग न्यास ध्यान आदि लेने पर सहस्र गुना अधिक श्रेष्ठ फल, परंतु गुरुगुह्य विद्या ( संपूर्ण पटलादि) रहित मंत्र यदि विनियोग न्यास सहित जपा जाये तो भी मंत्र सिद्ध नहीं होता और तपस्या का इहलौकिक फल या परलौकिक फल नहीं मिलता, बहुत सारे साधक ऐसे हैं जिनको अल्पबोधक गुरु से मंत्र मात्र मिला है शेष कुछ भी नहीं, इसी कारण उनके मंत्र की सिद्धि नही हो पा रही फिर चाहे वे सवा लाख का अनुष्ठान करें या मंत्र संख्यक चार लाख गुना पुरश्चरण।

ठीक है सबकी साँझ ढलना है, वो तो ढलेगी ही, पर जीवन सफल ही न हो तो ढलना भी बेकार ही हुआ न।

**आज बहुत से धनाढ्य व्यक्ति ऐसे है जो बहुत नास्तिक या गलत कार्यों में होते है। पर धनाढ्य हैं किस प्रकार????क्या प्रारब्ध से ?????यह प्रश्न किसी अन्य साधक का भी था।**

उत्तर– धनाढ्य जीवन और ऐश्वर्य दो प्रकार से आता है ।

1) ईमानदारी से प्रयास करके ; भाग्य साथ दे तो उत्तम जॉब के कारण

2) बेईमानी से प्रयास करके ( चोरी , लूट , रिश्वत, हड़पना आदि से ; पर यह प्रारब्ध के कारण धनाढ्यता नही है। इस बेईमानी से जितने वर्ष मनुष्य भोग भोगता है उसका लाख गुना नरक में दण्ड विधान भी है।

# अध्याय 3
# मत करो ओछापना

घर में गेंहू , तेल, दूध, चना, मसाला, पानी, मूर्ति, लाल वस्त्र, पुस्तकें, जूते आने पर बेंचना नहीं चाहिए और बेंचना हो तो वह धन जनहित या गौशाला में लगा सकते हो।

दुकानदार भी प्रसाद या मूर्ति का धन न खाये । लागत मूल्य पर बेंचे या बचाये तो बचत को विश्व हित में दे। 1960 में रोटी भी भूखे को सप्रेम दी जाती थी पर आजकल हद्द हो गई कि हरेक रोटी 6 से 10 रुपए तक बिकने लगी। यही है कलिकाल। प्यास को भी आज धंधा बना डाला मूर्खों ने। जो पानी और अन्न बेंचता है उसे महापाप लगता है। पुस्तकें और मूर्ति भी बेचकर भौतिक भोग नहीं भोग सकते। अन्यथा अगले जन्म में मंद बुद्धि के विद्यार्थी बनोगे।

अतः घर–परिवार की शांति के लिए सकाम साधना भी करना हो तो ढंग से करो और ये सब गुणधर्म होते हुये भी ब्रह्मचर्य पूर्वक आराधन तो नींव की ईंट ही है। वीतरागता उत्तम है पर ग्रहस्थ जीवन में( त्याग न किया हो तब तक) जिम्मेदारी निभाना भी अनिवार्य है पर अतीवता नहीं मात्र 50 वर्ष तक ही, तदोपरान्त एकाकी जीवन।

पाप कभी भी न करें

**क्योंकि वक्त का भरोसा नहीं कि**

**कब चिता सज जाए,**

**अतः**

**क्या फायदा पाप करके................**

जब सब कुछ छोडकर जाना ही है तो काहे अनुचित कार्य करें। और एक बात– जिस काम में स्वार्थ न हो वह यदि (सम्पन्न) न भी हो तो हमें दुख नहीं होता। अतः हर कार्य बिना स्वार्थ के करें। तो आप सदा सुखी रहोगे।

मृत्यु का कोई भी भरोसा नहीं। अतः समय का सदुपयोग सदा करते रहें प्रभु को न भूलें या अभिन्नभाव में भी रमण कर सकते हो। काम कुछ भी करते रहो पर अंतःकरण में भगवान को बसाते हुए आंतरिक स्मरण सतत् करें। और जो पुरुष वर्ग है वे कम से कम 5–5 अथवा 11–11 माला करके जीवन सफल करें। गृहस्थ नारियां बेचारी सुबह 5–6 से ही काम काज पर लग जाती हैं, साफ सफाई चूला चोका चाय नाश्ता आदि के कारण वे माला के लिए समय नहीं निकाल पाती पर वे भी कैसे भी दोपहर 12–1 तक फ्री हो जाएं या शाम को ताकि गुरुगीता का पाठ कर सकें या पति की रक्षा के लिए वे लोमश कृत मृत्युंजय स्तोत्र भी किसी एक समय कर सकती हैं। वैसे तो महादेव ने पतियों की रक्षा के लिए गुरुगीता का ही अनिवार्य कहा है। आजकल के माहौल में बिना पाठ के उनके पति की महारक्षा संभव नहीं। पतिसेवा से पत्नि स्वयं की रक्षा तो कर लेगी पर पतिसंरक्षण पाठ से ही होगा; हालांकि पतिव्रता धर्म से भी पति की आयु की रक्षा होती है पर कौशल्या जी भी पतिव्रता थी पर फिर भी दशरथ नहीं बचे अतः पति के पाप शाप की निव्रत्ति के लिए गुरुगीता सर्वोत्तम है।

# अध्याय 4
# सब कुछ करो पर मृत्यु को भी याद रखो।

सब कुछ करो पर मृत्यु को भी याद रखो। सन 2020 में हमारी माँ रात को 10 बजे ठीक थी, सबने साथ बैठकर भोजन पानी किया । पर अगले दिन सुबह 10 बजे उनके देह की चिता भी तैयार करनी पड़ी ।

✍और भाई सुनील भी मात्र सात दिनों के भीतर इलाज के बावजूद भी नहीं बचा...... ( होगा कुछ इतना सा ही प्रारब्ध उस समय हमारा अनुष्ठान किसी दूसरे उद्देश्य से चल रहा था उसके उपचार आदि के दौरान वह भी छोड़ना पड़ा फिर उसके लिए कैसे करते और आधुनिक युग में अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक जप करने वाले कर्मकांडी भी अर्जेन्ट में नहीं मिलते जो त्र्यक्षरी से उसका संरक्षण कर देते खैर .... इस कारण हम सबसे बार बार कहते हैं कि रोग और मृत्यु कब हो यह कोई नहीं जानता अतः आजकल के शुभ मुहूर्त से ही पहली साधना दीर्घकालिक जीवन हेतु ही आरंभ कर देना चाहिए न कि धन दौलत आदि के लिए। पहले तो आयुष्य और आरोग्य ही सब कुछ माना जाए)

तो हे अक्षयरुद्र! किसकी गारंटी है यहाँ। चक्रवर्ती राजा भी मात्र 20–30 साल तक राज्य करके मर जाते हैं फिर मात्र पाप फल ही बचते हैं अतः न तो पाप करो न ही स्वार्थी बनो। तभी आनंद मिलेगा। इस देह की सांझ ढलेगी यह शाश्वत सत्य है ये जो आठ चिरंजीवी हैं उनकी आयु भी कुछ कल्पों तक हैं वसिष्ठ जी की आयु उनकी पत्नी के अनुष्ठान के कारण सात कल्पों की है लोमश आदि भी कुछ कल्पों बाद संपूर्ण रोम गिरने पर मरेंगे तो आजकल के नर नारी किस घमंड में जी रहे हैं।

यह चिरंजीविता एक वरदान मात्र है न कि मुक्ति की गारंटी अतः दीर्घकालतक जीवित रहने की इच्छा करने की अपेक्षा ब्रह्मनिष्ठ की सेवा से तद्भावित ब्रह्मनिष्ठ बनकर ही अपना उद्धार कर लेना चाहिए। यह तद्भावित होना ही साक्षात ब्रह्म पद माना जाए। परम मुक्ति यही है शेष द्वैतात्मक मुक्तियाँ तो अपर मुक्तियाँ है जो उस लोक के इष्ट की आयु तक ही सीमित

रहती है। पर जीवन्मुक्त पुरुष स्वयं ही ब्रह्म होने से सबका आत्मा ही कहा जाता है वह कल या भविष्य के धाम की स्पृहा नही करता अपितु उस शाश्वत ब्रह्म से एकरूप होने से सभी धर्मों के सभी रूपों का प्राण ही कहा जाता है।

If the work in which there is no selfishness is not done even then we do not feel sad, Hence do every work without selfishness Then you will always be happy.

✍Look there is no assurance of death our mother was fine at 10 pm at night everyone sat together and had food and water But the next day at 10 am her pyre had to be prepared

✍and brother Sunil also did not survive in spite of treatment for seven days then oh Akshayrudra! who has the guarantee here. Even Chakravarti kings die after ruling for only 20&30 years then only the results of their sins remain hence neither commit sins nor be selfish- Only then will you find happiness.

# अध्याय 5
# किस बात को लेकर अहंकार में

जैसे दिन आते–जाते रहते हैं, ऐसे ही चारों युगोंका भी आना–जाना लगा रहता है।

1. मनुष्योंका एक वर्ष पूरा होनेपर देवताओंका एक दिन–रात होता है। अर्थात हमारा एक साल बीतने पर देवों का केवल एक दिन ही निकलता है।
2. कालकी संख्याके विशेषज्ञ पुरुषोंका सिद्धान्त है कि मनुष्योंके तीन सौ साठ (360) युग व्यतीत होनेपर देवताओं का एक युग बीतता है।
3. इस प्रकारके इकहत्तर दिव्य युगोंको एक मन्वन्तर कहते हैं। एक इन्द्र मात्र एक मन्वन्तरपर्यन्त रहते हैं।
4. चौदह मन्वन्तर में 14 इन्द्र बदल जाते हैं
5. यों अट्ठाईस मन्वन्तर बीत जानेपर ब्रह्माका एक दिन–रात होता है।
6. इस मानसे एक सौ आठ वर्ष व्यतीत होनेपर ब्रह्माकी आयु पूरी हो जाती. है।

इसीको प्राकृत प्रलय समझना चाहिये ।

उस समय पृथ्वी नहीं दिखायी पड़ती। पृथ्वीसहित सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जलमें लीन हो जाते हैं।

श्रीमद्देवीभागवत नवाँ स्कन्ध अध्याय 8 के अनुसार इस समय ब्रह्मा जी की आत्मा श्री विष्णु, श्रीमहारुद्र और ऋषि आदि सभी सच्चिदानन्द ब्रह्म श्रीसदाशिव में प्रवेश कर जाते हैं। उस ब्रह्ममें ही प्रकृति भी लीन हो जाती है– प्रकृति–पुरुष एक हो जाते हैं। इसीको प्राकृत प्रलय कहते हैं।

इस प्रकार प्राकृत– प्रलय हो जानेपर ब्रह्माकी आयु समाप्त हो जाती है। इतने सुदीर्घ कालको भगवती जगदम्बाका एक निमेष कहते हैं।

इस प्रकार देवीके एक निमेषमें सम्पूर्ण विश्व और अखिल ब्रह्माण्ड नष्ट हो जाते हैं। इन सभी महान देवों का भी प्रलय होता है तो सोचो आप किस बात को लेकर अहंकार में हो।

# अध्याय 6
# जीव को अकेला ही जाना पड़ता है

अकेले ही जाओगे
कुछ न ले जाओगे।
और बैंक के 20 लाख
या 20 कोटी तो छोड़ो
अलमारी में रखे
2000 भी
छोड़कर तुम
रिक्त समुच्चय बन जाओगे।
सारी भूमि और
चल अचल संपदा सारी
सब  छोड़ जाओगे।
मत करो पाप,
मत भोगों परधन,
न चाहो परस्त्री
ये दोनों हैं नरक के द्वार
सूखी रोटी पापड़ चटनी
इनको मानों सदाबहार।
आये सहज तो
खूब भोगो
न मानों तो
भोगते रहो पर
न आये तो

परमाया शत्रु जानों
न मानों तो
नरक को ही जाओगे।
और वहाँ उसी की
विष्ठा ही खाओगे।
या पुनर्जन्म में
उसी की योनी के
कीड़े बन कर
दूषित मूत्र से
नित्य ही नहाओगे।
क्या मिलता है ?
परभोग से हे नर !
एक पल का सुख
और दुख हजार
अब तो मान
अंशभूत की बात
न मानो तो
पुनर्जन्म ही पाओगे
अकेले ही जाओगे
कुछ न ले जाओगे।
अकेले ही जाओगे
कुछ न ले जाओगे।

सभीलोगों ( भाई बहन, पति या पत्नी, पुत्र, पुत्री, सखा, पड़ोसी आदि ) को छोड़कर जीव को अकेला ही जाना पड़ता है और अकेला ही पापदण्डों को रो रोकर भोगना ही पड़ता है; अतः उत्तम आचरण करना चाहिये।

कुछ समय के भौतिक सुख के लिए अपनी नियत को दूषित नहीं करना चाहिए। परायी वस्तु को भोगने की जो कामना न करे जो स्पृहाहीन और अपनी आत्मा में ही सुख मानें वह योगी है वही संन्यासी और वही ब्रह्मरस का पानकर्ता है। इसके विपरीत जो तमोगुणी या रजोगुणी

मनुष्य पराये धन या क्षणभङ्गुर वासनात्मक कामसुख के लिए अन्य पुरुष की स्त्री के साथ भोग की इच्छा करता है वह इच्छा मात्र से ही एक पक्ष का पुण्य नष्ट कर डालता है। अतः पराये धन और परायी स्त्री को नरक का द्वार समझें। क्षणभङ्गुर सुख ( आधी से भी आधी घड़ी ) को भोगकर जो पशुबुद्धि नर नारी लाखों वर्षों तक दण्ड भोगने को तत्पर हो वह महामूर्ख ही है।

000000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

कटु सच – आत्मिक शान्ति का संबंध न तो महल से है न ही 4–5 संतानों से। न ही 10–20 लाख की एफडी से।

न ही पत्नी के चोलात्मक सौन्दर्य से।

ये सब आपके पास हो पर ब्रह्मनिष्ठता न हो तो सब कुछ नाम मात्र का मान लो। आपके धन से आप चाहे जो भी दान कर लो उस दान से पितरों को स्वर्ग अवश्य मिल सकता है और आप भी चाहें 4 वेद, 6 शास्त्र,18पुराण, 18 उप पुराण,110 उपनिषद आदि दान कर दो या 100 मंदिर बनाकर 1000 पीपल लगवा दो इससे परलोक में सहस्र कल्प तक सुख मिलेगा पर पुनः धरा पर आना ही होगा। अतः ब्रह्म वाक्यों (महावाक्यों) से स्वबोध होना अनिवार्य है।

जो मूर्ख लोग 9–10 साल की एफ.डी. करा लेते हैं या जो पत्नि से संसर्ग के लिए रात का वैट करते हैं उनको समाधि असंभव है। लक्ष्य का इंतजार जिन जिनको बना रहता है वह एकत्व कभी नहीं पाता।

अतः रजोगुणी ऐश्वर्य से लाख गुना सतोगुण के गुणधर्म हैं और सत्वगुण से 10000000 गुणा तद्भावित पना ( ब्रह्मनिष्ठता ) समझें ।

000000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 7
# बिना आमंत्रण के भोजन करने वाला

**इस जीवन में मुफ्त का अन्न कभी न खायें । बिना आमंत्रण के भोजन करने वाला अगले** जन्म में कौन होता है ?

सुनों– गरुड पुराण सारोद्धार अध्याय 5 से बता रहे हैं।

कौआ । अन्य कर्मफल भी देखें–

●●●●●●●●●●●●●●●●●

सास ससुर को अपशब्द कहने वाली बहु या कलह करने वाली बहुत कौन बनती है ?

उत्तर–

जलजोंक

बार बार पति की बुराई आदि से जूँ बनेगी।

●●●●●●●●●●●●●●●●●

पत्नी यदि पराये पुरुष से मुँह काला करे तो वल्गुनी (चमगीदड़ी), फिर छिपकली और फिर दो मुँह वाली सर्पिणी बनेगी।

अपनी चार साल की कन्या (श्रीमद्देवीभागवत महापुराण के अनुसार साक्षात देवी ) को छोड़कर, उसका भरण पोषण छोड़कर, गरीब पत्नी को समाज या सास ससुर के भरोसे छोड़कर देवी या देव के तीर्थ में सदा के लिए जाने वाले भी महामूर्ख है।

विवाह और संतान पैदा की है तो गृहस्थ आश्रम की अवधि का पालन करो।

याज्ञवल्क्य भी अवधि पूर्ण होने पर गये थे। साधना, स्वाध्याय, सत्संग या पूजा ही पूजा अधिक प्रिय थी तो क्यों विवाह किया। क्यों संतान को पैदा किया।

जरत्कारु जी ने भी कहा कि – हे मनसा देवी ! मेरा मन संसार में नहीं लगता अतः मुझे माफ करो मैं तुमको छोड़कर जाना चाहता हूँ तपस्या करूँगा या साधु संगति ।

I want to leave you,I will do penance or keep company with saints

तो त्रिदेव ने खूब डांटा।

धनवान यदि 11000₹ का दान करे तो उसे इस कलियुग में बहुत दुआएं मिलती हैं पर गरीब या मजबूर मानव यदि 2100₹ का दान करें तो आजकल उसे कंजूस बोला जाता है। वह बेचारा यजमान इस कलिकाल में कभी कभी बद्दुआ या शाप भी पा जाता है ऐसे में उचित है कि गरीब मनुष्य कर्मकांड न करायें या पहले ही बात कर ले कि महाराज जी ! 1100₹ या 2100 का सामर्थ्य है आपको राशि कम लगे तो तत्काल मना कर दीजिए। पर बाद में चिल्लाचोंट या श्राप बद्दुआ मत देना । आजकल ऐसा हो रहा है।

एक जगह भागवत कार्यक्रम में 27000₹ के दान की बात तय हुई। हालांकि जितना तय हुआ था उतना देना ही चाहिए पर यजमान ने ( मित्रों के बल पर बोल दिया था ) पर पर्याप्त धनराशि न होने पर वहाँ भयंकर विवाद हो गया और शाप पर शाप।

तो ऐसा ही इस कलिकाल में हो रहा है।

दोनों पक्ष में से एक भी किसी की मजबूरी मानने को तैयार नहीं।

000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

(मृत्युके पश्चात) प्रस्थान करनेवाले इस जीवके पीछे–पीछे कोई भी नहीं जाता है; इस जीवके द्वारा जो कर्म किया गया होता है, वही इसके साथ जाता है ॥

(न ह्येनं प्रस्थितं कश्चिद् गच्छन्तमनुगच्छति ।

यदनेन कृतं कर्म तदेनमनुगच्छति ॥ )

सभी को छोड़कर जीव अकेला ही जाता है अतः पुनः कहते हैं कि पाप मत करो। पाप मत करो । पाप मत करो।

एकेनैव तु गन्तव्यं सर्वमुत्सृज्य वै जनम्।

एकेनैव तु भोक्तव्यं तस्मात्सुकृतमाचरेत् ॥

00000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 8
# पद गीता

14 मन्वन्तर तक सूर्य (सूरज का जलता गोला) वही रहता है पर उस पद पर जो है वह हर मन्वन्तर में बदलते रहते हैं। इस मन्वन्तर में  सूर्य पद पर द्वादश आदित्य बैठे हुए हैं। हर माह मासिक संक्रान्ति पर उस रथ पर अलग अलग सूर्य ही परिभ्रमण करते हैं। उन 12 सूर्यों को जानकर सूर्य ग्रह साधक के अनुकूल हो जाता है। पर 12 में से 11 की अवहेलना से लाभ नहीं होता। अलग अलग राशि पर अलग अलग सूर्य के कारण ही मासिक संक्रांति होती है। आप भी अगले मन्वन्तर में सूर्यदेव का पद पा सकते हो। इंद्र भी पद है। अग्निदेव,ब्रह्माऔर विष्णु रुद्र भी ; पर हम लोग कितने मूर्ख हैं कि दास बनना ही पसंद करते हैं उस पद के लिए तप नहीं करते। और सुनें ये सब पद देवी कुष्माण्डा के अधीन हैं। पर हम लोग 5 वर्ष के पद के लिए या संतान, नारी, ऐश्वर्य के लिए  इधर उधर ही भटकते रहते हैं। उस पद को पाओ। कितना सुख और ऐश्वर्य चाहिए वह सब कुछ मिलेगा वह भी मात्र 30 साल के लिए नहीं अपितु 30करोड़ से भी अधिक वर्ष तक।

अभी आपकी आयु 30 है संसार के वरिष्ठ लोगों की जी हुजूरी करोगे या मध्य प्रदेश के सारे भौतिक ज्ञान को घोंट डालोगे तो अगले तीस साल तक एक भौतिक पद मिलेगा; जिससे आपका नाम भी कुछ सालों तक (रिटायर्ड तक) ही रहेगा और मासिक बहुत से बहुत 2–3 लाख; पर हे किशोरों! महत्वाकांक्षा ही रखना है तो बड़ी रखो। इन साधारण पदों से क्या होगा? अतः उच्च स्तरीय पद हेतु  देवी की सेवा करते रहो।  बस..... 30....35 सालों के कारण काहे जीवन का क्षय करने पर तुले हो।

●देवी सूक्त से भी जप तप कर सकते हो। सुरथ और वैश्य ने इसके ही जप से दर्शन पाये। प्रभु सदाशिव जी की आराधना के भी अनेक उपाय हैं।

●अष्टोत्तरशतनाम से भी परामबा का स्मरण कर सकते हो।

- दुर्गनाशन स्तोत्र से भी
- या अर्जुन कृत स्तोत्र से।

अथवा कोई गुरु आपको नवार्ण मंत्र दे सके या ह्रीं बीज तो उस बीज से भी। या दस महाविद्या अथवा नवदुर्गा में से कोई एक का मंत्र लेकर भी साधना कर सकते हो। इन पराशक्ति के प्रधान अंश या कला की साधना भी कर सकते हो। श्री रमा, लक्ष्मी, गौरी, देवी रक्तदंतिका, देवी मंगलचण्डिका या मनसा आदि भी देवी के ही रूप हैं। तीन महान देवी महालक्ष्मी, महा सरस्वती और महाकाली या भद्रकाली जी की सेवा उपासना भी कर सकते हो। खाटू के श्याम बर्बरीक ने मायाबीज ( भुवनेश्वर बनिता बीज ) ह्रीं से देवी के साक्षात्कार किये।

इति श्री महापद गीता संपूर्णम्

– अक्षयरुद्र

# अध्याय 9
# जिसके मन में जो होगा वैसी ही व्याख्या करेगा

जिसके मन में जो आता है वैसी ही व्याख्या वह अपनी लेखनी में करता है। वे वाक्य ही आजकल के साहित्यि कहे जाते हैं । आधुनिक दशक या आधुनिक शताब्दी के यही हालचाल हैं। आगे के कुछ भाव एक सज्जन के हैं किसी ग्रुप में थे पर अक्षयरुद्र उसमें थोड़ा–बहुत संसोधन करना चाहता है। ताकि सम्यक् ज्ञान हो।

वह यह कि – जो पुरुष पिछली 7 पीढ़ी से मछली मारकर या घायल कर उसे बेंच रहा हो या खा रहा हो वह भला अतिशीघ्र शुद्ध किस प्रकार हो सकता है। अतः यदि वो विश्वामित्र की तरह भयंकर जप तप व्रत–उपवास और अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे तो ही परंपरागत दोष मिट सकते हैं।

चार मनुष्य पास में चार कुर्सी पर बैठे हैं तो क्या ? आप मात्र उनके हाथ पांव देखकर ही समान समझ लोगे। नही न । ऐसे ही जिस पीढ़ी में पिछले अनेक वर्षों से कर्मकांड हो रहा हो वह कितनी शुद्ध होगी इस बारे में कौन बता सकता है।

खैर देखें –

शांति पर्व के १८८ वें अध्याय में प्रवेश करते हैं।

महर्षि भृगु कहते हैं –

न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्व ब्राह्ममिदं जगत्।
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णता गतम्।।

अर्थ – पहले वर्णों में कोई अंतर नहीं था। ब्रह्मा जी से उत्पन्न होने के कारण सारा संसार ब्राह्मण ही था, पीछे विभिन्न कर्मों के कारण उसमें वर्ण–भेद हो गया।

●●●● सृष्टि के आदि वर्ण नहीं था ये ठीक है पर कालान्तर में जो च्युत हो गए वे अपनी ही करनी से हुये हैं अब हो ही गये तो शोक कैसा ?

ब्राह्मण कहलाने के लिए अधिक उत्सुकता है तो करो तीन काल की संध्या और पूर्णतः धर्मपरायण हो जाओ। स्त्रीलम्पटता और परधन छोड़कर ब्रह्म से एकरूप हो जाओ।

●●●●

कामभोगप्रियास्तीक्ष्णाः  क्रोधनाः प्रियसाहसाः।
त्यक्तस्वधर्मारक्ताङ्सगास्ते द्विजाः क्षत्रतां गताः।।

अर्थ – जो अपने ब्राह्मणोचित धर्म का परित्याग करके विषय–भोग के प्रेमी बन गए, तीखे और क्रोधी स्वभाव के हो गए, साहस का काम पसंद करने लगे और इन कारणों से जिनके शरीर का रंग लाल हो गया, वे ब्राह्मण' क्षत्रिय' के नाम से प्रसिद्ध हुए।

●●●● अब क्षत्रिय बन ही गए तो शोक क्यों ?

अपनी आंशिक अशुद्धि को धुल लो और पुनः संध्यापूत बन जाओ। और न बन पाओ तो बाहुबल से देश की सेवा करो। यह भी अनुचित नहीं। पर ब्राह्मणत्व के लिए तो तद्भाव पाना ही होगा।

गोभ्यो वृत्तिं समास्थाय पीताः कृष्युपजीविनः।
स्वधर्मान् नानुतिष्ठन्ति ते द्विजाः वैश्यतां गताः।।

अर्थ – जिन्होंने गौओं की सेवा ही अपनी वृत्ति बना ली एवं जो कृषि से जीविका चलाने लगे और उसी के कारण पीले पड़ गए और जो अपने ब्राह्मणोचित धर्म को छोड़ बैठे, वे ब्राह्मण ही "वैश्य" हुए।

●●●●

जो वैश्य हो गए तो हो जाने दो। अपनी ही करनी का फल है ये तो। किसने कहा था कि कर्मकांड छोड़कर गौओ में लगो। और लग ही गये तो ये वैश्य कर्म अनुचित तो नहीं। एक आदमी एक ही काम करेगा न । या तो कर्मकांड या गौपालन।

●●●●

हिंसानृतप्रिया लुब्धाः सर्वकर्मोपजीविनः।
कृष्णाः शौचारिभ्रष्टास्ते द्विजाः शूद्रतां गताः।।

अर्थ – शौच और सदाचार से भ्रष्ट होकर हिंसा और असत्य के प्रेमी हो गए तथा लोभवश सब तरह के काम करके जीविका चलाते हुए काले पड़ गए, वे ब्राह्मण " शूद्र " कहलाए

इत्येतैः कर्मभिर्व्यस्ता द्विजा वर्णान्तरं गताः।
धर्मोयज्ञक्रिया तेषां नित्यं न प्रतिषिध्यते।।

अर्थ – इन्हीं कर्मों के कारण ब्राह्मणत्व से अलग होकर वे सभी ब्राह्मण दूसरे–दूसरे वर्ण के हो गए, किंतु उनके लिए नित्य धर्मानुष्ठान और यज्ञ–कर्म का कभी निषेध नहीं किया गया है।

यह विशेष परिलक्षित करने की बात है कि तीनों श्लोकों में 'द्विज' शब्द का प्रयोग हुआ है। विभिन्न कर्मों के कारण ब्राह्मण ही अन्य वर्णों में विभाजित हुए हैं। इस तथ्य को हमें भली भांति समझना चाहिए। ।। ..........

ठीक है पर च्युतपने ( कवूदसिस चवेपजपवद ) का मार्जन करो तो ही अपने आप को ब्राह्मण कह सकते हो। कहने का सार यह है कि अपना मन अहंकार में न लगााकर प्रभु में लगाओ। संसार क्ड्ढ मिथ्या मानें

# अध्याय 10
# जितना अधिक तपोवल उतना ही अधिक सम्मान

The more you do penance- the more respect, the more blessings of God, the more fame etc. Nothing happens just by name………… so do penance, Penance, penance, do penance.

If you do not have the ability to do life time celibacy then follow Brahma celibacy[ 6 or 12 year or till God appears.]

जितना अधिक तपोवल उतना ही अधिक सम्मान ,उतना ही अधिक देवकृपा और उतनी ही अधिक यश आदि । नाम मात्र से कुछ नहीं होता अतः तपस्या करो। तपो तपो तपो। और द्विज हो तो संध्यापूत व जितेन्द्रिय भी बने रहो। शम दम युक्त होकर ही कुछ होगा हे बाबू!

अपने आपको अपनी देह को भगवा मात्र पहनाने से कुछ नहीं होता। अतः भगवा की गरिमा भी बनाए रखो। या साधन चतुष्ट्य संपन्न न हो तो घर के आसपास के मंदिर में राम राम या शिव शिव या हमारी भांति दुर्गा दुर्गा जपो।

पर खाली पीली यह मत करो कि – मैं वन में रहता हूँ या मैं द्विज या वेदपाठी हूँ तो सम्मान का अधिकार प्राप्त हो गया।

चारों वेदो का ज्ञाता भी जितेन्द्रिय न हो या स्त्रीलम्पट हो तो वह उस वैश्य से हीन है जो जितेन्द्रिय है।

अतः अपने नाम का डंका ( खोखला हो तो भी ) न बजाओ।

अक्षयरुद्र का वश चले तो यह प्रतिज्ञा ले डाले कि जो ब्राह्मण या जो क्षत्रिय कम से कम दो समय की संध्या न करता हो वह इस अक्षयरुद्र के आश्रम ( निवास) पर कभी न आये।

नैष्ठिक ब्रह्मचर्य की क्षमता न हो तो ब्राह्म ब्रह्मचर्य का पालन करो। कहने का सार है कि जो लोग बात बात पर अपने कुल वर्ण का दम्भ भरते हैं और अन्य का अपमान वे अहंकारी पाप ही करते हैं। आप यदि श्रेष्ठ हो तो वे

गुण अपने आप ही पुजवा लेंगे पर जानबूझकर दबाब बनाकर पुजवाना अधर्म है। और पराविज्ञानी तद्भावी तो प्रायः मौन या समाधिस्थ ही रहते हैं उनकी पूजा व मान तो शिवपुराण के अनुसार व शिवगीता के अनुसार प्रथम पूजनीय ही है वह परात्पर ब्रह्म ही है। भले ही वह मौन ही क्यों न विचरण करें अथवा जाति का वैश्य या शूद्र ही क्यों न हो। सब मरेंगे अतः अहंकारी न बनो।

– अक्षयरुद्र अंशभूतशिव

# अध्याय 11
# बन्धन और मोक्ष दोनों माया से कल्पित नाम

बन्धन और मोक्ष दोनों माया से कल्पित नाम है। वास्तव में ये नाम वेसे ही हैं जैसे कि रोटी में अल्प तेल का संयोग होने पर वह पराठा कही जाती है और अति तेल में डुबकी लगाने पर वह पूरी संज्ञा पा लेती है। पर यह सब मात्र काल्पनिक नाम है यथार्थ में वह आटा ही है जो गेंहू ही है। न तो पराठे का मूल अस्तित्व है न ही पूरी का।

अज्ञान के कारण ही बन्धन नाम मिलता है और अज्ञान का नाश ही मुक्ति कहलाती है। यह मुक्ति ( विशुद्ध बोध ) श्रेय मार्ग पर चलकर ही मिल पाती है।

श्रेय अर्थात् निःश्रेयस अन्यत्– भिन्न ही है तथा प्रेय यानी प्रियतर वस्तु ( भौतिक तरक्की की इच्छा या फिजीकल वस्तुओं की उपलब्धता या भौतिक अभ्युदय) भी अन्य ही है। वे श्रेय और प्रेय दोनों विभिन्न प्रयोजनवाले होनेपर भी अधिकारी यानी वर्णाश्रमादिविशिष्ट पुरुषका बन्धन कर देते हैं; अर्थात् सब लोग उन्हींके द्वारा अपने (विद्या– अविद्या–सम्बन्धी) कर्त्तव्यसे युक्त हो जाते हैं।

अभ्युदयकी इच्छावाला पुरुष प्रेयसे और अमृतत्वका इच्छुक श्रेयसे प्रवृत्त होता है। अतः श्रेय और प्रेय इन दोनोंके प्रयोजनोंकी कर्त्तव्यताके कारण सब लोग उनसे बद्ध कहे जाते हैं।

वे यद्यपि एक–एक पुरुषार्थसे सम्बन्ध रखनेवाले हैं तो भी विद्या और अविद्या रूप अलग अलग होने से विरुद्ध ही हैं। वास्तव में न तो बंधन है न ही मोक्ष ( मिलेगा मरकर यह सत्य है ऐसी सोच ठीक नहीं ) । मोक्ष तो तत्काल ही मिल सकता है यह मात्र अपरोक्षता का पर्याय समझें।

ऐसा मुक्त पुरुष धन्य है जो जीते जी ही मुक्त और शिव रूप हो गया।

क्व धनानि ?

क्व मित्राणि ?

क्व मे विषयदस्यवः ?

क्व शास्त्रं?

क्व च विज्ञानं?

यदा मे गलिता स्पृहा। ।

(कहाँ भोगार्थ धन संपत्ति की कामना अर्थात बिल्कुल भी नहीं । कहाँ सखाओं से मिलन की इच्छा अर्थात नहीं, मै ही मेरा सखा मैं ही मेरा सब कुछ द्वैत कहाँ है ?

और तो और सम्यक् निज बोध होने पर कैसा रतिभोग और कैसी यह तुच्छ दूषित कामना? अब मेरा इन सबसे क्या संबंध??????

कुछ भी नहीं।

जब मेरा इन सबसे खास संबंध है ही नहीं तो मैं क्यों और किसके लिये अपने देह को सजाऊँ क्यों इसे आभूषण पहनाऊँ? क्यों इत्र आदि से सुवासित करने में लगा रहूँ। इस तन को कितना ही श्रृंगारित कर डालो प्राणवायु निकलने पर सभी छिद्रों से सड़ा हुआ बदबूदार पदार्थ निकलने लगता है और प्रेमिका या प्रेमी भी रुमाल से नाक सिकोड़ने लगते हैं अधिकांशतः तो धन के स्वार्थ के चक्कर में ही सेवा चाकरी करने को तत्पर रहते हैं अतः यह विश्व एकमात्र छल कपट और प्रपंच का ही नाम है।

कभी कभी तो इस अक्षयरुद्र को ऐसा लगता है कि यदि ईश्वर भी साधना का फल धन, पद, संतान, ऐश्वर्य, पितृ तृप्ति, आयुष्य, आरोग्य या अपने लोक में आश्रय आदि .......... देने से मना कर दे तो 99 प्रतिशत लोग ईश्वर का भजन ही बंद कर डालेंगे। और दान का फल निर्धारित न होता तो 99.999 प्रतिशत लोग घर की मूर्तियों को भी नहर में सिरा डालते।

यह सबकुछ एक उपनिषद ( कठ अर्थात कठोपनिषद) की दूसरी वल्ली, विवेक चूडामणि के श्लोक 574, शिव गीता अध्याय आठ का श्लोक 64–65 तथा अष्टावक्र गीता के 14 वां प्रकरण के श्लोक 2 का सारभूत है। जो लोग प्रेय मार्ग को चुनकर अति भोगी बन चुके हैं उनको अधिक से अधिक नाम जप ( निष्काम भाव से ) करना चाहिए ताकि नाम उनकी मति में प्रवेश करके राग का नाश कर डाले। और साथ में वैराग्यवान संतों के वचनों को भी सुनते रहना चाहिए तथा संभव हो तो ( 55 वर्ष की आयु हो गई हो तो )

हर 15 दिन में श्मशान की चिताभूमि की राख भी देखते रहो। ताकि नाती पोतों से अति मोह न हो पाये ज्ञात हो कि सांझ मेरी भी ढलेगी फिर काहे पाप करु। ज्ञात होती रहे और स्वामी शिव के चरणों की ओर मुख हो।

# अध्याय 12
# यह दर्शन कैसा ?

शिव जी ( कैलासपति संदर्भ में ) वैराग्य की मूर्ति हैं और साक्षात पराविज्ञान। तो यह दर्शन क्या सिद्ध कर रहा।?

उत्तर – सतोगुणी और पतिव्रता स्त्री में श्रृद्धा, करुणा, वात्सल्यता, मधुरता, विश्वास, और पति ही परमात्मा का सबसे बड़ा प्रसाद और हरिफल है ऐसा महान भाव कूट कूट कर भरा होता है और गौमाता में सूर्य नाड़ी रूपी दिव्य शक्ति। अब आप ही बताएं कि पात्रता का सम्मान न करें तो कैसा शिवत्व? काहेका रुद्रत्व।

और वैसे भी जिस देवी ने घोर तप किया हो किसी देव को पति बनाने के लिए तो उसकी तपस्या का फल उस प्रेम रूप में मिलना ही चाहिए।

यह फोटो तो नकली फोटो है। पर हकीकत होता तो भी ठीक ही था। और कैलास पर भी ऐसा होता ही है।

# अध्याय 13
# अनंत तमन्नाएं

अदर्शने दर्शनमात्रकामा दृष्ट्वा परिष्वङ्गरसैकलोलाः ।
आलिङ्गितायां पुनरायताक्ष्यमाशास्महे विग्रहयोरभेदम् ॥

अर्थात्

जबतक देखा नहीं था, तब तक उसे मात्र देख लेने की कामना थी,

जब देख लिया तो आलिंगन करने की ललक जागृत हो गई,

अब जब आलिंगनबद्ध हो गए हैं तो मन में एक नई कामना ने जन्म ले लिया है कि दोनों सदा–सदा इसी प्रकार जुड़े (लिपटे) रहें, कभी अभेद न हो॥ ये किसी संत के भाव मानों पर सोचो ये क्या सिद्ध करना चाहते हैं अर्थात समझ गए आप। ये कामनाएं कभी भी शान्त नहीं होने वाली अतः हे अक्षयरुद्र तू अब छोड इन सब तमन्नाओं को और एक मात्र रुद्र पद के लिए 30000000 बार नमः शिवाय का जप कर। ये संपदा व वैभव या नारी का मनमोहक सौन्दर्य या गुप्तांगों के भोग देवताओं ने नर के नाश के लिए ही बनाये हैं। अतः छोड इनको

छोड इनको

छोड इनको

# अध्याय 14
# हर दुखी मनुष्य पाप का फल नहीं भोग रहा

हर दुखी मनुष्य पाप का फल नहीं भोगता। कुछ दुख धर्म की रक्षा के लिए भी भोगे जाते हैं। पर उनका फल महान होता है। राष्ट्र रक्षा के लिए भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु ने जो कष्ट झेला या गाय की रक्षा के लिए जो दर्द सहते हैं अथवा 51 के बाद तीर्थ स्थल पर रहकर जो कष्ट सहा जाता है या गुरु माता पिता, कन्या रक्षा आदि हेतु जो कष्ट सहन करना पड़ता है अथवा भगवान को पाने के लिए मीरा जैसी राजकुमारी या ध्रुव सा राजकुमार जो त्याग करके जो पीड़ा सहता है वह भी पाप का फल नहीं।

या कल्पवास के दौरान जो 30 दिन के तप का कष्ट सहन करना पड़ता है वह भी पाप का फल नहीं अपितु पाप नष्ट करने के लिए एक भारी तपस्या कही गई है तथा परम धाम में या करोड़ो गुना सुख देती है। बच्चों को ही देख लीजिए वे यदि टीव्ही मोबाइल को छोड़कर 5 घंटे स्कूल का कष्ट सहन करते हैं तो इसका फल उज्जवल भविष्य के रूप में प्राप्त होता है। अतः धर्म करो। सत्य अहिंसा ईमानदारी को मत छोड़ो भले ही ही कष्ट सहन करना पड़े। मरने से मत डरो। मरेंगे सब कोई भी अमर बूटी खाकर पैदा नही हुआ।

आजकल तो साइलेंट अटैक से 30–30 साल के युवा और 18–19 साल के टीनएज वाले भी मर रहे हैं । दारासिंह जैसे हट्टे कट्टे भी अमर नहीं हो पाए तो आप झूठ बोल कर या रिश्वत से अन्न खाकर या साम दाम दण्ड भेद आदि से भला किस प्रकार अमर हो जाओगे। छल कपट से राज्य पद भी मत हथियाओ। बड़े बड़े किले भी देख लो आज उनकी पत्थर की दीवारों पर काली काली चमगादड़े चिल्ला रही हैं और कह रही है कि – हे अक्षयरुद्र! सब मर गए तो तेरा शरीर कब तक रहेगा अतः क्षणभंगुर सुख के लिए पाप मत करना। भले ही भूखा मर जाना पर पाप मत करना।

# अध्याय 15
# सो रहा अर्थी पर

सत्ययुग में ध्यान, त्रेता में यज्ञ, द्वापर में सत्य तथा कलियुग में दान (पात्र को परंतु पका भोजन, प्रत्येक को दिया जा सकता है।) के प्रभाव से सब कुछ प्राप्त हो जाता है निष्पापता आकर सदगुरु भी प्राप्त होते हैं।

नारद जी : हे अर्जुन! महाकाल ने कहा कि–कलियुग समस्त दोषों का भंडार है तथापि उसमें एक महान गुण भी है उसे सुनो–कलिकाल में थोड़े ही समय प्रभु की आराधना या गुरू सेवा से सिद्धि (परम ज्ञान सिद्धि निष्कामियों को और धन–पुत्र–स्त्री सिद्धि सकामियों को) प्राप्त कर सकेंगे।

कलियुग में 1 दिन तक प्रभु पूजा, व्रत, यज्ञ या जपादि से जो पुण्य प्राप्त होगा वही पुण्य द्वापर में 30 दिन (1 मास) में तथा त्रेता में 365 दिन (1 वर्ष तक) से प्राप्त होता है।

जब हमें मालूम ही है कि कलियुग में अल्प काल की भक्ति से ही महान फल प्राप्त हो जाता है तथा हम जानते भी हैं कि किसी भी क्षेत्र की सफलता उस क्षेत्र में अधिकाधिक समय देने से ही प्राप्त की जा सकती है फिर क्यों न हम अध्यात्म जगत में परम फल की प्राप्ति के लिए अधिक से अधिक समय का सदुपयोग करें।

नित्य ही हमको अनगिनत अर्थियों के बारे में सुनने को मिल रहा है अर्थात् जीवन का अंतिम सत्य 'देहांत' नित्य ही हमको अनुभव हो रहा है फिर भी क्यों हम इसको गहराई से चिंतन न कर यूं ही मजाक के रूप में लेकर समय को गंवा रहे हैं, जो हम आज व्यर्थ का भौतिक स्तर से संघर्ष करके परिग्रह कर रहे हैं अथवा बैंक बैलेंस के लिए विचार कर रहे हैं वह यथार्थ रूप से सार हीन है क्योंकि हम जो भी भौतिक वस्तुएँ प्राप्त कर रहे हैं वह निश्चित ही मृत्यु के बाद हमसे दूर हो जायेंगी। और हमने उन वस्तुओं पर इतना खर्च किया वह धन व्यर्थ ही नष्ट हो जायेगा।

## सो रहा अर्थी पर

खरीद ले चाहे करोड़ों बीघा,
छः फुट में सो जायेगा।
करेगा यदि भोगार्थ श्रम,
खाक में मिल जायेगा।
आसक्त मत हो स्त्री देह पर,
सोच जरा सोच कर,
जान जरा जान कर,
सो रहा अर्थी पर।
सो रहा अर्थी पर।

शिव पथ में कर गमन,
रति रंग का कर दमन।
मन क्यों मानता नहीं,
मूर्ख क्यों जानता नहीं।
तुच्छ मार्ग का तज सफर,
सोच जरा सोच कर,
जान जरा जानकर।
सो रहा अर्थी पर।
सो रहा अर्थी पर।

रखी यदि तूने कुदृष्टि,
दीन–हीन हो जायेगा।
मिट्टी से बना है तू,
मिट्टी में मिल जायेगा।
चिंतन से पाप सारे हर,
सोच जरा सोच कर,
जान जरा जान कर।
सो रहा अर्थी पर।
सो रहा अर्थी पर।

हरि हर की भक्ति कर,
फिर ऐसा न बोलना कि,
ईश्वर ने तुझे नहीं बताया।
राम ने मुझे क्यों रूलाया।
जीवन में तू अमृत भर,
सोच जरा सोच कर,
जान जरा जान कर।
सो रहा अर्थी पर।
सो रहा अर्थी पर।

थामा नहीं वक्त तो,
जीवन दुस्वार हो जायेगा।
वीरान वनों में तेरा,
ढाँचा शेष रह जायेगा।
पर से क्यों होता अपर,
सोच जरा सोच कर,
जान जरा जान कर।
सो रहा अर्थी पर।
सो रहा अर्थी पर।

कल हो न हो किसे पता,
हे खिलते चमन ओ प्यारे सनम,
अपने स्वरूप को जान जरा।
पी औषधि भक्ति की,
अब तो विचार कर,
सोच जरा सोच कर,
जान जरा जान कर।
सो रहा अर्थी पर।
सो रहा अर्थी पर।

तीन वक्त मैं खाऊँगा,
गाड़ी, महल बनाऊँगा,
भले ही प्रभु नाम छूटे,
चाहे कलियुग मुझे ही लूटे,
ऐसा है तो जल्दी मर,
सोच जरा सोच कर,
जान जरा जान कर।
सो रहा अर्थी पर।
सो रहा अर्थी पर।

यदि जिस चारपाई पर सोता है उस पर यदि गंभीरता से चिंतन करे तो निःसंदेह वह वैराग्य को जगाने वाली होगी। अर्थात् वह वास्तव में चारपाई न होकर अर्थी ही होगी। अरे! अरे! डरो मत। यह कल्याण का एक प्रबल रास्ता है। इस रास्ते से होकर जो भी नित्य जाता है उसका वैराग्य कभी क्षीण नहीं होता और उसे वैराग्य के परम ईश्वर अर्थात् योगेश्वर परम कृष्ण की प्राप्ति हो जाती है। जब हमको मालूम है कि इस शरीर को किसी भी क्षण काल के मुख में जाना पड़ सकता है फिर भी क्यों हम ईश्वर को पूर्णतः अर्पित न होकर जगत के (सार रूप से कंचन और कामिनी के) गुलाम बने हुए हैं।

## काल के मुख में जाना है

श्वांस गति रूक जाना है,
जीवन तरंग रूक जाना है।
दूषित अहं त्याग दे प्राणी,
काल के मुख में जाना है।
काल के मुख में जाना है।

कर याद महाकाल की अब तो,
अमृत जीवन पाना है।
जियेगा गर तू दूषित अहं में,
काल के मुख में जाना है।
काल के मुख में जाना है।

जगत का मेला बड़ा सुहाना है,
आसक्ति से जाना–आना है।
श्वांस गति रूकने पर,
काल के मुख में जाना है।
काल के मुख में जाना है।

न माना यदि संजय वाणी,
वक्त थपेड़े खाना है।
एक बात तू निश्चित सुनने,
काल के मुख में जाना है।
काल के मुख में जाना है।

गुरू सान्निध्य से कैवल्या ही पाना है,
जो है सबसे उत्तम मुक्ति।
पाकर अभिन्नमय हो जाना है,
काल के मुख में जाना है।
काल के मुख में जाना है।

करके भक्ति पराशक्ति की,
मणिद्वीप–आनन्द पाना है।
सुनकर भी यदि भूलता है तो
काल के मुख में जाना है।
काल के मुख में जाना है।

काल के भी कल्याण हेतु,
महाकाल की याद दिलाना है।
क्यों नहीं करता प्यारे चिंतन,
काल के मुख में जाना है।
काल के मुख में जाना है।

भौतिक प्रयास से मात्र हे जीव!
ठोकर जग की खाना है।
करेगा नहीं यदि संत–जन सेवा
काल के मुख में जाना है।
काल के मुख में जाना है।

शीत, ग्रीष्म और प्रिय वर्षा,
तीन ऋतुओं का नारा है।
करेगा नहीं यदि स्वाध्याय सत्संग,
काल के मुख में जाना है।
काल के मुख में जाना है।

जितेन्द्रिय और वीतरागियों ने
संकल्प दिव्य ही ठाना है।
न ठाना तो तुझे निश्चित एक दिन
काल के मुख में जाना है।
काल के मुख में जाना है।

अंशभूत है गुरू का पर्याय!
तत्त्वज्ञों ने माना है।
तू भी मान ले अन्यथा बन्दे!
काल के मुख में जाना है।
काल के मुख में जाना है।

# अध्याय 16
# स्वर्ग के कुछ मंडल भी हीन वस्तु

जिनको लक्ष्य ( फल ) प्यारा होता है वे फ़ालतू काम नहीं करते। उनकी दृष्टि नश्वर पर या क्षणभङ्गुर वासनात्मक कामसुख पर नहीं होती।

जो महापुराणज्ञ या महापुरुष हैं वे दिव्य होते हैं उनको समय नष्ट करना नहीं आता। उनके पास कलश में भरी हुई यज्ञ भस्म भी होती है उसको देखकर ही वे परीक्षित के सात दिन याद करते हुए व्यतीत करते हैं और ब्रह्मनिष्ठ हो जायें तो अमरता और अजन्मा के कारण अपने शिवत्व के अक्षय आनन्द में ही रमण करते हैं। जो मनुष्य मूर्ख है या जो सतोगुण रूपी अर्जुनी संपदा को लेकर नहीं जन्मा वो ही सुरा और सुन्दरी में समय बर्बाद नहीं करते न ही 100 हजार टाईल्स या पत्थर ईंट खरीदकर सात आठ मंजिला इमारत में समय नष्ट करते हैं वे  नारीलम्पटता संबंधित विषय से हटकर ब्रह्म विषयक जीवन जीते हैं अथवा अति धन के पीछे न भागकर आध्यात्मिक संपदा के लिए ही दिन के 7–8 घंटो का सदुपयोग करते हैं। गृहस्थ हो तो वे सुबह और शाम निश्चित ही  1–1 या दो दो घंटे गुरुमंत्र या स्तोत्र से आध्यात्मिक पथ प्रशस्त करते हैं और नैष्ठिकब्रह्मचर्य रक्षण धारी हो तो उनके 24 घंटे ही स्वाध्याय, सत्संग और गुरुसेवा या मंत्र लेखन अथवा जप तप व्रत–उपवास में बीतते हैं। ऐसे लोगों के लिए स्वर्ग के कुछ मंडल भी हीन वस्तु है वे तो कम से कम तपोलोक, जन लोक, महर्लोक या ब्रह्म लोक अथवा वैकुण्ठ ही पाते हैं। और सदाशिव जी से अभिन्न हो जाये तो कालचक्र का भेदन करके सदाशिव जी से एकरूप ही रहते हैं।  यहाँ भी वे परात्पर ब्रह्म ही कहे जाते हैं और शाश्वत ब्रह्म भाव में ही आनन्दित रहते हैं।

# अध्याय 17
# हर लोकों में दो प्रकार के सुख

हर लोकोंमें दो प्रकारके सुख बतलाये जाते हैं – एक तो इस शरीरके भोगों (सम्भोग संग्रह आदि ) द्वारा और दूसरा प्रभु शिव में लगन के कारण विषयभोगोंसे निवृत्ति रूपी योग द्वारा प्राप्त होता है । जिसके प्रारब्ध में दुख लिखा होता है वह संभोग की ओर भागता है इसमें संदेह नहीं करना चाहिए।

क्योंकि प्रेम का मतलब संभोग नही अपितु संयम सहित रामकृष्ण सा जीवन है।

और जिसके पापों का नाश हो चुका वह निवृत्त होकर ब्रह्मभाव को पाकर सदा के लिए भगवत् स्वरूप हो जाता है। यह संभोग की कामना और कुछ भी नहीं पाप का दंड प्राप्त होने की एक क्रिया मात्र है। पर पराई नार से भोग होने पर कष्ट अधिक होता है यह ब्रह्मवैवर्त पुराण के प्रकृति खण्ड के अध्याय 31 में वर्णित है। वहीं देखे विस्तार से।

संभोग ही संसार के दुखों का कारक है इसी से जीव संघर्ष के कीचड़ में लिप्त होता है इसी कारण प्रवृत्यात्मक मार्ग दुख का ही कारण बनता है पर जिसका वंश नष्ट होने वाला हो वह वंश की रक्षा के लिए प्रशस्त नारी से विवाह कर सकता है पर प्रशस्त न मिले तो चाहे वंश नष्ट होने को हो पर अप्रशस्त ( कुलटा स्वभाव वाली या महत्वाकांक्षी ) से विवाह नहीं करना चाहिए इससे उस कुलटा के कारण अनेक पीढ़ी नरक में चली जाती है तब पुत्र के विकल्प के रूप में मात्र एक पीपल या बिल्ववृक्ष अथवा एक वट वृक्ष भी पर्याप्त है इससे लाखों पुत्र संतान का फल अवश्य ही मिल जाता है।

# अध्याय 18
# चिता पर जलोगे ही फिर मिथ्या शपथ क्यों ?

वे लोग महामूर्ख हैं जो पाप या पापी की रक्षा के लिए झूठी शपथ ग्रहण करते हैं या अपने पद के शपथ ग्रहण समारोह में कसम तो खा लेते हैं पर ईमानदारी से कर्तव्य का पालन न करके कसम ही झूठी कर देते हैं।

देखें कुछ दण्ड–

गंगाजल हाथ में लेकर झूठी शपथ करने वाला 5 जन्मों तक म्लेच्छ होता है। शालग्राम को छूकर प्रतिज्ञा करके न निभाने वाला 7जन्म तक विष्ठा कीट होता है।

देवमंदिर में जाकर झूठी कसम खाने वाला ज्वालामुख नामक नरक में दंड पाता है।

तुलसी की माला गले में डालकर या तुलसी दल हाथ में लेकर या तुलसी को छूकर जो झूठ बोलते हैं या एक बार ही झूठी शपथ खाते हैं वे वैष्णव नहीं कहलाते अपितु सात जन्मों तक चाण्डाल बनते हैं और दुख पाते हैं। तदोपरान्त (गले में तुलसी माला मृत्यु के क्षणों पर हो तो) पुनः अगले जन्म में मनुष्य  बनकर हरि भक्ति से मुक्त हो जाते हैं।

# अध्याय 19
# लिंग और भग की भ्रांतियाँ

लिंग का अर्थ चिह्न होता है जो निराकार ब्रह्म के साकार रूप का संकेतक है। या उसकी कल्पना के लिए चिह्न रूप में प्रदर्शित किया जाता है चाहे ज्योति रूप चाहे शिवलिंग रूप चाहे कोई भी छोटा या बड़ा साकार मूर्ति विग्रह ....ये सब संकेतक हैं परब्रह्म के। और उस परब्रह्म के पास, उसकी लीला या हेतु अपना ही सेल्फ ऐश्वर्यों का समुच्चय है, जो भग नाम से भी कहा जाता है उन ऐश्वर्यों के बिना वो मात्र सपने के आनंद की भांति आनंद तो पा सकता है पर प्रत्यक्ष में साकार लीला या चमत्कार नहीं कर सकता और उन ऐश्वर्यों को ही यथार्थ में भग कहा जाता है कुछ श्लोकों में भग एक धातु है न कि स्त्री की योनी या पुरुष के क्षणभंगुर सुख का केन्द्र जिसके आगे पीछे कामी डोलता ही रहता है जिसमें दर्शन के योग्य कुछ भी नहीं और हे पुत्री! इस प्रकार का अनर्थ करने वाले लोग वहाँ पूजा की प्रधानता नहीं रखते अपितु वासना का भाव रखते हैं,

ऐसे 100 लोग जो योनीपूजा पर बल देते हैं उनमें से 90कामी होते हैं उन्होने कभी भी अपनी पत्नि की योनी की पूजा देवीभाव से नहीं की, पर वे पराई स्त्री को भैरवी कहकर उसकी योनी को देखकर भोगना ही चाहते हैं।

निश्छल भाव से अपनी भार्या की योनी को

गंध

पुष्प

धूप

दीप

और नैवेद्य

आदि अर्पित नहीं किया यदि उनको वहाँ योनीक्षेत्र के केन्द्र में जगदम्बिके सर्वेश्वरी दिखाई देतीं तो वह कामी पति अपनी परात्परा माँ और

देवी रूपी योनी को गंदा क्यों करता अर्थात् वह उसे आज तक दूषित नहीं करता और नित्य अपनी पत्नी की और उसकी योनी की पूजा करता।

जो विशुद्ध रूप से सर्वमयता के कारण योनी में माँ जगदम्बा देखता है वह यदि उससे कामसुख लेता है तो महापाप करता है।

अतः यहाँ लिंग पुरुष के लिंग का सांकेतिक चिह्न नहीं। और भग नारी की योनी नहीं

( भगरूपा महामाया लिंगरूपः सदाशिवः।

तयोः पूजनमात्रेण जीवन्मुक्तो न संशय)

इस भग का संकेत मात्र ऐश्वर्यों से है अनंत शक्तियों से है और लिंग का संकेत मात्र उन शक्तियों का धारक ब्रह्म के संकते से और जो शिव और शक्ति को एक बार भी शांतचित्त से पूजा कर लेता है

तस्य पुनर्जन्म न विद्यते।

पर अपनी पत्नि की योनी को भग कहकर जीवन्मुक्ति की बात कहने वाले.......... आप बैसे तो उस योनी को पूजते नहीं पर पूजा कर भी लो तो हाड़ माँस की ग्रंथियाँ पूजकर मुक्ति नहीं पा सकते। मोक्ष तो देवी के चरणों की सेवा से भी मिल जायेगा पर आप सांसारिक नारी की योनी के पीछे ही क्यों पडे हो।

और हर योनीक्षेत्र में देवी चण्डिका की कल्पना करो तो उसकी एक बार भी पूजा करने के बाद आप संभोग की पात्रता खो दोगे क्योंकि आप देवी के पुत्र हो न कि साक्षात् सदाशिव जो उस पराम्बा रूपी योनी का स्पर्श भी कर सको। फिर सदा ही पूजा करते रहना नमस्कार करते रहना ,अरे अपने सद्‌गुरु में तो तुमको भगवान नजर नहीं आता, देवी नजर नहीं आती और योनी में ही क्यों नजर आता है, देखना ही है तो हर चीज में भवानी या महामाया देखो न।

जिन कामी जनों को सब जगह संभोग ही संभोग और वासनात्मक थोट ही नजर आता है उसे ही इस श्लोक में मात्र योनी या लिंग ही दिखता है।.... .................... लिंगरूपः सदाशिव का तात्पर्य तुम्हारे मूत्र त्यागी लिंग से मत मान लेना............. भगरूपा महामाया का अर्थ मूत्र त्यागी नारी की योनी से मत लगा लेना। यदि लिंग को ही सदाशिव मानों तो क्यों मंदिर जाते हो अपने लिंग का ही अभिषेक करो न।

और हमारी बात करें तो शिव और शिवा हमें मात्र लिंग या योनी में ही नहीं अपितु बॉडी के प्रत्येक अंग, उपांग,द्विउरु हड्डी,जानु,गुल्फ,भ्रूभाग, नसें, आंत, हृदय, हाथ पैर सभी में भी दिखते हैं। गुरु या संत में भी दिखते हैं न कि मात्र योनी में।

और पूजा करने के लिए योनी के दर्शन की आवश्यकता नहीं अपितु संतचरण ही काफी हैं,

हर जन्म में तो तुमने योनी का सेवन किया है अरे

एक जन्म में ही ब्रह्मविद् गुरु की सेवा करके देखो न भाई

पुरुष तो पुरुष हम  हजारों निर्वस्त्र स्त्रियों के किसी भी अंग को (चाहे जिस किसी स्थान पर उसकी शोभा हो रही हो ऊपर नीचे या मध्यभाग में) जगदम्बा की मूर्ति समझकर पूजा कर सकते हैं हमें नाशवान पदार्थ या सफेद काली नीली पीली चमड़ी ही नहीं दिखाई देते अपितु हर जगह इष्ट ही दिखाई देता है पर देवी की पूजा के लिए मात्र योनी नहीं ढूंढते अपितु घर की दीवार, अपना हृदय, संत और गुरु ही काफी है। या देवीभागवत का ग्रंथ

वायु, अग्नि, मिट्टि, जल, योनी, स्तन, हृदय, पृष्ठ भाग, जानु, पिंडली, ओष्ठ, भूमि, आकाश आदि में यथार्थ रूप से भगवती ही हैं । ऐसा कोई भी स्थान नहीं जहाँ माँ भुवनेश्वरी न हों, पर दुख उन लोगों को देखकर होता है जो आज तक लगातार छः माह भी ब्रह्मचर्य का सतत् पालन नहीं कर सके और भग और लिंग पर टीका या भाष्य लिखने का सोचते हैं और कुतर्क भी....

अतः इसमें सोचने की कुछ भी बात ही नहीं।

शिव पुराण में एक बात लिखी है कि मात्र जितेन्द्रिय व्यक्ति ही  अपने लिंग में भी शिवजी की कल्पना करके पूजा कर सकता है और स्त्रियाँ यदि कामुक न हों तो अपनी योनी में भी शक्ति की पूजा कर सकती हैं क्योंकि जगदम्बा कण कण में हैं। पर सामान्य के लिए यह आदेश नहीं।

पुनः पढ़ लें अति संक्षिप्त में –

सच्चाई यही है, किसी भी पति को आज तक अपनी पत्नि की योनी में जगदम्बा नहीं दिखाई दी,  माँ जगदम्बा दिखाई देती तो वह गारंटी से उस योनी में दुर्गा जी को देखकर उनकी षोडशोपचार से पूजा करता, समाधि अवस्था में पा लेता और योनी के दर्शन मात्र से काम भाव नहीं आता,

भला माँ को योनी रूप में देखकर काम वासना नहीं जागती।

जो पुरुष भग या नर लिंग को स्त्री का गुप्तांग समझे और उसमें भगवती देखता हो वह उस योनी को पत्नि के सामने ही साष्टांग दंडवत करना न भूले और उसे कभी भी दूषित न करे वह साक्षात् माँ ही तो है न, फिर माँ के साथ भोग भोगने में लज्जा नहीं आती पाखंडियों। कामाख्या मात्र में आप जगदम्बा की सेवा प्रेम से करो, पर मातृभाव से ही वहाँ पूजा करना धर्म है। लेकिन मात्र वहाँ ही। और अपनी पत्नि की योनी में जगदम्बा भूल से भी न देखें अन्यथा वंश बढाना मुश्किल हो जायेगा और परायी स्त्री की योनी की तो कल्पना से ही जल जाओगे क्योंकि परायी नारी पर आपका अधिकार नहीं।

मूर्खता पूर्ण यहाँ लोग (श्लोक के गलत अर्थ के अनुसार) योनी योनी चिल्लाते रहते हैं।

आदर्श मानव हर अंग में जगदम्बा देखता है मात्र लिंग या योनी में ही नहीं,हमें इन शब्दों या योनी अथवा लिंगादि के विषय में सोचने के लिए समय ही नहीं मिलता, 24 घंटे तो कम पढ़ते हैं जनकल्याण के लिए नाशवान पिंड के बारे में कैसे सोचें।

और लिंग रुपी यथार्थता समझना हो तो लिंगाष्टकम् को समझ लो।

**कोई जन्मजात वैराग्यवान तो कोई बाद में–**

**कोई जन्मजात वैराग्यवान होता है जैसे सनत्कुमार और शुकदेव आदि।**

**कोई 50–55 के बाद संसार कामे कर्ममार्ग से इस्तीफ़ा देकर वानप्रस्थ सा जीवन जीता है वह भी अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक तथा हरि हर को समर्पित होकर मुक्त हो जाता है या जनकल्याण के साथ भक्ति करता है। कोई भयंकर नास्तिक होता है पर प्रभु कृपा से किशोर काल में ही चमत्कारिक घटना से सदा के लिए ही विवेकानंद सा अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक रहने वाला दिव्य और महान ऋषि के तुल्य बनकर विश्व का मंगल करता है। पर भोगों की इच्छा या स्त्रीसुख की कामना के कारण प्रेमिका के मिलन की उत्कंठा रखता है ( न मिले तो अन्य से विवाह या मिले तो उसी से ही) विवाह करके अपनी कामवासना मिटाता है (अथवा कोई जितेन्द्रिय हो पर वंश के लिए विवाह मात्र करे तो कालान्तर में ) यदि उसे अपनी प्रेयसी या भार्या**

धोखा दे दे तो वह थोड़ा–बहुत भी समझदार होगा तो (आत्महत्या न करके) प्रभु को पाने के लिए तत्पर हो जाता है।

जो भी हो पर अंत भला तो सब भला।

कैसे भी संसार से राग मिट जाये। यही कल्याण का मूल है।

और कोई कोई आजीवन आठ पाशों की चपेट में बद्ध रहकर या 60 के बाद भी ( पोते पोती हो गए तब भी ) कुत्तों की तरह अपनी इन्द्रियों को तृप्त करके वीर्य का नाश कर करके भी यह कहता रहता है कि – भगवान तो भाव के भूखे हैं भगवान तो गृहस्थ को भी मिल जाते हैं वानप्रस्थ या संन्यास आश्रम तो मुफ्तखोरों या भगोड़ो ने बना दिये।

पर ऐसे मनुष्य जो वानप्रस्थ या संन्यास आश्रम को कचरा समझ बैठे वे महान नरकों में गिरते हैं।

यथार्थ संन्यास इस अक्षयरुद्र के अनुसार वही है जो विप्र घर का भी त्याग कर डाले और मन से भी संन्यासी हो।

हालांकि संन्यास के भी अनेक प्रकार हैं। जिसमें कुटिचक्र, बहुदक, हंस , परमहंस तथा अवधूत संन्यास आदि प्रकार हैं। इनमें सबसे अधिक श्रेष्ठ अवधूत संन्यासी कहा गया है। परमहंस इससे छोटा और हंस और भी छोटा। इनमें भी जो संन्यासी अपने हाथ को ही पात्र बनाकर उसी करपात्र में ही कुछ ग्रास भोजन एक समय ग्रहण करे उसे करपात्री भी कहा जाता है ।

घर त्याग कर बाहर जो मन की निश्छलता व तपस्या होती है वही संन्यासी भूदेव है शेष सब लोग अपनी अपनी कमजोरी छिपाने के लिए भूदेव मान बैठे। और जो ब्राह्मण वानप्रस्थ या संन्यास का माहात्म्य न समझे या स्त्रीलम्पट हो अथवा पराई नार का योनी सुख ले चुका वह तो महाभारत के युधिष्ठिर के अनुसार वर्ण संकर समझने के योग्य है युधिष्ठिर ने कहा कि हे नागराज! श्रोत्रिय ब्राह्मण कामवासना की अतीवता होने पर भी

जल बिन मछली की भाँति मर जायेगा पर परायी स्त्री का भोग कभी भी नहीं करता उससे रोम रोम में ब्राह्मणत्व समाविष्ट होता है। जिसका पिता या माता दोनों में से कोई एक भिन्न जाति का हो उसी की संतान ही परभोग करती है। वीर्य और रज की भिन्नता से ही तमोगुण उत्पन्न होता है जिसका परिणाम राष्ट्र की प्रजा को भी भोगना पड़ता है। हालांकि संध्याहीन ब्राह्मण भी ( मात्र तीन दिन संध्याहीन होने पर ) शूद्रत्व पा लेता है जिसके

प्रायश्चित के बाद ही वह कर्मकांड का अधिकार प्राप्त कर सकता है। हे नर नारियों ! वीर ब्रह्मचारिओं से शिक्षा लो जिनको कि लक्ष्य का ही स्मरण है या यमभय से अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक रहते है या परमपद के लिए अखंड ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं या वे ब्रह्मविद् हो गए तो पूर्णतः ही तद्भावित होने से बिना प्रयास के उनका ब्रह्मचर्य सधता है ।

और ये सब न जानों तो स्मर सूक्त या ब्रह्मपार स्तोत्र का अनुष्ठान आरंभ करो। या हनुमान जी का मंत्र जपो वही मंत्र जिसकी साधना एक बार यह अक्षयरुद्र भी कर चुका।

# अध्याय 20
# एक पुण्य का उपभोग कर रहा और एक नवीन प्रारब्ध बना रहा

निष्काम भाव से महादेव का भजन करने वाले दुर्लभ हैं। एक पुण्य ''पद,ऐश्वर्य,अतुलित वैभव व धन को भोग रहा और अप्सरा जैसी सुन्दर नारी या आज्ञाकारी संतान का उपभोग कर रहा अर्थात् सुख पाकर पुण्य समाप्त कर रहा है। और एक जप तप से पुण्य कमा रहा। और कुछ भोग भी रहे व जप तप से अगला जन्म भी ऐश्वर्य से युक्त बनाने की तैयारी कर रहे है। पुण्यों को जो मात्र भोग रहे हैं वे भोगकर कालांतर में साधारण बन जायेंगें। और जो वर्तमान में साधारण है या हो चुके तथा जो सकाम तप कर रहा है वह अगले जन्म मे ऐश्वर्यसम्पन्न हो ही जायेगें। ज्ञान न होने तक यही चक्कर चलता रहता है। और सब कुछ तप जपादि भूलने की भी संभावना है। सुख में लोग सब कुछ भूलते ही हैं।

और कुछ लोग आज भी नाशवान भोग न चाहकर हाथ में माला लेकर निष्काम भाव से घुमा रहे हैं और संत सेवा कर रहे हैं उनका उद्धार हो जायेगा। इसके विपरीत कुछ लोग पराई नारी को भोग रहे हैं वे नरक ही जायेंगे वे केवल चंचुला की भांति प्रायश्चित कर लें तो ही बच पायेंगे।

**लाभ और हानि –**

कंठी वाले या तीर्थ में रहने वाले जो महापुण्य या महापाप करते हैं उन दोनों का फल लाखों गुना होकर प्राप्त होता है।

अतः जो कंठी के पुण्य और फल को जानकर उसे धारण कर चुके वे पाप न करें।

वैसे भी दीक्षा, कंठी और तीर्थ में निवास मात्र सात्विक जनों के लिए हैं इनमें यदि पापकर्म वाला रहता है तो उसका कुछ कल्पों तक जो कुछ लाभ मिलता है उतने ही कल्पों तक नरक भी।

अतः

कण्ठी वाले परायी वस्तु न हड़पे।
कण्ठी वाले पराये धन को रिश्वत या चोरी से न हड़पे।

कण्ठी वाले परायी नार को काम भाव से न देखें और एक बात जो मूर्ख मनुष्य कंठी पहनकर एक बार भी पराई नारी से आलिंगनबद्ध हो गया वह चाहे काशी में मरे चाहे मथुरा या हरिद्वार अथवा द्वारका में वह कोटी कल्पों तक नरक भोगता है तदोपरान्त उसने जिस नारी को कुलटा पद दिया था (वह उसे नहीं भोगता तो वह कुलटा नहीं कहलाती) वह उसी नारी की योनी का एक सूक्ष्म जीव होता है । और यदि उस नारी ने उस पराये पुरुष के शुक्र या गुप्तांग का दर्शन कर लिया हो तो वह नारी भी अपने खानदान को डुबो देती है और यदि पराये पुरुष का मात्र या सांसों की वायु का स्पर्श भी कर चुकी हो तो भी उसे अगले सात जन्मों तक ऐसा पति मिलता है जिसकी आयु 26 से 55 के बीच हो ताकि वह पति को धोखा देन का दण्ड सात जन्म तक भोगती रहे।

और जिस वैष्णव शिष्य ने अमावस्या, एकादशी, अष्टमी चतुर्थी, नवदुर्गा, श्राद्ध काल या संक्रांति के दिन या ऋतुकाल के अतिरिक्त अथवा संतान की इच्छा से रहित होकर (मात्र क्षणभंगुर इंद्रिय सुख के लिए) अपनी पत्नी से भी संसर्ग ( तुलसी कंठी या रुद्राक्ष गले में हो तो )

कर लिया तो भी वह पाप लाखों गुना कालान्तर में वह शिष्य भोगता है । और बार बार नहीं कहेंगे कि गुरु भी 10 प्रतिशत भोगकर विलाप करता है कि हाय हाय मैने ऐसे कामियों को दीक्षा काहे दी। किसी पुराण में भी लिखा था कि ब्राह्मण बालक को भी दीक्षा देना हो तो एक वर्ष तक उसके यम नियम परखो। और क्षत्रिय को दीक्षा देना हो तो दो वर्ष तक परखो।

आदि आदि। पर बदकिस्मती है कि आजकल 90प्रतिशत मनुष्य अपने आश्रम चलाने के लिए सबको तत्काल दीक्षा देते फिर रहे हैं।

जिसका परिणाम पुण्य के साथ पाप भी है।

# अध्याय 21
# तीन अनिवार्य प्रश्न (लगभग समान भाव लिए)

1. महाराज जी ! मेरा मन संसार मैं नहीं लगता मैं विवाहित हूँ दो बच्चे भी पर अब शान्ति से तीर्थ स्थल पर रहकर भजन करना चाहता हूँ।
2. दूसरा युवक – अक्षयरुद्र अंशभूतशिव जी ! मैं किशोर हूँ पर मोक्ष प्राप्त करने के लिए सब कुछ छोड़कर जाना चाहता हूँ विवाह भी नहीं करना चाहता पर इकलौता हूँ क्या करूँ यदि संत या गुरु की सेवा हेतु छोड़कर गया और माता पिता को कष्ट हुआ तो क्या पाप तो नहीं लगेगा ?
3. ब्रह्मानंद जी ! मैं एक नारी हूँ पर विवाहित हूँ मेरा मन अब संसार में नहीं लगता पर शुरु शुरु में शादी की बहुत इच्छुक थी, विवाहित हो गई एक पुत्री है पर मैं अब वृन्दावन जाकर मीरा सी सेवा भक्ति करना चाहती हूँ, पति भी मेरा सही नहीं शराब पीता है और परनारी भोग में लिप्त है क्या करूं ?????

उत्तर– ऐसी स्थिति में आप घर में रहकर ही सुबह और शाम 1–1 घंटा भजन करें दिन को 5–6 घंटे परिवार संतान या बूढ़े माता पिता के लिए धनार्जन करें इस धनार्जन में आपका 1 प्रतिशत भी स्वार्थ नहीं कहलायेगा । क्योंकि लक्ष्य माता पिता या बच्चें होंगे न कि स्वयं। हे गृहस्थ मनुष्य! जब आपकी आयु 48 के लगभग होगी तो वे माता पिता देह को छोड़ देंगे यह सुनिश्चित जान लो ......बस कुछ वर्ष उन दोनों में ही गौरी शंकर या गुरु संत आदि को देखकर सेवा करें। और जो पति हैं वे पुत्र पुत्री के लिए अपना दायित्व निभाएं पर पत्नी व संतान को छोड़कर न भागें। धनार्जन के साथ घर पर ही दो समय भजन के साथ में माता पिता की केयरिंग भी करें। जब आपके बच्चे बड़े हो जायें तो

बच्चों की शादी करके निकल जाना। भले ही फिर कभी भी अक्षयरुद्र को कभी भी शक्ल मत दिखाना ऐसी गुफा में तप करना ..... जहाँ जाना हो

चले जाना तब आप स्वतंत्र हो जाओगे। । बड़े ही आश्चर्य की बात है कि सब बूढ़े मैया बाप को या बच्चों को छोड़कर वृन्दावन या काशी भागना चाहते हैं।

यह किसने ज्ञान दे दिया कि आधी रात में गृहस्थ आश्रम पर कुल्हाड़ी चलाकर भाग जाओ। जबकि छोटे छोटे बच्चे भी हैं।

संतान पैदा करने का तो दैहिक सुख भोग डाला अब भोग का परिणाम ( संतान ) सामने आ गया तो काहे पलायनवाद सिद्धांत को अपना रहे हो। मन हो या न हो पर उनके लिए दायित्व निभाना ही होगा।

शासन की सरकारी सेवा सब चाहते हैं, प्राईवेट नौकरी भी मिले तो कर लेते हैं और जो वैराग्य को प्राप्त हो जाये वह पत्नि या ब्रह्मचारी पुत्र तीर्थ की ओर भागते हैं अर्थात तीर्थ की सेवा भी अच्छी लगती है। पर पिता या बच्चों की सेवा ही बेकार लगते हैं। तथा पत्नी भी जो यह कह रही है मै तो हरिद्वार जा रही हूँ बच्चों को तो पति पाल लेगा यह भी महापाप है।

ये पत्नी और किशोर पुत्र आजकल संतों की सेवा सदा करने को उत्सुक है पर घर पर रहकर पति या पिता की सेवा में आनाकानी करते हैं। यह अनुचित है।

हे किशोर ! यदि तुम्हारे दो तीन भाई हैं या एक भी अन्य भाई हो तो शौक से अपने वैराग्य को सार्थक करो जा सकते हो पहाड़ी पर तप करने ध्रुव की नाई....... घर पर अन्य भाई केयरिंग कर ही लेगा। पर अकेले ही हो तो मत जाओ। बाद में जाना । कब .... ? जब कि आपके माता पिता चिता की ढेरी पर सो जायें।

जिन्होनें इतने जतन से 18–19 साल तक इकलौते पुत्र को पाला पोशा उनको दर दर ठोकर खिलाने के लिए छोड़कर जाना कौन से शास्त्र में पढ़ डाला । लगता है कि

1. इन लोगों का मानना है कि जॉब से धन मिलेगा ....
2. संत सेवा या माला से भगवान प्रसन्न होकर परमधाम या मोक्ष देंगे।
3. पर पति या बाप की सेवा से कुछ नहीं मिलता ये माता पिता या पति तो नाचीज या गौण हैं ।

लेकिन इन लोगों को पता नहीं कि पति की सेवा से भगवान हरि साक्षात दत्तात्रेय बनकर पुत्र रूप में ही आंगन में खेलते हैं और पिता की सेवा से मनुष्य गणपति पद के समान प्रथम पूजित हो जाता है। त्रिदेव भी उसको पूजते है। अरी नारियों ! आपका पति जब तक जीवित है तब तक संत के पास कभी कभार तो जा सकती हो पर पति और बच्चों को छोड़कर सदा के लिए नहीं जा सकती; पति मर जाये तो शौक से संतों या तीर्थों की सेवा में जाओ। पति पातकी है पर संतान भी पैदा हो गई है ऐसे में संतान को छोड़कर जाना हमारे अनुसार पाप है यदि संतान न होती तो पति को छोड़कर जा सकती थी अथवा धनार्जन कर सको, बच्चों को अच्छी तरह पाल पोष सको साथ मे कमाई भी कर सको तो संतान को साथ लेकर अन्यत्र जा सकती हो । पातकी पति को छोड़कर जाने में दोष नहीं ऐसी भागवत जी की भी आज्ञा है। पर जिनका पति ठीक ठाक औसतन ठीक हो और एक दो बच्चें हो तो उस घर को छोड़कर जाना पाप ही है। ऐसी नारी मीरा बनने का न सोचे। घर संभालो। और पति बच्चों की सेवा करो।

तीर्थ में रहने का जो फल है वही फल स्त्री को पति व संतान के साथ रहकर यथासंभव सेवा से मिल जाता है। पति व बच्चे हो तो तीर्थ में सदा के लिए जाना अपराध ही है। मीरा का तो पति ही मर गया था और बच्चे थे नहीं।

और हे किशोरों! युवकों ! पुनः सुनों –

आपने यदि संन्यास का संकल्प न लिया हो और घर में ही हो तो सुनें – यदि आप इकलौते हैं तो भले ही विवाह मत करो पर जब आपके माता पिता मर जायें तो ही नारद की भांति घर–परिवार सब कुछ दान में करके चले जाना। और जो विवाहित जीवन में आ गए वे घोर वैराग्य आ जाये तो भी बच्चों की शिक्षा व विवाह कराकर ही पलायन करें भले ही तप करें या अखंड ब्रह्मचर्य के साथ 15–20 पुरश्चरण।

पर धर्म को संकीर्ण मत समझो। माता पिता बहुत से बहुत कितने साल तक जियेंगे अधिक से अधिक 70–75 तक ; तदोपरान्त कौन मने करेगा आपसे जो भी अच्छा लगे करना।

–अक्षयरुद्र

# अध्याय 22
# प्रेम, बंधन, श्राद्ध, संतान तथा ऋण

प्रेम संसार से हो तो वह बद्ध प्रेम है जो बार बार पुनर्जन्म देता है भले ही हर जन्म में दोनों का मिलन होता रहे।

नारी से शुद्ध प्रेम ( एक आत्मा जिसने नारी तन धारण किया है वह कभी पौरुष भाव से नरपिण्ड भी धारण करती है उससे वासनारहित प्रेम) भी मुक्त नहीं करता अपितु मोह में वृद्धि करता है पर मोह से मुक्त होने पर वह वैराग्यवान हो जाता है तब प्रेम (या चाहत अथवा उस तन की आत्मा से मिलन की उत्कट कामना या लगाव) प्रायः नष्ट हो जाता है। जो (नारी या नर जिसको हम प्यार का इजहार करके प्रेम का लक्ष्य मान बैठे वह स्वयं ) किसी कर्मफल से 84 लाख योनी चक्र का जीव होकर यहाँ भ्रमण कर रहा है वह स्वयं बंधन में है भला आप उससे

प्रेम करके कौन सी मुक्ति पा लोगे अर्थात उस आसक्त या महत्वाकांक्षी या अष्ट पाशों से युक्त नारी या नर से प्रेम करोगे तो किस प्रकार हृदय की भयंकर ग्रंथि कटेगी।

पर हाँ ..........यदि हरि या शिव के लिए चाहत ( प्रेम ) उत्पन्न हो जाये तो वह प्रेम आपको मुक्त कर डालता है। नारी रूप ही यदि मुक्त करता तो हनुमान भी किसी नारी पिण्ड की आत्मा से ही लगाव रखना आरंभ कर देते।

यह प्रेम सांसारिक जीवन में खुशियाँ और प्रकृति मे हरियाली या घर में सुख की वर्षा अवश्य करता है पर इसके फल की तुलना हरि से प्रेम फल के समान नहीं इसी कारण मीरा ने नर पिण्ड से प्रेम नहीं किया। इस नर नारी के प्रेम में छिपी हुई एक वासना भी होती है । यदि वासना न होती तो वह पुरुष अपने नर मित्र को भी अपने हृदय का दान कर सकता था अथवा नारी अपनी सहेली को भी हृदय का दान कर डालती। पर ऐसा नहीं होता। एक नारी सदैव नर रूप पर ही मुग्ध होती है और एक पुरुष अपने से विपरीत लिंगी की ओर ही भागता है और उसी विपरीत लिंगी ( अपने तन से भिन्न आवरण जो पुरुष की इन्द्रियों के सुख का मूल है ) से ही प्रेम का

प्रस्ताव रखता है। इसका कारण यही है कि उसे प्रेम शब्द के लिए विपरीत लिंग की ही आवश्यकता है।

अतः हे किशोर और किशोरियों! इस सांसारिक प्रेम को दरकिनार रखकर हरि से प्रेम करो। रात दिन–

**my sweetheart**
**my dear**
**i cannot live**
**without you-----**

ऐसे शब्दों के जप में समय नष्ट मत करो।

हरि हरि जपो

शिव शिव जपो।

जितना ध्यान तुम अपने भौतिक प्रेम ( सुन्दर स्त्री रूप, या सुन्दर चरित्र वाली नारी रूप ) पर लगाते हो उतना ही मेरे हरिहर पर लगाओ।

हरि का चरित्र और रूप इस नारी से अनंत गुना अधिक शुद्ध है।

– हे वीर ब्रह्मचारी तू अपने मन को परम प्रभु में लगा। यह सांसारिक रूप और कुछ नहीं 8400000 योनियों का परिणाम है वे जीव–आत्माएं कभी नर तो कभी अप्सरा जैसी सुन्दर नारी आवरण में अपने अपने कर्म फल भोग रहे होते हैं।

हे पुरुष! नारी तन के पास जाकर स्पर्श सुख ( वासना का अंश ) लेता है और उस वासना को प्रेम नाम देता है क्या कभी तू उसके तन से विलग रह सकता है। प्रेमिका हो और उसके अति पास विवाह न होने तक तू गया ही न हो क्या यह संभव हुआ है। यदि तू उसके हृदय को अपने हृदय से युक्त करके प्रेम मान बैठा तो अनुचित है यदि तू उसकी सांसों को अपनी सांसों से स्पर्श कर बैठा तो यह वासना ही समझ।

प्रेम यथार्थ में शरीर के स्पर्श सुख से परे का नाम है। पर वंश के लिए संतान अनिवार्य है।

पढकर एक जिज्ञासु –

गुरुजी! मेरा एक प्रश्न था लोग पुत्र की कामना करते हैं पुत्र की इच्छा रखते हैं क्योंकि वह उनके वंश की वृद्धि करेगा उनका उद्धार करेगा तो क्या

जिन लोगों के पुत्र संतान नहीं होती है उनका उद्धार नहीं होता है क्या वंश वृद्धि ही सब कुछ है आखिर यह वंश की वृद्धि क्यों आवश्यक है

उत्तर–

सृष्टि की रक्षा के लिए हर गृहस्थ को कम से कम एक पुत्र और एक पुत्री होना चाहिए।

पर न भी हो तो मात्र एक पीपल या बिल्ववृक्ष वृक्ष लगाकर बड़ा करने पर पुत्र की तुलना में लाखों गुना अधिक फल मिल जाता है। अथवा जो भक्ति में डूब गया उसे तो वृक्ष की भी आवश्यकता नहीं।

पर यदि किसी कारण से किसी की पत्नि विधवा हो जाए तो वह पुत्र ही उसका सहयोग करता है बुढ़ापे में, बेटी तो चली जाती है ससुराल। मायके की सेवा करने भला कौन भेजेगा उस बेटी को .... और आ भी जाए तो कब तक???? वह बहुत से बहुत 1 माह ही रहेगी। उसका भी परिवार है। तथा पिता यदि पापी निकला तो पुत्र द्वारा पिण्डदान तर्पण और श्राद्धकार्य से वह तर जाता है पर पिता परम भक्त हो जाये तब तो उसके मरने पर विमान ही आयेगा। ..........................महाराज जी! प्रेम ठीक है पर प्रेम विवाह करके भी उसे कालांतर में छोडने का मन करने लगता है। शास्त्र के अनुसार, कौन से अवगुण होने पर पत्नी त्याग के योग्य होती है? ( ख़राब चरित्र के अलावा)

उत्तर–

खराब चरित्र या परिवार को मिटाने की चाह रखने वाली पत्नी को ही त्यागने की आज्ञा है अन्य कोई भी कारण से वह त्यागने के योग्य नहीं।

उसका चरित्र और गुण ही उसे रखने या त्यागने का पात्र बनाता है।

पत्नी यदि पति व सास ससुर को नीचा दिखाने का प्रयास करे या प्रॉपर्टी के लोभ से हत्या की साज़िश रचे, पति की धर्म संगत आज्ञा न माने तो भी वह त्याग के योग्य है।

ऐसे ही श्रीमद्भागवत महापुराण के अनुसार पातकी पति का त्याग करने से नारी को दोष नहीं लगता।

वैसे हम तो कहें कि यदि जीवन साथी विकारपुंज का घनीभूत संग्रह ( नख शिख तक छल कपट और स्वार्थ वाला ) हो तो जीवन रूपी सड़क पर अकेला चलना ही बेहतर और उत्तम है। अतः विवाह से पूर्व ही परीक्षण करें।

जल्दबाजी में विवाह करने का अर्थ है कि आ बैल मुझे मार। या नागिन के बिल में हाथ डालना।

## इन कारणों से पुत्र का महान माहात्म्य है।

जो मनुष्य पापी ( व्याभिचारी, परस्त्रीगमन वाले या चोर लुटेरे या मदिरा सेवी आदि ) होते हैं या आसक्त या अति भोगी मात्र उनको ही मरने के बाद पिण्ड, श्राद्ध और तर्पण की आवश्यकता होती है। चंचुला और अनेक असंख्य भक्त ( जो शिव पुराण या श्रीमद्देवीभागवत अथवा भागवत के स्वाध्याय या श्रवण से अथवा गुरुमंत्र के अनुष्ठान से अथवा एकादशी से भक्ति युक्त थे वे असंख्य ) मर गए उनका किसी ने पिण्डदान या अन्य प्रेतकल्प विधान आदि नहीं किये पर वे मरकर तत्काल इष्ट के लोक को चले गए। और वह भी उनके लिए विमान आया था पार्षदों सहित। देवी की भक्तिमति या भक्त जब मरते हैं या तो बहुत सारी योगिनियाँ और किंकरियाँ अद्‌भुत आकर्षक विमान से आते हैं और उस भक्त या भक्तिमति का स्वागत करके उसे महा आनंद पूर्वक मणिद्वीप ले जाती हैं।

अतः समझो। मुमुक्षु, वीतरागी, अपरोक्ष ज्ञाननिष्ठ, पतिव्रता नारी, आज्ञाकारी संतान...इनके लिए पिण्ड और श्राद्ध कर्म अनिवार्य नहीं। पर यदि उनके वंशज ये सब करें तो उन वंशजों को ही पुण्यलाभ होता है।

इसी संदर्भ में............... एक जिज्ञासु –

गुरु देव हमने कहां से सुना है लेकिन ये सत्य है की नहीं इस का मालूम नहीं है आप बताइए की, जिस दम्पति के पिछले जन्म में को किसी भी प्रकार का कोई ऋण नहीं होता है उस दम्पति को इस जन्म में पुत्री होती है उस के घर पुत्र जन्म नहीं लेता है, क्यों कि वह पुत्री का कन्यादान कर अपने आप को ईश्वर के धाम का अधिकारी बना लेंता है

पुत्र उन दम्पतियो के ही घर जन्म लेते है जिन पर कोई ऋण बकाया होता है

क्या ये बात सब गुरु जी सही है क्या??

उत्तर–

ऋण होने पर तमोगुणी या रजोगुण वाले या निष्क्रिय ( उदासीन जो सेवा ही नहीं करते न ही लड़ते हैं या इलाज करवाकर उपचार से अच्छे नहीं होते और मर जाते हैं ऐसी) संतानों का जन्म होता है । पूर्व जन्म में वृक्षारोपण या एक ही वृक्ष लगाकर बड़ा करने पर या किसी संत या ब्रह्मनिष्ठ अथवा संध्यापूत ब्राह्मण के चरण दाबे हों उस पुण्य से वही वृक्ष या स्वर्ग की भली आत्मा अगले जन्म में सात्विक पुत्र के रूप में जन्म लेती है और बुढ़ापे में बहुत सेवा करती है तथा वह पाप भी नहीं करता। और पूर्व जन्म में देवी को खूब प्रसन्न किया हो या नारी जाति का बहुत सम्मान किया हो पर मोक्ष न मिल पाया हो तो इस जन्म में देवी की एक विशेष कला या कलांशा या कलांशांश बिटिया का जन्म शुभ मुहूर्त शुभ नक्षत्र में होता है और उसके आते ही धन धान्य और ऐश्वर्य अपने आप अधिक मिलने लगता है तथा वह भी सतोगुणी ही निकलती है। अथवा वह पुत्री पतिव्रता, भक्तिमति या ब्रह्मवादिनी हो जाती है। इस कन्या के कन्यादान ( योग्य वर को ) से अक्षय पुण्य मिलता है और इसकी सेवा पढ़ाई–लिखाई आदि से पुत्र फल की तुलना में 10 गुना अधिक श्रेष्ठ लाभ भी। अन्य सब सुनी सुनाई बाते हैं।

00000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 23
# चिंता न किया करो

चिंता ही हार्ट अटैक का प्रमुख कारण है।

चिंता ही 90 प्रतिशत रोगों का कारण है।

चिन्ता से होगा भी क्या ?

मौत आने पर राजा भी अपनी प्रियतमा को या बच्चों को नहीं बचा सकता।

अभिमन्यु को भी बड़े बड़े धुरंधर नहीं बचा पाये।

जब यादवों का अंतिम समय आया तो भगवान ने भी उनको मरने के लिए लीलावश छोड़ दिया।

भगवान शंकर के कैलास पर भी सदा सुख नहीं होता शिव पुराण की रुद्र संहिता का युद्ध खण्ड पढ़ लेना।

राम जी भी जब जब अवतार लेते हैं तो एक रावण अपलक सीता की ओर मंद–मंद मुस्कान लिये देखता ही रहता है । ऐसे में मात्र यथासंभव कोशिश करो कि शत्रु ( रोग, दरिद्रता, संतान से कष्ट, पत्नी से विरह आदि का दुख या खतरनाक पत्नी की धौंस आदि ) पर विजय मिल जाये और न मिले तो रोने की आवश्यकता नहीं ।

कुछ भी चला जाए तो भी विश्वास मानिये ............

आपका कुछ भी नहीं गया ?

जितना पुण्य शेष था उतना ही उन सगे सम्बन्धी जनों से लाभ प्राप्त हो सका। अब खाते में पुण्यों का स्टॉक खत्म हो गया तो .... रोने से क्या लाभ। ।।। पुनः पुण्य कमा लो अगले जन्म में फिर से ये सब मिल जायेगा। अधिक पुण्य बढ़ाओ तो अधिक पाओगे।

आप आत्मा अजर अमर हो बस शरीर बदलता रहता है। और उन उन देहों में पुण्य ही सुख देते हैं पुण्य खत्म तो पत्नी मर जाती है ( क्योंकि जितने पुण्य किये थे उतनी ही आयु वाली नारी से विवाह होता है ) पुण्य खत्म तो बच्चे मर जाते हैं ( पुण्य फल के अनुसार ही ऐसे ही बच्चें आपके

घर पैदा होते हैं जिनकी आयु 20 से 40–45 तक हो या कभी कभी तो वे गर्भ में ही मर जाते हैं या जन्मते ही मर जाते हैं। भीष्म पितामह के सात भाई और देवकी के छः बेटे भी प्रारब्ध वश मारे गए। अतः सब कुछ अनुकूल वातावरण तैयार चाहिए तो कंजूसी मत करो गाय, अतिथि और पितरों की सेवा हरि प्रीत्यर्थे करो।

गुरुमंत्र का अनुष्ठान करो।

यह ( 90 दिनों में या 40 दिन में मृत्युञ्जय मंत्र के मात्र 300000 बार जाप कर डालो।

या 90 दिन में यमुना साधना से सब कुछ पाओ।

पर टसकने, रोने और गिड़गिराने से तो कोई हल नहीं मिलेगा भाई।

जैसा बीज बोया था वैसा ही फल आज मिल रहा है।

( पर मानव कष्ट दे रहा हो तो इसे आप पापफल मत मान लेना; किसी भी प्रकार के पापों का दण्ड मनुष्य से नहीं मिलते अपितु प्रकृति से ही मिलते हैं मानव को कष्ट देने की स्वतंत्रता नहीं। )

(अतः अधिक समय तक सौन्दर्य की चरम और सद्गुणों की खान पर पहुंची पत्नी चाहिए तो अधिक पुण्य बढ़ाओ। )

कुभाव से तत्काल ही शरीर की प्रतिरोधक क्षमता तक नष्ट हो जाती है।

कुभाव, चिन्ता, बुरी सोच ये सब शरीर को खोखला करने वाले अदृश्य विषाणु ही हैं ।

काहे चिंता करते हो ? अर्थात सोच बदलने से भी दीर्घकालीन जीवन प्राप्त हो जाता है।

# अध्याय 24
# मृत्यु को प्राप्त पतंगा

पतंगा दीप शिखा के क्षणिक और मिथ्या सुख के कारण ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है यह कोई माने या न माने, पर परम सत्य है, अतः व्यक्ति को कुछ समय के भोगों या इंद्रिय तृप्ति के चक्कर में पड़कर अपना जीवन नष्ट नहीं करना चाहिए अथवा पूर्णता के बाद कुछ किया जा सकता है ( पर पूर्णता के बाद तो आपकी कामना पलायन वेग से उड़ ही जायेगी तब मात्र ब्रह्मानंद ही बचेगा)

हालांकि सत्य तो ये भी है कि यदि किसी भी परिवार में एक भी पतिव्रता हो तो वह समस्त परिवार को तार देती है, पर तारने की आशा पत्नि से रखना भी मूर्खता है स्वयं ही सिद्ध पुरुष बनो न क्यों किसी जीव की विशुद्धि की आशा करते हो भाई!

परंतु यह भी सत्य है कि यदि वह परपुरुष गामिनी (कुलटा, वैश्या अथवा महावैश्या) निकली तो पति के परिवार की पिछली 7 पीढ़ी और वर्तमान की पीढ़ी को सीधे ही नरक में डाल देती है तथा उसके माता पिता की पीढ़ी भी नरक गामी होती है वैसे भी मुक्ति का संबंध स्त्री या पुत्र से है ही नहीं, पर जो लोग पाप करते हैं उनके लिए श्राद्ध, पिण्डदान आदि के लिए संतान की आवष्यकता होती है इसके विपरीत जो प्रभु के भक्त, गौ सेवक, राष्ट्र भक्त, वैराग्य वान, मुमुक्षु या ज्ञाननिष्ठ होते हैं उनको अपने उद्धार के लिए न तो संतान की आवष्यकता है और न ही पिण्ड दान की। धर्म शास्त्रों में तो इतना भी लिखा है कि यदि कोई मनुष्य भक्त या ज्ञानी हो अथवा न हो, वैराग्य या मुमुक्षा उसे प्राप्त हुई हो अथवा नहीं, यदि वह मात्र नित्य गाय को एक पूरा (अथवा गाय की अन्य खाद्य सामग्री) भी खिलाता है या गौषाला में मात्र अपनी वेतन का सूक्ष्म अंष भी देता है तो भी वह संपूर्ण पापों से मुक्त होकर गौलोक का अधिकारी हो जाता है अतः हे कामियो! कुछ करना ही है तो गायों के लिए करो। क्यों व्यर्थ ही अपने जीवन को जीते जी मुर्दा बनाने का प्रयास कर रहे हो?

# अध्याय 25
# मृत्यु को प्राप्त अहंकारी

अहंकारी का नाश सदा ही होता है। प्रभु अपनी लीला में घमंडियों का सफाया अवश्य ही करते हैं। इसमें संदेह न करें। महात्मा वीरभद्र शिवके समान ही वेशभूषा धारण करके रथपर बैठकर उन गणोंके साथ चल पड़े। कारण समझ गए न–

1. उनकी एक हजार ( 1000 ) भुजाएँ थीं,
2. उनके शरीरमें नागराज लिपटे हुए थे।
3. वे प्रबल और भयंकर दिखायी पड़ रहे थे।
4. उनका रथ आठ लाख हाथ विस्तारवाला था।
5. उसमें दस हजार सिंह जुते हुए थे, जो प्रयत्नपूर्वक रथ को महान गति से खींच रहे थे।
6. उसी प्रकार बहुत से प्रबल सिंह, शार्दूल, मगर, मत्स्य और हजारों हाथी उनके पार्श्वरक्षक थ।
7. इस प्रकार जब दक्षके विनाशके लिये वीरभद्रने प्रस्थान किया, उस समय कल्पवृक्षोंसे फूलोंकी वर्षा होने लगी।

सभी गणोंने शिवजीके कार्यके लिये चेष्टा करनेवाले वीरभद्रकी स्तुति की और उस यात्राके उत्सवमें कुतूहल करने लगे ।

उसी समय

काली,

कात्यायनी,

ईशानी,

चामुण्डा,

मुण्डमर्दिनी,

भद्रकाली,

भद्रा,

त्वरिता तथा

वैष्णवी – इन नौ दुर्गाओं तथा समस्त भूतगणोंके साथ महाकाली दक्षका विनाश करनेके लिये चल पड़ीं।

शिवकी आज्ञाके पालक, डाकिनी, शाकिनी, भूत, प्रमथ, गुह्यक, कूष्माण्ड, पर्पट, चटक, ब्रह्मराक्षस, भैरव तथा क्षेत्रपाल आदि वीर दक्षके यज्ञका विनाश करनेके लिये तुरंत चल दिये ।

उसी प्रकार चौंसठ गणोंके साथ योगिनियोंका मण्डल भी सहसा कुपित होकर दक्षयज्ञका विनाश करनेके लिये निकल पड़ा। उन सभी गणोंके धैर्यशाली तथा महाबली मुख्य गणोंका जो समूह था, उसकी संख्याको सुनिए।

1. शंकुकर्ण (नामक ) गणेश्वर दस करोड़ गणोंके साथ ( इनके विषय में हम अति संक्षिप्त विवरण पहले दे चुके हैं )
2. केकराक्ष दस करोड़ गणोंके साथ तथा
3. विकृत आठ करोड़ गणोंके साथ चल पड़े
4. विशाख चौंसठ करोड़,
5. .पारियात्रिक नौ करोड़,
6. सर्वांकक छः करोड़,
7. वीर विकृतानन भी छः करोड़,
8. गणोंमें श्रेष्ठ ज्वालकेश बारह करोड़,
9. समदज्जीमान् सात करोड़,
10. दुद्रभ आठ करोड़,
11. कपालीश पाँच करोड़,
12. सन्दारक छः करोड़,
13. कोटि और कुण्ड एक–एक करोड़,
14. गणोंमें उत्तम विष्टम्भ चौंसठ करोड़ वीरोंके साथ,

15. सन्नाद, पिप्पल एक हजार करोड़,
16. आवेशन तथा चन्द्रतापन आठ– आठ करोड़,
17. गणाधीश महावेश हजार करोड़ गणोंके साथ,
18. कुंडी बारह करोड़ और
19. गणश्रेष्ठ पर्वतक भी बारह करोड़ गणोंके साथ दक्षयज्ञका विध्वंस करनेके लिये चल पड़े ।
20. काल, कालक और महाकाल सौ–सौ करोड़ गणको साथ लेकर दक्षयज्ञकी ओर चल पड़े।
21. अग्निकृत् सौ करोड़,
22. अग्निमुख एक करोड़,
23. आदित्यमूर्धा तथा घनावह एक–एक करोड़,
24. सन्नाह सौ करोड़,
25. गण कुमुद एक करोड़,
26. गणेश्वर अमोघ तथा कोकिल एक एक करोड़ और गणाधीश
27. काष्ठागूढ़,
28. सुकेशी,
29. वृषभ तथा
30. सुमन्त्रक चाँसट चौंसठ करोड़ गणोंको साथ लेकर चले।
31. गणों में श्रेष्ठ काकपादोदर साठ करोड़,
32. गणश्रेष्ठ सन्तानक साठ करोड़,
33. महाबल तथा पुंगव नौ–नौ करोड़,
34. गणाधीश मधुपिंग नौ करोड़ और
35. नील तथा पूर्णभद्र नब्बे करोड़ गणोंको साथ लेकर चल पड़े।
36. गणराज चतुर्वक्त्र सौ करोड़ गणोंको साथ लेकर चला ॥ गणेश्वर विरूपाक्ष, तालकेतु, षडास्य तथा गणेश्वर पंचास्य चौंसठ करोड़,
37. संवर्तक, स्वयं प्रभु कुलीश लोकान्तक,
38. दीप्तात्मा, दैत्यान्तक एवं
39. शिवके परम प्रिय गण श्रीमान् भृंगी, रिटि, अशनि, भालक और सहस्रक चौंसठ करोड़ गणोंके साथ चले।

40. महावीर तथा वीरेश्वर वीरभद्र भी शिवजीकी आज्ञासे बीसों, सैकड़ों तथा हजारों करोड़ गणोंसे घिरे हुए वहाँ पहुँचे।
41. वीरभद्र हजार करोड़ भूतों तथा तीन करोड़ रोमजनित श्वगणोंके साथ शीघ्र ही वहाँ पहुँच गये।

उस समय भेरियोंकी गम्भीर ध्वनि होने लगी। शंख बजने लगे। जटाहर, मुखों तथा श्रृंगोंसे अनेक प्रकारके शब्द होने लगे। उस महोत्सवमें चित्तको आकर्षित एवं सुखानुभूति उत्पन्न करनेवाले बाजोंके – शब्द चारों ओर व्याप्त हो गये। और शिव कृपा से दक्ष ढेर हो गया और मैं मैं चिल्लाने वाला बकरामुख होकर मैं मैं करता रहा। तथा

दक्ष का पक्ष लेने वाले सभी देवताओं को भयंकर दण्ड मिला ।

अतः हे मनुष्यों !

कभी भी अहंकार मत करना।

# अध्याय 26
# पुनः गर्भ में मत आना

गर्भसे निकलते ही जीव प्रभु की मायासे मोहित हो सब कुछ भूल जाता है।

देवता हो या कीट सभी यत्नपूर्वक अपने शरीरकी रक्षा करते हैं। करना भी चाहिए। मात्र प्रारब्ध के भरोसे न बैठे। पुरुषार्थ अवश्य करें। जो पुरुषार्थ नहीं करता उसका पुण्य फल भी अभी नहीं मिलता । पुरुषार्थ करते ही सारे पुण्यफल सामने आते हैं। स्त्रीकी योनिके भीतर जब पुरुष का वीर्य पड़ता है तो वह तत्काल उसके रक्तमें मिल जाता है। रक्तकी मात्रा अधिक होनेपर संतान माताके समान होती है और वीर्यकी अधिकता होनेपर संतानकी आकृति पितासे अधिक मिलती–जुलती है। इस कारण भी संतान की इच्छा करने वाले पिता अपने वीर्य को बलिष्ठ बनाने के लिए कम से कम छः माह तक अखंड ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। ऐसे वीर्य में ही दिव्य लोक के पार्षद या शिवगण प्रजा के हित के लिए जन्म लेते हैं अतः जब तक इस भूमि पर जितेन्द्रिय गृहस्थ होते रहेंगे जब तक ही संतों और महापुरुषों का जन्म होता रहेगा। जिस दिन से सभी गृहस्थ संयम का पालन त्याग देंगे उसी दिन से कलियुग अपना चरम प्रभाव दिखाना आरंभ कर देगा। महान गणों या पार्षदों को भूमि पर देखकर कलियुग का सामर्थ्य कम हो जाता है क्योंकि वह शिव और मुझ हरि से भय खाता है।

1. ऋतुकालके बाद यदि युग्म दिनोंमें गर्भाधान हो तो पुत्रका जन्म होता है और विषम दिनोंमें आधान होनेपर कन्याकी उत्पत्ति होती है।
2. ऋतुकालके बाद यदि युग्म दिनों में भी रवि, मङ्गल और गुरुका वार होनेपर आधान हो तो ही पुत्र होता है। तथा स्वर विज्ञान का ध्यान भी रखना चाहिए। । रविवार का व्रत रखने वाले पुत्र के इच्छुक मात्र मंगल या गुरु को अपनी पत्नी के पास जाकर उसको प्रसन्न करें तदोपरान्त पुत्र जन्म को यज्ञ का फल समझकर देवात्मा का आवाहन करके गर्भाधान करें। पति और पत्नी पूर्णतः निर्वस्त्र न

हों अन्यथा इस युग्म बेला से भी साधक और संयमी देव संतान का जन्म नहीं होगा।

3. अन्य वारों ( सोम बुध और शुक्र ) तथा ऋतुकालके बाद विषम दिनोंमें आधानसे कन्याका जन्म होता है। पर श्रावण मास में शिवार्चन में तत्पर सोमवार को गर्भाधान न करें। वह कन्या चाहें तो या तो सारा श्रावण संयम का पालन करें या बुध अथवा शुक्रवार को संसर्ग करें।
4. व्रत–उपवास की रात वीर्य का स्खलन व्रत–उपवास का नाश कर शाप भी देता है।

पहर से भविष्य–

जिसका जन्म पहले पहरमें होता है, वह अल्पायु होता है, दूसरे पहरमें जन्म लेनेवालेकी आयु मध्यम होती है तथा तीसरे पहरमें जिसका जन्म होता है, वह दीर्घायु होता है। चतुर्थ पहरमें जन्म लेनेवाला चिरंजीवी माना जाता है।

लग्न–

जिस क्षण या लग्नमें बालकका जन्म होता है, उस समयकी ग्रहस्थितिके अनुरूप उसका भावी जीवन हुआ करता है। वह पूर्वकर्मोंके अनुसार सुखी या दुःखी होता है। जैसे क्षणमें जन्म होता है, वैसे ही संतान होती है। प्रसवके क्षणकी चर्चा विद्वान् पुरुष ही करते हैं। रज–वीर्य परस्पर संयुक्त हो एक रातमें कललका आकार धारण करते हैं। फिर वह कलल दिनों– दिन बढ़ने लगता है। गरुड़ पुराण सारोद्धार के छटवें अध्याय का सार भी सुनें–

गरुड़ जी ने कहा हे केशव ! नरक से आया हुआ जीव माता के गर्भ में कैसे उत्पन्न होता है? वह गर्भवास आदि के दुःखों को जिस प्रकार भोगता है, वह सब भी मुझे बताइए।

विष्णुरुवाच–

भगवान विष्णु ने कहा –स्त्री और पुरुष के संयोग से जैसे मनुष्य की उत्पत्ति होती है, उसे मैं तुम्हें कहूँगा।

1.ऋतुकाल के आरंभ के तीन दिनों तक इन्द्र को लगी ब्रह्महत्या का चतुर्थांश रजस्वला स्त्रियों में रहता है, उस ऋतुकाल के मध्य में किये गये गर्भाधान के फलस्वरुप पापात्माओं के देह की उत्पत्ति होती है। इस गरुड पुराण सारोद्धार के अनुसार रजस्वला स्त्री प्रथम दिन चाण्डालिनी, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी और तीसरे दिन रजकी कहलाती है। नरक से आए हुए प्राणियों की ये तीन माताएँ होती हैं।

2. दैव की प्रेरणा से कर्मानुरोधी शरीर प्राप्त करने के लिये प्राणि पुरुष के वीर्य का आश्रय लेकर स्त्री के उदर में प्रविष्ट होता है।

1. एक रात्रि में वह शुक्राणु कलल के रूप में,
2. पाँच रात्रि में बुदबुद के रूप में,
3. दस दिनों में बेर के समान तथा
4. उसके पश्चात मांस पेशियों से युक्त अण्डाकार हो जाता है।
5. एक मास में सिर आ पाता है,
6. दो मास में बाहु आदि शरीर के सभी अंग, तीसरे मास में नख, लोम, अस्थि, चर्म तथा लिंगबोधक छिद्र उत्पन्न होते हैं।
7. चौथे मास में रस, रक्त, मांस, मेदा, अस्थि, मज्जा और शुक्र ये सात धातुएँ तथा
8. पाँचवें मास में भूख–प्यास पैदा होती है।
9. छठे मास में जरायु में लिपटा हुआ वह जीव माता की दाहिनी कोख में घूमता है और माता के द्वारा खाये–पीये अन्नादि से बढ़े हुए धातुओं वाला वह जन्तु विष्ठा–मूत्र के दुर्गन्धयुक्त गढ्ढे रूप गर्भाशय में सोता है।
10. वहाँ गर्भस्थ क्षुधित कृमियों के द्वारा उसके सुकुमार अंग प्रतिक्षण बार–बार काटे जाते हैं, जिससे अत्यधिक क्लेश होने के कारण वह जीव मूर्च्छित हो जाता है।
11. माता के द्वारा खाये हुए कड़वे, तीखे, गरम, नमकीन, रूखे तथा खट्टे पदार्थों के अति उद्वेजक संस्पर्श से उसे समूचे अंग में वेदना होती है और जरायु अर्थात झिल्ली से लिपटा हुआ वह जीव आँतों द्वारा बाहर से ढका रहता है।

12. उसकी पीठ और गरदन कुण्डलाकार रहती है।
13. इस प्रकार अपने अंगों से चेष्टा करने में असमर्थ होकर भी वह जीव पिंजरे में स्थित पक्षी की भाँति माता की कुक्षि में अपने सिर को दबाए हुए पड़ा रहता है। भगवान की कृपा से अपने सैकड़ों जन्मों के कर्मों का स्मरण करता हुआ वह गर्भस्थ जीव लम्बी श्वास लेता है। ऐसी स्थिति में भला उसे कौन सा सुख प्राप्त हो सकता है?
14. मांस–मज्जा आदि सात धातुओं के आवरण में आवृत वह ऋषिकल्प जीव भयभीत होकर हाथ जोड़कर विकल वाणि से उन भगवान की स्तुति करता है, जिन्होंने उसको माता के उदर में डाला है।
15. सातवें महीने के आरंभ से ही सभी जन्मों के कर्मों का ज्ञान हो जाने पर भी गर्भस्थ प्रसूतिवायु के द्वारा चालित होकर वह विष्ठा में उत्पन्न सहोदर (उसी पेट में उत्पन्न अन्य) कीड़े की भाँति एक स्थान पर ठहर नहीं पाता। ।
16. जीव कहता है– मैं लक्ष्मी के पति, जगत के आधार, अशुभ का नाश करने वाले तथा शरण में आये हुए जीवों के प्रति वात्सल्य रखने वाले भगवान विष्णु की शरण में जाता हूँ। हे नाथ ! आपकी माया से मोहित होकर मैं देह में अहं भाव तथा पुत्र और पत्नी आदि में ममत्वभाव के अभिमान से जन्म–मरण के चक्कर में फँसा हूँ।
17. मैंने अपने परिजनों के उद्देश्य से शुभ और अशुभ कर्म किये, किंतु अब मैं उन कर्मों के कारण अकेला जल रहा हूँ।
18. उन कर्मों के फल भोगने वाले पुत्र–कलत्रादि अलग हो गये। यदि इस गर्भ से निकलकर मैं बाहर आऊँ तो फिर आपके चरणों का स्मरण करुँगा और ऐसा उपाय करूँगा जिससे मुक्ति प्राप्त कर लूँ।
19. विष्ठा और मूत्र के कुएँ में गिरा हुआ जठराग्नि से जलता हुआ एवं यहाँ से बाहर निकलने की इच्छा करता हुआ मैं कब बाहर निकल पाऊँगा।
20. जिस दीनदयाल परमात्मा ने मुझे इस प्रकार का विशेष ज्ञान दिया है, मैं उन्हीं की शरण ग्रहण करता हूँ जिससे मुझे पुनः संसार के चक्कर में न आना पड़े। अथवा मैं माता के गर्भगृह से कभी भी बाहर

> जाने की इच्छा नहीं करता क्योंकि बाहर जाने पर पाप कर्मों से पुनः मेरी दुर्गति हो जाएगी। इसलिए यहाँ बहुत दुःख की स्थिति में रहकर भी मैं खेदरहित होकर आपके चरणों का आश्रय लेकर संसार से अपना उद्धार कर लूँगा।

श्रीभगवान बोले– इस प्रकार की बुद्धिवाले एवं स्तुति करते हुए दस मास के ऋषिकल्प उस जीव को प्रसूतिवायु प्रसव के लिये तुरंत नीचे की ओर ढकेलता है। प्रसूतिमार्ग के द्वारा नीचे सिर करके सहसा गिराया गया वह आतुर जीव अत्यन्त कठिनाई से बाहर निकलता है और उस समय वह श्वास नहीं ले पाता है तथा उसकी स्मृति भी नष्ट हो जाती है। पृथ्वी पर विष्ठा और मूत्र के बीच गिरा हुआ वह जीव मल में उत्पन्न कीड़े की भाँति चेष्टा करता है और विपरीत गति प्राप्त करके ज्ञान नष्ट हो जाने के कारण अत्यधिक रुदन करने लगता है।

गर्भ में, रुग्णावस्था में श्मशान भूमि में तथा पुराण के पारायण या श्रवण के समय जैसी बुद्धि होती है, वह यदि स्थिर हो जाय तो कौन व्यक्ति सांसारिक बन्धन से मुक्त नहीं हो सकता। कर्मभोग के अनन्तर जीव जब गर्भ से बाहर आता है तब उसी समय वैष्णवी माया उस पुरुष को मोहित कर देती है। उस समय माया के स्पर्श से वह जीव विवश होकर कुछ बोल नहीं पाता, प्रत्युत शैशवादि अवस्थाओं में होने वाले दुःखों को पराधीन की भाँति भोगता है।

उसका पोषण करने वाले लोग उसकी स्थिति इच्छा को जान नहीं पाते। अतः प्रत्याख्यान करने में असमर्थ होने के कारण वह अनभिप्रेत अर्थात विपरीत स्थिति को प्राप्त हो जाता है। स्वदज जीवों से दूषित तथा विष्ठा–मूत्र से अपवित्र शय्या पर सुलाए जाने के कारण अपने अंगों को खुजलाने में, आसन से उठने में तथा अन्य चेष्टाओं को करने में वह असमर्थ रहता है। जैसे एक कृमि दूसरे कृमि को काटता है, उसी प्रकार ज्ञानशून्य और रोते हुए उस शिशु की कोमल त्वचा को डाँस, मच्छर और खटमल आदि जन्तु व्यथित करते हैं।

इस प्रकार शैशवावस्था का दुःख भोगकर वह पौगण्डावस्था में भी दुःख ही भोगता है। तदनन्तर युवावस्था प्राप्त होने पर आसुरी सम्पत्ति (दम्भ, घमण्द

और अभिमान तथा क्रोध, कठोरता तथा अज्ञान दृ ये सब आसुरी–सम्पदा लेकर उत्पन्न हुए पुरुष के लक्षण हैं) को प्राप्त करता है। तब वह दुर्व्यसनों में आसक्त होकर नीच पुरुषों के साथ संबंध बनाता है और वह कामलम्पट प्राणी शास्त्र तथा सत्पुरुषों से द्वेष करता है। भगवान की माया रूपी स्त्री को देखकर वह अजितेन्द्रिय पुरुष उसकी भाव भंगिमा से प्रलोभित होकर महामोहरुप अन्धतम में उसी प्रकार गिर पड़ता है जिस प्रकार अग्नि में पतंगा। हिरन, हाथी, पतंगा, भौंरा और मछली दृ ये पाँचों क्रमशः शब्द, स्पर्श, रूप, गन्ध तथा रस दृ इन पाँच विषयों में एक–एक में आसक्ति होने के कारण ही मारे जाते हैं, फिर एक प्रमादी व्यक्ति जो पाँचों इन्द्रियों से पाँचों विषयों का भोग करता है, वह क्यों नहीं मारा जाएगा?

अभीप्सित वस्तु की अप्राप्ति की स्थिति में अज्ञान के कारण ही क्रोध हो आता है और शोक को प्राप्त व्यक्ति देह के साथ ही बढ़ने वाले अभिमान तथा क्रोध के कारण वह कामी व्यक्ति स्वयं अपने नाश हेतु दूसरे कामी से शत्रुता कर लेता है। इस प्रकार अधिक बलशाली अन्य कामीजनों के द्वारा वह वैसे ही मारा जाता है जैसे किसी बलवान हाथी से दूसरा हाथी। इस प्रकार जो मूर्ख अत्यन्त दुर्लभ मानव जीवन को विषयासक्ति के कारण व्यर्थ में नष्ट कर लेता है, उससे बढ़कर पापी और कौन होगा?

# अध्याय 27
# वह निंदक ब्रह्महत्यारा, पितृघाती और गुरुद्रोह

जो व्यक्ति किसी भी अन्य मनुष्य की निंदा करता है वह निंदक उस मनुष्य के पापों को भोगने के लिए दंडाधिकारियों द्वारा पीड़ित किया जाता है उस निंदक को भी वे सभी पापों को भोगना पड़ता है जो पाप उस मनुष्य के पास संचित हैं और यदि वो मनुष्य निष्पाप , निस्पृही और ब्रह्मवेत्ता  है और निंदक ने उसकी निंदा यदि कर दी तो वह निंदक ब्रह्महत्यारा, मदिरासेवी, पितृघाती और गुरुद्रोह के पाप के फल को कल्प कल्पांतरों तक सुनिश्चित ही भोगता है, मैं साधारण मनुष्य की निंदा से तो अल्प प्रायश्चित से उस निंदक को बचा भी सकता हूँ पर किसी ब्रह्मनिष्ठ विज्ञानी महात्माजनों की निंदा करने वालों को मैं कभी भी क्षमा नहीं करता उस निंदक का भजन और पूजन यज्ञ दान व्रतादि सब कुछ निष्फल हो जाते हैं, फिर चाहे उस निंदक के द्वारा निष्काम भक्ति ही संपन्न क्यों न हो। निंदक, कृतघ्न, ऋतुकाल भंगकर्ता और परस्त्री भावी पापियों और मूर्खों को मेरी कृपा किसी भी काल में (पापों का परिणाम भोगे बिना) प्राप्त नहीं हो सकती ।

धीर और संतसेवी पुरुष ही उनकी कृपा से प्राप्त पराविज्ञान के द्वारा जो आनन्दस्वरूप अमृत और अविनाशी ब्रह्म सर्वत्र प्रकाशित है उसको भलीभांति देख पाते हैं उस कार्य कारण रूप एक ब्रह्म की स्वयं में अनुभूति ही उसके दर्शन हैं इसी दर्शन से ही (दर्शन के उसी क्षण में ही) उनके हृदय की गाँठ रूपी अविद्या टूट जाती है, सारे संशय नष्ट हो जाते हैं और सारे के सारे शुभाशुभ कर्मों का समूह क्षीण हो जाता है।

वह अमृत रूप ब्रह्म ही आगे है, वही पीछे, वही दाहिनी ओर तथा बाँयी ओर है ऊपर नीचे भी मात्र वही है, हे देवी! यह संपूर्ण विश्व और इसका एक एक परमाणु भी मात्र ब्रह्म ही है, ब्रह्म के सिवाय दूसरी किसी भी वस्तु या जीव नाम की कल्पना ही भ्रांति है, रज्जु में सर्प दिखाई देना रज्जु का दोष नहीं अपितु दृष्टि का ही दोष है और यह दोष निंदा, कृतघ्नता, अहंकार आदि विकारों के कारण ही होता है यदि मानव इन सबसे दूर रहकर

अहंकारादि को मिटाकर उन संतों की सेवा और सुश्रूषा में लग जाये अथवा समयानुसार सेवा का प्रयास करते हुये उनके प्रति नतमस्तक होना आरंभ कर दे उनकी साक्षात् सेवा न कर सके और सतत् सान्निध्य न पा सके तो उनकी चरण रज, चरणपादुका और चरणामृत का पान करते हुये सभी ब्रह्मनिष्ठों की वाणी को सुनता रहे तो भी उनकी कृपा प्राप्त होने लगती है अन्यथा मुक्ति की कोरी कल्पना करने से या संतजनों को विस्मृत करके मात्र यात्रा और पूजा से विशेष लाभ नहीं होने वाला क्योंकि मैं पुनः कहता हूँ कि बिना गुरु (अपरोक्षानुभूति वाले अभिन्न ज्ञानी परमगुरु) के ज्ञान कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता। सैकड़ों योनियों को पार करके पृथ्वी पर दुर्लभ मानव योनि प्राप्त होती है। जो व्यक्ति अपने मंगल के लिए अर्थात् रक्षा के लिये अपेक्षित धर्म–कर्मानुष्ठान नहीं करता, केवल इन्द्रियों की तृप्ति में ही प्रयत्नशील रहता है, उसके हाथ में आया हुआ अमृतस्वरुप वह अवसर उसके प्रमाद से नष्ट हो जाता है। इसके बाद वृद्धावस्था को प्राप्त करके महान व्याधियों से व्याकुल होकर मृत्यु को प्राप्त करके वह पूर्ववत महान दुःखपूर्ण नरक में जाता है। इस प्रकार जन्म–मरण के हेतुभूत कर्मपाशों से बँधे हुए वे पापी मेरी माया से विमोहित होकर कभी भी वैराग्य को प्राप्त नहीं करते। शिव पुराण में श्रीहरि ने कहा है कि– यदि ज्ञान और वैराग्य चाहिए तो परम वैराग्य की प्रेरणा के लिए सब कुछ त्याग करके कैलास पर रहने वाले महादेव प्रभु के वीतरागी रूप का ध्यान करना ही एकमात्र औषधि है।

# अध्याय 28
# अपमान हो तो होने दो

जो विवेकी पुरुष अपमान से भी विक्षेपित न हो और जितेन्द्रिय व गुरुभक्त भी हो वह पुरुष धन्य है। जो स्वयं का अपमान होता हुआ देखकर भी सुखसे सोता और सुखसे जागता है वह महान है तथा उसी की बुद्धि कल्याणमयी है। परन्तु अपमान करनेवाला मनुष्य समय आने पर स्वयं नष्ट हो जाता है यह भी परम सत्य है।योगवेत्ता द्विजको चाहिये कि वह अपमानको अमृतके समान समझकर उससे प्रसन्नताका अनुभव करे और सम्मानको विषके तुल्य मानकर उससे घृणा करे। अपमान से उसके तपकी वृद्धि होती है और सम्मानसे क्षय। पूजा और सत्कार पानेवाला ब्राह्मण या क्षत्रिय आदि अथवा संत महात्मा दुही हुई गायकी तरह खाली हो जाता है। जैसे गौ घास और जल पीकर फिर पुष्ट हो जाती है, उसी प्रकार ब्राह्मण जप और होमके द्वारा पुनः ब्रह्मतेजसे सम्पन्न हो जाता है। संसारमें निन्दा करनेवालेके समान दूसरा कोई मित्र नहीं है, अपमानित पुरुषको चाहिये कि वह कभी अपमान करनेवालेकी बुराई न सोचे। अपने धर्मपर दृष्टि रखते हुए भी दूसरोंके धर्मकी निन्दा न करे। जिसका जैसा कर्म उसे वैसा ही फल मिलेगा। जो गंगा स्नान या शिव हरि की सेवा को धर्म न समझकर अपना मनमाना धर्म निर्मित कर चुके उन लोगों की पीठ पीछे ( परोक्ष में ) निन्दा भी न करें। जो महापापी हो उसकी भी परोक्ष में निन्दा न करें उसको प्रत्यक्ष समझाना कर्तव्य है पर पीठ पीछे निन्दा अधर्म है। मरना सबको है अतः पापी पुरुष की निन्दा करके उसके पाप का दशांश दण्ड क्यों भोगना चाहते हो?

परायी नारी का कामभाव से स्पर्श करने पर अथवा कामभाव से उसकी सांसों का स्पर्श होने पर भी दण्ड का विधान है पर यह दण्ड कालान्तर में किसी न किसी रूप में अवश्य मिलता है।

# अध्याय 29
# बस इतना सा संसार है भाई !

बस 30 से 60 वर्ष तक ही जिंदगी में सुख है। 29 साल तक तो पढ़ाई लिखाई या नौकरी के लिए पापड़ बेलने में ही 50 प्रतिशत जिंदगी का स्वाहा हो जाता है और इतने में 30–40 के आसपास साँस रुक गई तो सारे डिग्रा, डिग्री शूटकेश में रखे रखे मात्र रद्दी के कागज बन जाते हैं और 45 के आसपास भी मृत्यु हो तो संसार यही कहता है कि बेचारे का जीवन यूँ ही नष्ट हो गया काश! थोड़ा और जीता।

हे माँ जगदम्बा ! सच में जीवन का अंतिम सच आपने बहुत ही भयानक बनाया है जिसके बारे में सोचते ही करोड़ों की बिल्डिंग या लाखों की गाड़ी माड़ी खरीदने की इच्छा ही खत्म हो जाती है। कल एक 65 साल के वृद्ध अपनी 80 लाख की बिल्डिंग के बाहर खड़े–खड़े कुछ सोच रहे थे इतने में हम जा पहुँचे और वे बोले–

हे अंशभूतम् ! आज ऐसा लग रहा है कि तू ही सही था मैं सन् 2006 में तुझे टोकता था कि ये क्या लगा रखा है सब कुछ छोड़कर संन्यासी जैसा जीवन जी रहे हो, देखो हमारे ठाठ बाट........ पर हे अक्षयरुद्र ! आज ऐसा लग रहा है कि मैंने अपने छात्र को ही गलत समझा, कभी–कभी रसायन शास्त्र या भौतिक शास्त्र या गणित का अनुसंधान करने वाले ये भूल जाते हैं कि ये जो जगत दिख रहा है न, इसकी खुशियाँ मात्र 60–65 तक ही होती हैं और रिटायर के बाद यह शास्त्र भी अनाभ्यास से विस्मृत हो जाता है और सब कुछ सपने की तरह लगता है..... फिर तो बस रोना ही हाथ लगता है जिनसे अपेक्षा या आशा करते हैं वे भी उम्र के इस पड़ाव पर अपना असली रंग दिखाने लगते हैं, जिन बेटा और बहुओं पर हम फक्र करते हैं वे नाम मात्र के ही होते हैं वे विदेशों में नाम कमाने चले जाते हैं देश की खाकर विदेश में सेवा देते हैं, उनको बूढ़े माँ बाप की पीड़ा दिखती ही नहीं, रियल लाईफ में वे सब अपनी–अपनी जोरू के साथ ही रहना चाहते हैं 24 घंटे में से मुश्किल से 20 मिनिट ही पास में आते हैं सब अपने–अपने रंग में रंगे हैं।

तेरी स्थिति चाहे जो भी हो पर मैं तुझको देखकर आज संतुष्ट हूँ कि तूने जग की परवाह न करके वही किया जो यथार्थ था और मैं या मेरे जैसे, न जाने कितने इस आयु के क्षणों पर ऐसा ही सोचते हैं जैसा मैं सोच रहा हूँ कि मैंने 30 से 60 के बीच में आखिर किया ही क्या?

जो–जो जोड़ा वह मटेरियल..... आज मुझे देखकर हँस हँस कर लोटपोट होकर कह रहा है कि–"बेवकूफ ! तू मुझसे दूर होने वाला है फिर क्यों तूने मेरा संग्रह किया? औपचारिक तो ठीक था मौसमीय कष्ट से बचने के लिए थोड़ा बहुत होना भी चाहिये पर तूने तो यही सोच लिया कि 70 की अपेक्षा तू 7000 साल जियेगा......... पर तेरे प्रोफेसर गिरी का ज्ञान व्यर्थ ही चला गया।"

आज ऐसा मन कर रहा है कि मैं "हे अंशभूतम् ! हे अक्षय आनंद के धाम ! तुझे मैं पुष्पों का हार पहना दूँ" बस इसी से मेरी आत्मा को शांति मिल जायेगी।

हे अंशभूतम ! बस एक ही प्रार्थना है कि तूने मुझे ट्यूशन काल में जो धन दिया था वह दो साल की फीस ले ले ब्याज सहित, पर मेरे उद्धार के लिए प्रार्थना जरूर करना।

# अध्याय 30
# मोहरूपी माँ मृत्यु को प्राप्त हो गयी

यह यथार्थ सत्य है। भोगी, लोभी, यश और कीर्ति के भूखे वक्ताओं से आध्यात्मिक पथ प्रशस्त नहीं होने वाला।

भोगी और कीर्ति के भूखे वक्ताओं द्वारा जो भी मंत्र मिलता है वह मंत्र भी वैराग्य नहीं देता अपितु गुरु की भांति आसक्ति पैदा करता है। गुरु को देखकर शिष्य भी यही कहता है कि हमारे गुरु भी आलीशान गाड़ी बंगले में रहते हैं वे भी 15000–15000 वाले 10 जोड़ी वस्त्र अपनी अलमारी में सजाकर रखें हैं तो हम क्यों खादी के सस्ते वस्त्र पहनें हम क्यों साधारण नजर आयें।

यह ब्रह्म वैवर्त पुराण में पढ़ लेना कि भोगी, लोभी या स्त्री लम्पट गुरुओं का मंत्र रागनाशक नहीं होता।

**अहंकारसुतं वित्तभ्रातरं मोहमन्दिरम् आशापत्नीं त्यजेद्यावत्तावन्मुक्तो न संशयः।।**

**अहंकार रूपी पुत्र का,**

**वित्त (धन) रूपी भाई का,**

**मोहरूपी घर का तथा**

**आशा रूपी पत्नी का परित्याग**

**कर देने वाला शीघ्र ही मुक्त हो जाता है,**

**इसमें कुछ भी संशय नहीं है।।**

**मृता मोहमयी माता जातो बोधमयः सुतः।**
**सूतकद्वयसंप्राप्तौ कथं संध्यामुपास्महे।।**

मोहरूपी माँ मृत्यु को प्राप्त हो गयी और

ज्ञानरूपी पुत्र उत्पन्न हो गया है,

इस कारण मरण और जन्म के दो सूतक लगे हुए हैं,

तो फिर सन्ध्या–वन्दन आदि कार्य किस प्रकार किये जा सकते हैं ?

हृदाकाशे चिदादित्यः सदा भासति भासति।
नास्तमेति न चोदेति कथं संध्यामुपास्महे ।।१४।।

हृदयरूपी आकाश में चैतन्य रूप सूर्य सदैव प्रकाशित रहता है और फिर वह न अस्त होता है न उदय ही। तब फिर सन्ध्या किस प्रकार (कब) करे ? अब सोच लो जब वह 24 घंटे ही ब्रह्ममय है तो हे अक्षयरुद्र उससे तुम किसकी साधना करवाओगे? और कैसी संध्या? और आगे एकान्त को समझिये कि ज्ञान की दृष्टि से वास्तविक एकांत आखिर है क्या?

एकमेवाद्वितीयं यद्गुरोर्वाक्येन निश्चितम्।
एतदेकान्तमित्युक्तं न मठो न वनान्तरम् ॥

यहाँ पर सभी कुछ एक ही है, दूसरा कुछ भी नहीं है, ऐसा गुरु के उपदेश द्वारा निश्चय हो गया है। यह भावना ही एकान्त स्वरूप है, मठ अथवा वन का मध्य भाग एकान्त नहीं है । पर हे मानवों ज्ञान का भाव आ भी जाये तो आप ये न कहना कि –''हम संन्यास की एक अवधि पर भी घर गृहस्थी क्यों त्यागें?'' सामान्य जनता को महान प्रेरणा देने के लिए आप अपने चौथेपन के आश्रम का पालन अवश्य करें। यह मैत्रेय उपनिषद अद्भुत व परमोपनिषद ही है। वास्तव में अक्षयरुद्र का ही यह दर्पण है। यही एकत्व ही परम संन्यास है। न कि कर्म का त्याग करके वन में जाने मात्र को परम संन्यास अर्थात् अवधूत संन्यास कहा जा सकता है। पर हाँ वे संन्यासी कनिष्ठ संन्यासी अवश्य हैं और उन मूर्ख गृहस्थों से 100000 गुंना अधिक श्रेष्ठ हैं जो 65–70 के कवरबिज्जू होने पर भी डैली स्त्री के गंदे तन को चाट चाट कर सुअर बन रहे हैं। अब आगे हम क्या कहें आप सब का आई

क्यू बहुत तेज ही है। रात को नींद न आये तो देवी भागवत या शिवपुराण पढना चाहिए या नमः शिवाय पंचाक्षरी लिखो अथवा यूट्यूब पर प्रह्लाद की फिल्म देख लो;पर आप तो कुत्ता या सुअर जैसा बनकर नारी की देह के सभी गंदे छिद्रों को ही अमृत का सागर समझकर पीछे पडे रहते हो और उसे महा अशुद्ध करके नरक का टिकिट कटवा लेते हो।..................हे मेरे नीलकंठ ...................!!!!!!

असंशयवतां मुक्तिः संशयाविष्टचेतसाम्।
न मुक्तिर्जन्मजन्मान्ते तस्माद्विश्वासमाप्नुयात् ॥

जो मनुष्य ज्ञान के कारण संशयरहित हैं, वे ही मुक्ति को प्राप्त कर सकते हैं तथा जिन लोगों को संशय है, वे अनेक जन्मों के अन्त में भी मुक्त नहीं हो सकते। गीता में भी साफ साफ कहा है कि ज्ञान से बढकर शुद्ध करने वाला और कुछ भी नही। इसलिए गुरु एवं शास्त्र के अभिन्नात्मक वचनों पर पूर्ण विश्वास रखना चाहिए ॥

# अध्याय 31
# बंधन

जो नारी की आसक्ति से युक्त है वही बंधा हुआ है अन्य कोई बंधन नहीं मात्र नारी तन को भोगने की स्पृहा ही बंधन का पर्याय है।

एक उपनिषद कहता है कि स्त्री ही संसार है, जिसने स्त्री ( एक प्रकार का देह मात्र है यह और कुछ नहीं जिसे अलग अलग संज्ञा प्राप्त है ) को जीत लिया उसने निश्चय ही संसार को जीत लिया।

जो कंचन और कामिनी से ऊपर उठ गया वही शिवत्व को पा गया।

इस संसार में नारी को केवल माँ या पूजनीय रूप ( बहिन , भांजी भुआ भतीजी आदि ) मानने पर ही परमपद संभव है। हालांकि नारी तन में भोगभाव को दूर करने के अन्य उपाय भी हैं पर वे घृणास्पद है ।

एक उपाय वेदव्यास जी ने पद्मपुराण में बताया है जो साधारण ब्रह्मचारियों के लिए है।

और यही भाव ( पुरुष के प्रति भोग भाव ) नारियों के बंधन का पर्याय है।

# अध्याय 32
# अवधूतत्व

सबसे पहले तो यह जानना आवश्यक है कि यथार्थ परिभाषा शास्त्रों में ही वर्णित हैं, मनःकल्पित परिभाषाओं से क्या लाभ। अतः सुनें अवधूतोपनिषद से ही। और आपको एक बात और बता दें कि यह अवधूतत्व ही परम कैवल्य है। यही शाश्वत सुख है ,यही परमपद है सब कुछ ढूंढने पर यही अंत में मिलता है।

***<u>अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ</u>***

छन्दमुक्त भाव –

अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ
अपना आपा ढूंढ रहा हूँ
कहाँ खो गया वह शिवत्व
उसको ही अब ढूंढ रहा हूँ
मैं अक्षयरुद्र ढूंढ रहा हूँ
अपना आपा ढूंढ रहा हूँ।
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ। ।
जम्बू कदली खाये बहुत।
बिल्व मधूक भी  पूजे बहुत ।
पर अब स्वयं को पूज रहा हूँ।
यात्राओं पर लगा अब बिराम
अर्चन को किनारे रखकर
अपना आपा ढूंढ रहा हूँ।
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।

कीर्ति के लिए घूमा बहुत
चिताग्नि देखकर रो रहा हूँ।
एक दिन जलेगी मेरी भी।
भय से ही अब ढूंढ रहा हूँ।
अपना आपा ढूंढ रहा हूँ।
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।
कमाया मैने नाम बहुत
अब बस
अपने यथार्थ को ढूंढ रहा हूँ ।
जागा मैं देर से फिर भी
उठ उठकर ......और
दौड़ दौड़कर
घबराया सा मैं भी
अपना आत्मा ढूंढ रहा हूं।
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।
कथा पांडालो में है या ह्रदय में,
सोच सोचकर थक रहा हूँ ।
बोधक गुरुओं के पास भी,
और विहितों के पास भटका बहुत
पर जैसा था, वैसा ही रह रहा हूँ
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।
अपना निजता ढूंढ रहा हूँ।
वन और उपवन में भी,
तीर्थ और नदियों में भी ढूंढा,
पर न मिला अब तक,
वही ब्रह्म सुख ढूंढ रहा हूँ।

अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।
कहती उपनिषदें मत भटक
अब तू हे अक्षयरुद्र !
लगा गोता अपने में ही
मिलेगा वही जो ढूंढ रहा हूँ।
अपर शास्त्र देते बंधन
बार बार मैं कह रहा हूँ ।
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।
न है सुख मांस पिण्ड में
न ही सुख घर दारा में
बात बात पर हे श्रीशंकर रूप
यही स्मरण कर रहा हूँ
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ
सुख चाहने... गया पास उसके
पर पीछे उसके छिपा था दुख
अब दुख को ही भोग रहा हूँ
थक सा गया अब बहुत
अब तो शैय्या विश्राम की
वही चारपाई ढूंढ रहा हूँ ।
अपना आपा ढूंढ रहा हूँ।
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ
अब न जा तू वहाँ
जा अपने भीतर
जो हृदय में छिपा कहीं
है तू वही जो सर्वमय
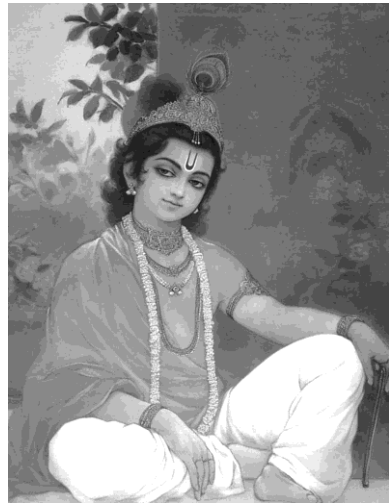
बार बार सत्य कह रहा हूँ।
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।
मेरे भाव में जो रमे
ऐसा शास्त्र ढूंढ रहा हूँ
मेरे साथ जो चले
उसकी वाक्य को ढूंढ रहा हूँ
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ ।
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।
गणेश और कृष्ण शिव आदि
इनका जो मूल है; है तू  वही
यह अद्वैत कह रहा हूँ।
सुख नहीं है क्षेत्र विशेष में
न ही आवरण पूजा में
गोता लगा अपने में
यही तो मैं कह रहा हूँ ।
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।
हे अक्षयरुद्र!
कल्मषों के पीछे जो छिपा गया
ऐसा स्वयं सिद्ध परमब्रह्म ढूंढ रहा हूँ
जो न मिलेगा रमणियों में
वह दिव्य तत्व मौजूद स्वयं में
उसी को तो ढूंढ रहा हूँ।
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।
चमड़ी और सौन्दर्य
केवल चमकीली बाह्य परत है
उसमें मैं क्या ढूंढ रहा हूँ ।

न मिलेगा उस आंत मांस में
अपना आपा ढूंढ रहा हूँ
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।
घर ने पा ली कीर्ति बहुत,
मान देने अब तो मैं ।
नींव का पत्थर ढूंढ रहा हूँ।
जो है आधार सुख का
वही तो अब मैं ढूंढ रहा हूँ ।
वही तो अब मैं ढूंढ रहा हूँ।
घटना चरित्र और लीला को
पढ़ लिया बहुत
मूर्ति आवरण तीरथ में ,
कहाँ वह तत्व ढूंढ रहा हूँ
अपनी निजता ढूंढ रहा हूँ।
अपना आपा ढूंढ रहा हूँ।

मरकर किसी लोक में द्वैतभाव बना रहे तो काहे की मुक्ति। इसके बारे में हमनें भैरवगीता में भी विस्तार से लिखा है।

अथ ह सांकृतिर्भगवन्तमवधूतं दत्तात्रेयं परिसमेत्य पप्रच्छ। भगवन्कोऽवधूतस्तस्य का स्थितिः किं लक्ष्म किं संसरणमिति । तं होवाच भगवो दत्तात्रेयः परमकारुणिकः॥ अक्षरत्वाद्वरेण्यत्वाद्भूतसंसारबन्धनात् । तत्त्वमस्यादिलक्ष्यत्वादवधूत इतीर्यते ॥

सांकृति ने भगवान् दत्तात्रेयजी के समीप जाकर पूछा– 'हे भगवन् ! अवधूत कौन है? उसकी स्थिति किस तरह की होती है? उसका लक्षण किस प्रकार का होता है? तथा उसका संसार (सांसारिक व्यवहार) किस प्रकार का होता है ?' उनके इन प्रश्नों को सुनकर परम कृपालु भगवान् दत्तात्रेयजी ने कहा–

अ– जो अक्षर अर्थात् अविनाशी क्षय रहित हो,

व–वरण करने योग्य हो,

धू –संसार रूपी बन्धनों से रहित हो ; (धूतसंसारबन्धन का धू )

त– 'तत्त्वमसि' आदि वाक्यों के लक्ष्यार्थ बोध से युक्त हो,

उसे ही अवधूत (अक्षर का 'अ', वरेण्य का 'व', धूतसंसारबन्धन का 'धू' तथा तत्त्वमस्यादि लक्ष्य का 'त' लेने से 'अवधूत') कहा जाता है ॥

यो विलङ्घया श्रमान्वर्णानात्मन्येव स्थितः सदा ।
अतिवर्णाश्रमी योगी अवधूतः स कथ्यते ॥

**जो योगी पुरुष आश्रम एवं वर्ण व्यवस्था से ऊपर उठकर**
**अपने ब्रह्मभाव में ही सदैव स्थित रहता हो,**
**वह वर्णाश्रम रहित ; वह अतिवर्णाश्रमी**
**योगी पुरुष 'अवधूत' कहा जाता है ॥**

शिव पुराण में इस अवधूत को चारों वर्णों का एक मात्र परम स्वामी महावर्णी की संज्ञा प्राप्त है। जो पांच प्रकार के संन्यासियों से बढ़कर साक्षात् शिव स्वरूप ही है।

अवधूत तो कुटिचक्र, बहूदक, हंस, परमहंस और तुरीयातीत नामक संन्यासी से भी अधिक श्रेष्ठ है। इनके आगे या इनसे उलझकर जो मूर्ख मनुष्य अपने आपको पद, धन या द्विजत्व के कारण अहंकार करता है वह नष्ट हो जाता है यह महावर्णी

परब्रह्म से एकाकार ( सोऽहम् में स्थित यथार्थ तद्भावित) होने से साक्षात् विष्णु, साक्षात् रुद्र और साक्षात् ब्रह्मा का ही स्वरूप है जिसके दर्शन मात्र से वह फल मिल जाता है जो फल हजारों वर्षों तक जितेन्द्रिय व वेदपाठी ( अपरविद्या से युक्त) ब्राह्मणों की सेवा से भी नहीं मिलता और ये

अवधूत प्रायः प्रत्यक्ष रुद्रगण ही होते हैं जो इनको प्राकृत समझकर पद, ऐश्वर्य, धन, रूप अथवा औपचारिक अज्ञानियों की आवरणात्मक व्यवस्था के कारण हीन कहता है वह अगले द्वादश वर्ष में श्रीहीन और रोगी हो जाता है ।

# अध्याय 33
# ईश्वर, संत और सफलता

कुछ लोग ईश्वर का इस्तेमाल धन के लिये करते हैं कुछ लोग कथा को माध्यम बनाकर कीर्ति के लिए और कुछ लोग अभिषेक,पूजा, पाठ आदि से मात्र दुख मिटाना चाहते है और वे अधिकांश मंदिर की ओर जाते हैं उन सकामियों को संत माहात्म्य का ज्ञान नहीं होता ।

वे मात्र सकाम भाव तक सीमित होने से सुख की वस्तुओं को पाकर तथा कुछ काल तक पुण्य लोक पाकर पुनः धरती पर जन्म लेने पर विवश हो जाते हैं।

बिना साधन चतुष्ट्य के कोई भी मुक्त नहीं हो सकता भले ही सहस्र बार सकाम भाव से अभिषेक या पूजा पाठ करता रहे।

इन सभी क्रियाओं को निष्काम भाव से करने पर भी शीघ्र शम दम की सिद्धि नहीं होती।

शीघ्र वैराग्य के लिए–

मंदिर के साथ साथ एकाध माह में श्मशान की जलती चिता को देखना भी अनिवार्य है और परम त्यागी महात्मा के वचन सुनना भी अनिवार्य है।

वैराग्य की सिद्धी उन कथा वाचकों से कभी भी संभव नहीं जो 10–20 हजार वाले वस्त्र पहनकर कथा करते हैं और मूंछ मुड़वाकर जुल्फों की सेटिंग करवाने के लिए पौरुषिक पार्लर का इस्तेमाल करते हैं।

यह यथार्थ सत्य है। भोगी, लोभी, यश और कीर्ति के भूखे वक्ताओं से आध्यात्मिक पथ प्रशस्त नहीं होने वाला।

भोगी और कीर्ति के भूखे वक्ताओं द्वारा जो भी मंत्र मिलता है वह मंत्र भी वैराग्य नहीं देता अपितु गुरु की भांति आसक्ति पैदा करता है। गुरु को देखकर शिष्य भी यही कहता है कि हमारे गुरु भी आलीशान गाड़ी बंगले में रहते हैं वे भी 15000–15000 वाले 10 जोड़ी वस्त्र अपनी अलमारी में सजाकर रखें हैं तो हम क्यों खादी के सस्ते वस्त्र पहनें हम क्यों साधारण नजर आयें।

यह ब्रह्म वैवर्त पुराण में पढ़ लेना कि भोगी, लोभी या स्त्री लम्पट गुरुओं का मंत्र रागनाशक नहीं होता।

जाना सबका निश्चित है अतः काम करो तो निष्काम भाव से और कल्याणप्रद।

भाव हो तो कल्याणकारी।

विचार हो तो कल्याणकारी।

दृष्टिकोण भी हो तो कल्याणकारी।

मित्रों की तरक्की से भी जलें न । उनको छोटे भाई समझकर और भी आशीर्वाद दें। पर हाँ स्वयं भी अवसरों का उपयोग करें ताकि आपकी पत्नी और बच्चें भी सुविधापूर्ण जीवन जियें। बांकि इनका भाग्य। आपका कार्य प्रयास मात्र है पर इनके भाग्य में सुख होगा तो आपको भी सफलता अवश्य मिलेगी।

# अध्याय 34
# दूर के ढोल सुहावने

दूर के ढोल सुहावने होते हैं पर अति समीप आने पर दूर भागने का मन करता है। कारण – कभी कभी वे भयंकर कटीले , कान का पर्दा फाड़ने वाले या दुर्गंध से घनीभूत, मेढ़क के सड़े फटे पेट की बदबूदार वाले ही होते हैं। ऐसा हम ही नहीं शिव गीता कहती है ।

ऐसा ही संसार के साथ में है । यह उपदेश अनेक चतुर्युगी पूर्व का है न कि इस चतुर्युगी के त्रेता का। तथा पद्मपुराण में भगवान वेदव्यास जी ने लगभग 5000वर्ष पूर्व लिखा पर यथार्थ है। स्पष्टीकरण नहीं करेंगे एक मर्यादा है। पर हे श्रीशंकर ! आश्चर्य है कि संसार यह सब जानकर भी उस ढोल को बजाने का मन करता है और बजाकर आजीवन ही स्वयं बजता है व फटता फूटता है।

– अक्षयरुद्र अंशभूतशिव

नाश केवल नाश। कामी और स्त्रीलम्पट नर का नाश ही होता है। नारी मोह भयंकर घातक है सिद्ध कीजिए?

उत्तर– पुरुष और नारी का पतन एक दूसरे के आकर्षण से ही होता है और इस आकर्षण का प्रमुख कारण वासना व मोह ही है । एक कथा सुनें जो समुद्र मंथन की है,सुनें –

दैत्यों और दानवों से हारने पर देवता विष्णु भगवान की शरण में गये तब कुछ मुख्य रहस्य की बातें करके भगवान ने कहा कि –देव, दानव और दैत्य सब मिलकर सब प्रकारकी ओषधियाँ ले आये और उन्हें क्षीर सागरमें डालकर मन्दराचलको मथानी एवं वासुकि नागको नेती बनाकर बड़े वेग से मन्थन करने लगे। भगवान् विष्णुकी प्रेरणासे सब देवता एक साथ रहकर वासुकिकी पूँछकी ओर हो गये और दैत्योंको उन्होंने वासुकिके सिरकी ओर खड़ा कर दिया।

यह कथाक्रम आगे सुनाते हुए पुलस्त्य बोले – हे भीष्म!

वासुकि के मुखकी साँस तथा विषाग्निसे झुलस जानेके कारण सब दैत्य निस्तेज हो गये। क्षीर–समुद्रके बीचमें ब्रह्मवेत्ताओंमें श्रेष्ठ भगवान् ब्रह्मा तथा महातेजस्वी महादेवजी कच्छप रूपधारी श्रीविष्णुभगवान्की पीठपर खड़े हो अपनी भुजाओंसे कमलकी भाँति मन्दराचलको पकड़े हुए थे तथा स्वयं भगवान् श्रीहरि कूर्मरूप धारण करके क्षीर– सागरके भीतर देवताओं और दैत्योंके बीचमें स्थित थे। ख्वे मन्दराचलको अपनी पीठपर लिये डूबनेसे बचाते थे।, तदनन्तर जब देवता और दानवोंने क्षीर–समुद्रका मन्थन आरम्भ किया, तब पद्म पुराण के

सृष्टि खण्ड के अनुसार–

1. पहले–पहल उससे देवपूजित सुरभि ( कामधेनु ) का आविर्भाव हुआ, जो हविष्य (घी–दूध) की उत्पत्तिका स्थान मानी गयी है।
2. तत्पश्चात् वारुणी (मदिरा) देवी प्रकट हुई, जिसके मदभरे नेत्र घूम रहे थे। वह पग–पगपर लड़खड़ाती चलती थी। उसे अपवित्र मानकर देवताओंने त्याग दिया। तब वह असुरोंके पास जाकर बोली– 'दानवो! मैं बल  और शक्ति प्रदान करनेवाली देवी हूँ, तुम मुझे ग्रहण करोगे तो मैं तुमको सुख दूँगी। तो' दैत्योंने उसे ग्रहण कर लिया।
3. इसके बाद पुनः मन्थन आरम्भ होनेपर पारिजात ( कल्पवृक्ष) उत्पन्न हुआ, जो अपनी शोभासे देवताओंका आनन्द बढ़ानेवाला था ।
4. तदनन्तर साठ करोड़ अप्सराएँ  प्रकट हुई अर्थात् 60गुणा$10^7$ महान सौन्दर्य से परिपूर्ण जिनके देह की सुगंध चारों ओर व्याप्त हो गई पर इनकी आसक्ति से जीव नष्ट हो जाता है वे दिव्य रूप वाली अप्सराएँ प्रकट हुई, जो देवता और दानवोंकी सामान्यरूपसे भोग्या भी हैं। जो लोग पुण्यकर्म करके देवलोकमें जाते हैं, उनका भी उनके ऊपर समान अधिकार होता है। यह पद्म पुराण के सृष्टि खण्ड में वर्णित है।

5. अप्सराओंके बाद शीतल किरणोंवाले चन्द्रमाका प्रादुर्भाव हुआ, जो देवताओंको आनन्द प्रदान करनेवाले थे। उन्हें भगवान् शंकरने अपने लिये माँगते हुए कहा– 'देवताओ! ये चन्द्रमा मेरी जटाओंके आभूषण होंगे, अतः मैंने इन्हें ले लिया।'ब्रह्माजीने 'बहुत अच्छा' कहकर शंकरजीकी बातका अनुमोदन किया।
6. तत्पश्चात् कालकूट नामक भयंकर विष प्रकट हुआ, उससे देवता और दानव सबको बड़ी पीड़ा हुई। तब महादेवजीने स्वेच्छासे उस विष को लेकर पी लिया। उसके पीनेसे उनके कण्ठ मैं नीला दाग पड़ गया, तभी से ये महेश्वर नीलकण्ट कहलाने लगे। क्षीर–सागरसे निकले हुए उस विष का जो अंश पीनेसे बच गया था, उसे नागों (सर्पों ) ने ग्रहण कर लिया। इससे पूर्व सर्पों के पास विष नहीं था।
7. तदनन्तर अपने हाथमें अमृतसे भरा हुआ कमण्डलु लिये धन्वन्तरिजी प्रकट हुए। वे स्वेतवस्त्र धारण किये हुए थे। वैद्यराजके दर्शनसे सबका मन स्वस्थ एवं प्रसन्न हो गया।
8. इसके बाद उस समुद्रसे उच्चौःश्रवा घोड़ा और
9. ऐरावत नामका हाथी– ये दोनों क्रमशः प्रकट हुए।
10. इसके पश्चात् क्षीरसागरसे लक्ष्मीदेवीका प्रादुर्भाव हुआ, जो खिले हुए कमलपर विराजमान थीं और हाथमें कमल लिये थीं। उनकी प्रभा चारों ओर छिटक रही थी। उस समय महर्षियोंने श्रीसूक्तका पाठ करते हुए बड़ी प्रसन्नताके साथ उनका स्तवन किया। साक्षात् क्षीर–समुद्रने खदिव्य पुरुषके रूपमें, प्रकट होकर लक्ष्मीजीको एक सुन्दर माला भेंट की, जिसके कमल कभी मुरझाते नहीं थे। विश्वकर्माने उनके समस्त अंगोंमें आभूषण पहना दिये। स्नानके पश्चात् दिव्य माला और दिव्य वस्त्र धारण करके जब वे सब प्रकारके आभूषणोंसे विभूषित हुई, तब इन्द्र आदि देवता तथा विद्याधर आदिने भी उन्हें प्राप्त करनेकी इच्छा की। तब ब्रह्माजीने भगवान् विष्णुसे कहा– 'वासुदेव! मेरे द्वारा दी हुई इस लक्ष्मीदेवीको आप ही ग्रहण करें। मैंने देवताओं और दानवोंको मना कर दिया है–वे इन्हें पानेकी इच्छा नहीं करेंगे। आपने जो स्थिरतापूर्वक इस समुद्र मन्थनके कार्यको सम्पन्न किया है, इससे आपपर मैं बहुत

सन्तुष्ट हूँ।' यो कहकर ब्रह्माजी लक्ष्मीजीसे बोले–'देवि! तुम भगवान् केशवके पास जाओ। मेरे दिये हुए पतिको पाकर अनन्त वर्षोंतक आनन्दका उपभोग करो।'

ब्रह्माजीके ऐसा कहनेपर लक्ष्मीजी समस्त देवताओंके देखते–देखते श्रीहरिके वक्षःस्थलमें चली गयीं और भगवान् से बोलीं– 'देव। आप कभी मेरा परित्याग न करें। सम्पूर्ण जगत्के प्रियतम! मैं सदा आपके आदेशका पालन करती हुई आपके वक्षःस्थलमें निवास करूँगी।' यह कहकर लक्ष्मीजीने कृपापूर्ण दृष्टिसे देवताओंकी ओर देखा, इससे उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। इधर लक्ष्मीसे परित्यक्त होनेपर दैत्योंको बड़ा उद्वेग हुआ। उन्होंने झपटकर धन्वन्तरिके हाथसे अमृतका पात्र छीन लिया। तब विष्णु जी ने सोचा कि–

1. **"कामी लोग केवल नारी की चाह से ही मारे जाते हैं और नारी के लिए अमृत, सुख और ऐश्वर्य भी त्याग देते हैं अतः मैं उनकी ही कमजोरी को अपना अस्त्र शस्त्र बनाकर उनका नाश कर दूँगा।"**
2. तो विष्णु जी ने मायासे सुन्दरी स्त्रीका रूप धारण करके दैत्योंको लुभाया और उनके निकट जाकर कहा –'यह अमृत का कमण्डलु मुझे दे दो ।'
3. तब सोचो क्या हुआ होगा?
4. सही सोचा
5. नारी की तिरछी चितवन पर तो अच्छे से अच्छा साधक मारा जाता है ,
6. वहाँ मिलता कुछ नहीं , मात्र आधी घड़ी का सुख होता है और सारा अमृत नष्ट हो जाता है।
7. तथा बंधन में पड़कर जीव आजीवन संघर्ष में पिसता है।
8. अपनी स्वतंत्रता को बेंच तक डालता है।
9. सदा ही रोते रोते यही सोचता है कि हाय हाय मैनें मात्र 1 घडी के सुख के लिए पूरी जिंदगी तबाह कर डाली। और यदि वह पतिव्रता हो तो फिर भी ठीक है पर अब का करुं मैं।
10. अतः उस त्रिभुवनसुन्दरी रूपवती नारी तन को देखकर दैत्योंका चित्त काम के वशीभूत हो गया।

11. उन्होंने चुपचाप बिना कुछ कहे,
12. बिना कुछ सोचे
13. बिना कुछ तर्क कुतर्क के वह अमृत.............. उस सुन्दरी को देखते देखते, उसके रूप का दर्शन रस पान करते करते उसी के हाथमें दे दिया और स्वयं उसका आकर्षक मुँह और उसके अंग अवयव ताकने लगे इस ताकने के चक्कर में अमृत छोड डाला।
14. ( बस यही था पतन का कारण )

यहाँ एक और बात सिद्ध हो रही है कि भगवान विष्णु की आत्मा ने नारी तन धारण कर लिया कभी नृसिंह तन और कभी वे अन्य तन धारण कर लेते हैं तो भी वे विष्णु ही कहे जाते हैं अर्थात् उस परम आत्मा का मात्र तन ही बदल बदलकर अनेक रूप में पूज्यनीय हो जाता अतः मात्र तन को विष्णु संज्ञा नहीं दे सकते उनकी आत्मा के कारण ही यह विष्णु तन या वामन तन अथवा मोहनी तन पूजित होता है वे विष्णु तो रूप रहित ही हैं।

खैर ...

दानवोंसे अमृत लेकर भगवान्ने देवताओंको दे दिया और इन्द्र आदि देवता तत्काल उस अमृतको पी गये। यह देख दैत्यगण भाँति–भाँतिके अस्त्र–शस्त्र और तलवारें हाथमें लेकर देवताओंपर टूट पड़ेय परन्तु देवता अमृत पीकर बलवान् हो चुके थे, उन्होंने दैत्य–सेनाको परास्त कर दिया। देवताओंकी मार पड़नेपर दैत्योंने भागकर चारों दिशाओंकी शरण ली और कितने ही पातालमें घुस गये। तब सम्पूर्ण देवता आनन्दमग्न हुये।

हालाँकि यह अप्सराओं की कथा लिंग पुराण में आगे वर्णित है जिसमें भगवान विष्णु जब दैत्यों को मारने के लिए पाताल में घुसे तब उन अप्सराओं ( समुद्र से प्रकट) से मोह हो गया और वे अप्सराओं के पति भी बने अर्थार्त अनेक बच्चों के वे पिता कहलाए। पर संसार की सुधि भूल गए तब शंकर भगवान ने वृषभ अवतार लेकर इनसे युद्ध किया और परास्त करके पालन की पुनः प्रेरणा दी ।

अतः सार यही है कि नारी के लिए जो आकर्षण या मोह है न, वह माता, बहिन या पुत्री रूप में हो तो वासना का जनक नहीं पर भोग्या रूप हो तो वह भ्रष्ट हो जाता है।

# अध्याय 35
# काम वासना अंधी

काम वासना अंधी होती है यह अच्छे अच्छे को भी नहीं छोड़ती।

महान तपस्या करने पर, रात दिन जप तप और व्रत के बाद नारद जी को ब्रह्मा जी का पुत्र तो बना दिया गया पर नारद जी का काम या अहंकार न छूट सका तो साधारण मनुष्य का कैसे छूटेगा। हे भगवान!

और तो और काम की प्रबल इच्छा अपूर्ण रहने पर वे नारद श्री भगवान को शाप भी दे बैठै।

सुनें शिव पुराण की एक संहिता की वाणी –

नारद ने गुस्से में आकर प्रभु विष्णु ( जिन हरि का हर कार्य जनकल्याण में निहित होता है उन विष्णु ) से कहा –

1.अबतक किसी तेजस्वी पुरुषसे तुम्हारा पाला नहीं पड़ा था, इसलिये आजतक तुम निडर बने हुए हो, परंतु हे विष्णो! अब तुम्हें अपने द्वारा किये गये कर्मका फल मिलेगा ।

( यहाँ एक बात सिद्ध होती है कि उपासक या भक्त की जो भी इच्छा हो वह भगवान को पूरी कर देना चाहिए वह कामना चाहे अच्छी हो या मध्यम या कैसी भी अन्यथा वह प्रभु पर ही क्रोध करता है, भाड़ में जाये ऐसे भक्तों का कल्याण, जो भगवान को ही नहीं छोड़ते)

भगवान् विष्णुसे ऐसा कहकर मायामोहित नारद मुनि अपने ब्रह्मतेजका प्रदर्शन करते हुए क्रोधसे खिन्न हो उठे और शाप देते हुए बोले–

हे विष्णो! तुमने स्त्रीके लिये मुझे व्याकुल किया है। (स्त्रीकृते व्याकुलं विष्णो माम.......)

तुम इसी तरह सबको मोहमें डालते रहते हो,यह कपटपूर्ण कार्य करते हुए तुमने जिस स्वरूपसे मुझे संयुक्त किया था, उसी स्वरूपसे हे हरे ! तुम मनुष्य हो जाओ ।

3.और स्त्रीके लिये दूसरोंको दुःख देनेवाले तुम भी स्त्रीके वियोगका दुःख भोगो।

4. तुमने जिन वानरोंके समान मेरा मुँह बनाया था, वे ही उस समय तुम्हारे सहायक हों ।

5. तुम दूसरोंको स्त्री– विरहका, दुःख देनेवाले हो, अतः स्वयं भी तुम्हें स्त्रीके वियोगका दुःख प्राप्त हो और अज्ञानसे मोहित मनुष्योंके समान तुम्हारी स्थिति हो।

6.छल–कपटमें ही रत रहनेवाले हे हरे ! यदि महेश्वर रुद्र दया करके विष न पी लेते, तो तुम्हारी सारी माया उसी दिन समाप्त हो जाती ।

(चेत्पिबेन्न विषं रुद्रो दयां कृत्वा महेश्वरः ।
भवेन्नष्टाखिला माया तव व्याजरते हरे ॥)

तब

अज्ञानसे मोहित हुए नारदजीने मोहवश श्रीहरिको (हरिहर में भेद करके) जब इस तरह शाप दिया, तब उन विष्ण ने
शम्भुकी मायाकी प्रशंसा करते हुए उस शाप को स्वीकार कर लिया ।

अद्यापि निर्भयस्त्वं हि सङ्गं नापस्तरस्विना ।
इदानीं लप्स्यसे विष्णो फलं स्वकृतकर्मणः ॥ १३

इत्थमुक्त्वा हरिं सोऽथ मुनिर्मायाविमोहितः ।
शशाप क्रोधनिर्विण्णो ब्रह्मतेजः प्रदर्शयन् ॥ १४

स्त्रीकृते व्याकुलं विष्णो मामकार्षीर्विमोहकः ।
अन्वकार्षीः स्वरूपेण येन कापट्यकार्यकृत् ॥ १५

तद्रूपेण मनुष्यस्त्वं भव तद्दुःखभुग्घरे ।
यन्मुखं कृतवान्मे त्वं ते भवन्तु सहायिनः ॥ १६

त्वं स्त्रीवियोगजं दुःखं लभस्व परदुःखदः ।
मनुष्यगतिकः प्रायो भवाज्ञानविमोहितः ॥ १७

जिनको किसी भी प्रकार की भोगासक्ति है वह अभी संचित पापों से मुक्त नहीं हुआ न ही विशेष कृपा है उस पर। अशान्त चित्त का कारण भोगों की चाह ही है। फिर चाहे वह भोग छोटा सा रसगुल्ला हो चाहे बड़ा सा वाहन या 5साल का पद या अन्य ऐश्वर्य की भुक्को।..

**महादेव की सौम्यता कितनी मधुर है। पर नर है तो बडा मूर्ख जो पतितों की तरह रहना चाहता है।** नारी को वासना भाव से देखने पर वह पतित कर देती है। सुन्दर चेहरा और आकर्षक देह भी पूर्व जन्म के पुण्य का फल है पर पार्लर का चेहरा या मायाबद्ध रूप भ्रांति देने वाला और यह पार्लर का फेस तो झूठे यश के लिए बनाया गया नकली मुखौटा मात्र है। अतः जो विवाह करना चाहते हैं वे प्रकृति के द्वारा दिया गिफ्ट ( जैसा भी हो ) स्वीकार करें । और नारियां भी मिथ्या कीर्ति के लिए पार्लर का प्रयोग न करें। वैसे भी हे पुरुषों !आप मात्र आकर्षक चमड़ी देखकर विवाह करते हो तो यह आपके लिए 99 प्रतिशत घातक सिद्ध ही होगा । सुनें –

धर्मशास्त्रों में खासकर भविष्य पुराण में विवाह के लिए पुरुष को नारी में कुछ अनिवार्य आचरण आदि देखना चाहिए। तभी विवाह करना चाहिए ऐसा लिखा है,अन्यथा वह विवाह आपको नष्ट कर डालता है। ( कन्या सर्व गुण संपन्न हो तो वह भी पुरुष में गुण देखकर ही विवाह करे अन्यथा आजीवन.... रोती रहोगी और बाप मेहतारी भी रोयेंगे अतः मात्र नौकरी को ही न देखें उस वर के लक्षण भी देखें

और जल्दीबाजी में शादी न करें अपनी गुड़िया की )

1. अपना वर्ण
2. उत्तम कुल (कन्या के माता पिता ने परपुरुष या परनारी को न भोगा हो, कैसी ने ब्रह्महत्या न की हो उस परिवार में )
3. गोत्र ( अपना न हो, मामा का न हो )

4. यह तीनों मैच करने पर उसके संस्कार तो अनिवार्य हैं ही, क्योंकि अच्छे कुछ, अच्छे वर्ण और गोत्र नियम के बाद भी सुसंस्कारी युवती मिलना आजकल आसान नहीं। आजकल तो 90 प्रतिशत पुरुष और 90 प्रतिशत किशोरियाँ विवाह से पहले ही मुँह काला कर चुके होते हैं और सपअम पद तमसंजपवदीपचे... में रह रही लड़की को यदि वह साथी ठुकरा दे, विवाह न करें तो वह दूषित युवती विवाह करने के लायक नहीं होती, भला पराये पुरुष के संग संसर्ग करने वाली को कौन अपनायेगा। इसके दो कारण भी है जिस युवती ने अपनी वासना की पूर्ति विवाह से पहले ही कर डाली उसकी गारंटी नहीं कि वह आपके साथ सारी जिंदगी काटे तथा संसर्ग करने वाले पुरुष के 50 प्रतिशत पाप वह लेकर आती है जो आपको भोगना पड़ता है। और गांव की भाषा में ऐसी नारी को क्या कहते हैं यह लिखना मर्यादा के बाहर हो जायेगा।
5. अब बात आती है सुन्दर और आकर्षक रूप की; पर यह अनिवार्य नहीं।संस्कारी का चेहरा और संपूर्ण देह आकर्षक हो तो यह भी आपका अतिरिक्त पुण्य ही है । पर संस्कारी यदि साँवली भी हो तो अन्य की चाह में समय नष्ट न करें। यदि यह अमृत ( संस्कारी ) हाथ से निकल गया तो कोई गारंटी नहीं कि दूसरी सुन्दर संस्कारी ही हो।
6. भविष्य पुराण में रोग की भी बात मिलती है यदि कन्या को कोई गंभीर रोग है तो भी कुछ कारण बताये हैं कि ऐसी किशोरी(कन्याध वधु ध युवती) से भी विवाह न करें ।

मात्र दाम्पत्य सुख में रत रहकर विषयभोगों से इन्द्रियों को दिन रात तृप्त करता रहता है और नारी का चमड़ीगत सुंदर मुख जो पसीने की बूंद से और भी आकर्षक प्रतीत होता है और उस पर भी उसकी तिरछी चितवन जिसको देख देखकर वह सब कुछ भूल जाता है । अरे! उसे उस समय अपने बूढे माता पिता की ही याद नहीं आती फिर ठाकुर जी की कहाँ आयेगी भाई!और फिर गंदा खेल आरंभ होता है जिसमें वह उसकी मलमयी देह के रस ( नख से शिख तक की गंदगी का तरल पदार्थ जो योगवाशिष्ठ में भी

उपदेश किया गया है जिसे हमनें हमारी नवीन प्रकाशित पुस्तक संभोग से समाधि में भी अलम्बुषा के किसी खंड में वर्णित किया है उसी दूषित तरल पदार्थ )को अमृत समझकर हर दिन पान करता हुआ अपनी आयु की अवधि और काल को भी भूल जाता है और जगत की भौतिक शामों को वन, उपवन आदि में घूम घूमकर वहाँ दैहिक स्पर्श मयी रतिक्रीडा करता हुआ तथा पुत्र और स्त्री के स्नेहपाश में बँध बंध कर सारा जीवन बर्बाद कर जाता है।

इसमें मैथुन की वासना इतनी बढ़ जाती है कि तरह–तरह के दुर्व्यवहारों से दीन होने पर भी यह विवश होकर अपने बन्धन को तोड़ने का साहस नहीं कर सकता और आखिर

चिता में जलकर ही बंधन तोड़ पाता है और मरकर 12 दिन तक भी पत्नि की देह के समीप मंडराता है कि

हे प्रिया!

मैं तुझे छोड़कर नहीं जाना चाहता पर ये यमकिंकर 13 वें दिन जबर्दस्ती खींचतान करके ले जायेंगे.....

हे भगवान!

धन्य है ध्रुव और धन्य हैं वे ब्रह्मचारी बालक और धन्य हैं वे ग्रहस्थ जो अनिवार्य कार्य को अंजाम देकर मात्र सुदामा जैसी भक्ति से लबालब भरे रहते हैं।

और वे लोग पतित हैं जो रात दिन अपोजिट सेक्स

के क्षणभङ्गुर सुख को ही जीवन का सार समझते हैं और वे लोग ( वे अमीर लोग या नामचीन) तो और भी गिरे हुए हैं जो धन या फेम की आड़ में हर चार पांच दिनों में परायी नारियों का उपभोग करते हैं और इन पुरुषों से भी गिरी हुई वे नारियाँ हैं जो टेलीविजन पर झूठी शोहरत पाने के लिए इन दुराचारियों के साथ रात बिताने में भी संकोच नहीं करती। और यह तो कुछेक को छोडकर अनेक नायिकाओं के फेम की सबसे बड़ी कीमत है। जो 20– 30 साल तक प्रसिद्धी तो दिला देती है पर मरने के बाद उसी फिल्म उद्योग के किसी सेट पर पशु बनकर घूमती भी मिल जाती हैं।

( किसी अभिनेत्री के साक्षात्कार से प्राप्त दुखद घटना से यह और भी स्पष्ट हुआ)

# अध्याय 36
# गृहस्थ जीवन में कल्याण का सूत्र

**उत्तर—**–पतिव्रता स्त्री, धन, आज्ञाकारी–ज्ञानी पुत्र व संस्कारी कन्या ये ग्रहस्थ जीवन में सुख के आधार हैं पर ये सब होते हुये भी यदि पति ईर्ष्या, छल कपट और परनारी का सेवन करे तथा क्रोधी, दयाहीन, भावना न समझने वाली और तमोगुणी या स्वार्थी हो, भेदज्ञ व अज्ञानी और संचित कर्मों के कारण महापापी हो तो वह पति भी सुखी नहीं हो सकता ।

और ये सब गुणधर्म होते हुये भी यदि 50–55 के बाद ग्रहस्थ सुख का त्याग नही किया तो उसका धर्म भी मात्र पितृलोक तक सीमित फल देता है। राधा जी के पिता पूर्वजन्म में अनन्य भक्त थे पर ग्रहस्थ की अवधि के बाद महल रूपी ग्रह की आसक्ति छोड़कर तपस्वी हो गये थे तो ही श्री राधे ने कृपा कर उनकी पुत्री बनना स्वीकार किया मायावद्ध और मोहित लोगों को परम गति नहीं मिलती वे अपने पुण्यों से परलोक में पितृलोक में भोग पाकर पुनः पैदा हो जाते हैं।

# अध्याय 37
# बुढ़ापा

बुढ़ापा एक शाप से कम नहीं।

जन्म, जरा ये दोनों भयंकर कष्ट देते हैं।

व्याधि ( रोग ) और मृत्यु की पीड़ा तो और भी भयंकर है। अतः मुमुक्षा पाओ।

संसार यथार्थ में बवंडर सा ही है।

इसमें केवल नैष्ठिकब्रह्मचारी ( वह यदि ब्रह्मनिष्ठ हो जाए तो ) ही सुखी रह सकता है पर उसे भी यह संसार कभी कभी ईर्ष्या और द्वेष के कारण बेवजह परेशान करता ही है।

और बेचारे गृहस्थ लोग तो कभी कुलटा स्त्री से परेशान तो कभी नालायक पुत्र से परेशान तो कभी स्वच्छंद पुत्री से परेशान और यदि ये तीनों अच्छे हों तो पुत्रवधु रुलाने लगती है वह मनमाना आचरण करती है अथवा वह भी ठीक निकल जाये तो बड़ा परिवार होने से कभी किसी के गर्भ की परेशानी से दुख तो कभी किसी सदस्य की दुर्घटना होने से परेशानी, या घर में सुन्दर स्त्री हो तो कामुक व स्त्रीलम्पट पुरुष उसे कुलटा बनाने के लिए या उसका बलात्कार करने के लिए आँखे गढ़ाये फिरते हैं।

अतः संसार में पैदा होना अर्थात दुख के सागर में जन्म लेना।

गीता ( श्रीमद् भगवद् गीता ) में भी संसार को दुखालय ही कहा है।

इसमें मात्र ब्रह्मविद् ही 99.9प्रतिशत सुख पा सकता है अन्य नहीं।

# अध्याय 38
# पुरश्चरण और सिद्ध अवस्था

शिष्य थोड़ा–बहुत भी पात्र हो तो पुरश्चरण करने की आज्ञा हरेक सद्गुरु देते हैं। भगवान वेदव्यास जी ने पुरश्चरण की महिमा हर पुराण में लिखी है तो सोचो कौन गुरु उस आज्ञा का उपदेश नहीं देगा ?

यदि गुरु ही कह दे कि पुरश्चरण अनिवार्य नही तुम सिद्ध हो चुके तो बात अलग है पर आप कितने बड़े सिद्ध या कितने बड़े योगी हो यह बात आपके व्यवहार या आपकी विक्षिप्त अवस्था से ही ज्ञात हो जाती है।

1. मंदिर में चप्पल चोरी हुई नहीं कि बद्दुआ या दुख आरंभ।
2. जेब से 50का नोट गिरा नही कि गिरते ही 24 घंटे तक मानसिक झटका।
3. रात आते ही पत्नी को देखते ही रतिभोग की लालसा।
4. प्रमोशन होते ही खिल खिलकर उचकना और पुत्र पत्नी को बीमारी होने पर या मरने पर सदमा...
5. घर पर दो चार अतिथि या दो दिन रुक जायें तो मुँह फुलोना....
6. बात बात पर गाली या चुगलखोरिता की आदत.......
7. लगातार तीन वर्ष तक अखंड ब्रह्मचर्य का कभी भी पालन न कर सके और बात करते हो अपने आपकी योगसिद्धि की .....वाह रे जमाना।
8. सुन्दर स्त्री दिखी नहीं कि उसके आगे पीछे डोलते रहते हो या उसकी छवि रात दिन आँखो में घूमती रहती है अथवा क्वांरे हो तो उसी से विवाह के सपने चालू हो जाते हैं। तो सोच लो आप कितने बड़े सिद्ध हो।
9. गीता मे जिस ब्राह्मी अवस्था या स्थितप्रज्ञता की बात है वह प्राप्त होने पर ही आप अपने आपको धन्य व योगी कह सकते हो (हालांकि उस समय कहने या समझने या सोचने के लिए समय ही नहीं मिलता ) अन्यथा सब कुछ ढोंग है। बस अपने आपको झूठमूठ समझाना है।

# अध्याय 39
# डिग्रियों का ढेर

24–25 साल की आयु तो आजकल डिग्रियों के ढेर लगाने में ही निकल जाती है। ताकि 26 से 60 तक शान्ति से भोजन कर सको और अनिवार्य कामनाओं को भी भोग सको। बिना कामना के कैसी डिग्री? बची हुई यह अवधि अगली 25 वर्ष जो भोग्यभाव या योगभाव की मुख्य अवधि कहलाती है जो या तो मुक्त कर देती है या पुनर्जन्म के बीजों का अंकुरण होता है। अतः कल्याण के लिए यह आयु ही है। वो तो किस्मत वाले हैं जो 15–16 में ही जगत की सच्चाई जान कर भवरोग से मुक्ति हेतु प्रयास करने लगते हैं। 25 से 50 वर्ष का जीवन, उसमें भी 50: समय तो सोने, खाने और कमाने में चला जाता है अर्थात् बचा 12.5 वर्ष का समय, इसमें मात्र चिंतन का ही सारा खेल है।

आर या पार पुरुष या स्त्री यदि थोड़े भी समझदार हैं तो अपना समय क्षणभंगुरता में नहीं लगाते, कारण सबको सब कुछ छोड़कर जाना है फिर सागर की लहरों के समीप कौन बुद्धिमान मेरा मेरा कह सकता है और क्यों? रेत के टीले या मिट्टी के घरौंदे के संग्रहण से क्या लाभ? जो अनिवार्य है वो ही ठीक है, हालांकि भौतिक सम्पति की प्राप्ति कठिन नहीं, पर सम्पत्ति के लिये जो लड़ मरे या जिन्होंने राज्य कर लिया वो भी आज भटक रहे हैं (विस्तार के लिए विष्णु पुराण चतुर्थ अंश अध्याय 24 की भविष्यवाणी रूपी मगध वंशावलि को उठाकर देख लें जिसमें महापद्म नामक नंद ने (जिसके पूर्वज सुनिक नामक मंत्री ने छल से अपने राजा रिपुंजय को मारकर ने अपनी संतान को सिंहासन पर बिठा दिया और 500साल तक महानंदी के शासन काल तक राज्य किया, फिर कामवश महानंदी ने एक शूद्रा के गर्भ से ही बच्चा पैदा कर डाला फिर इस शूद्रा से उत्पन्न 8 वर्ण संकरों को चाणक्य के द्वारा नष्ट करने की भविष्यवाणी भी श्रीपराशर जी द्वारा पहले से ही की गयी थी......

तो सोचो ये सब के सब मारे गये और फिर चंद्रगुप्त मौर्य उसकी प्रेमिका पत्नि हेलेना, बिंदुसार, इसके वंशज अशोक वर्धन, सुयशा, दशरथ, संयुत, शालिशूकशालिशूक का पुत्र राजा सोमशर्मा, फिर सोमशर्मा का उत्तराधिकारी शतधन्वा, बृहद्रथ ये मौर्यवंशी भी 173 साल में काल के ग्रास हो गये फिर आप 60–70लाख जोड़कर कहाँ ले जाओगे......भक्ति में ही मन लगाओ। सब चक्रवर्ती राजाओं के भी यही हाल (भोग के कारण आसक्ति) होते हैं फिर अंतकाल में कहाँ से हरि सुमिरन होगा।

मात्र वही अंतकाल में सुमिरन कर सकते हैं जो आजीवन उसी भाव से भावित रहे हों जिसे भोगों की इच्छा न हो अपितु अपने आप पद पर बिठाया गया हो........पर आजकल तो कुर्सी छीनने की होड़ मची है सभी से हरि ने नहीं बोला कि बेटा तू मेरा भक्त है अतः मेरी आज्ञा से जा.....राजनीति कर और शोषक पार्टी का सफाया कर......के पुनः साधुता के भेष में भी आ जाना.... यहाँ तो 99ः अपना पद और ऐश्वर्य, मोटी वेतन के लिए ही हर क्षेत्र में कदम रख रहे हैं।

# अध्याय 40
# चिरंजीवी बनना है तो

मुक्तावस्था पाना ही सर्वोत्तम है पर आयु का वर्धन भी कर सकते हो। यह भी ठीक ही हैं पर आयु का वर्धन करके तद् भाव भी पाएं अन्यथा पशुओं जैसा जीवन काटने से क्या मिलेगा।

दीर्घायु के लिए कम से कम 5–5 बार सुबह, शाम और निशीध काल में रात 9:10 के लगभग भी 5 पाठ करें लोमश कृत मृत्युञ्जय स्तोत्र। तथा हर पंचमी, दशमी, पूर्णिमा और अमावस्या को उस दिन कुल 100 बार। इससे 90 –100 वर्ष तक की आयु

। अथवा लगातार 108 अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक जप के बाद नित्य नियम से तीनों समय ( सुबह शाम और निशीथ समय ) 1–1–1 पाठ।

मध्याह्न काल में समय मिले तो एक बार करे।

यह हर गृहस्थ को दीर्घायु के लिए अनिवार्य है।

और

और चिरंजीवी बनना है तो 55 के बाद घर–परिवार छोड़कर एकमात्र अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक 1 लाख बार यह पाठ । ज्योतिर्लिंग के समीप। 55 के बाद घर के दायित्व समाप्त हो जाते हैं पर फिर भी मूर्ख लोग घर में रहकर ही अपने आपको वीतरागी समझते हैं। चाहो तो पत्नि सहित तीर्थ में चले जाओ पर तीर्थ स्थल पर जाना अनिवार्य है तभी कुछ विशेष chievement मिलेगा। अथवा 70–75 की आयु में ही चार कन्धे तैयार रखें। 75 से अधिक वही जी पाते हैं जो दीर्घायु का भाग्य लेकर पैदा हुए हैं शेष 90 प्रतिशत लोग चिता पर 75 से पहले ही लेट जाते हैं। चाहे वह राष्ट्रपति हो या प्रधान मंत्री या कलेक्टर कमिश्नर या केबिनेट मंत्री। घर की अति फफूंद मनुष्य को बर्बाद कर डालती है यह न भूले। वह 55 के बाद पोता पोती या बहु बेटे की चिन्ता न करें। पेंशन मिल रही हो तो आधे देता रहे पर अपनी देह उस घर से चिपकाएं न। अपितु तीर्थ का माहात्म्य समझे।

और अपने आपको ब्रह्मनिष्ठ समझे तो 70–75 के लगभग संसार से दूर होना ही है तथा वह देश का भविष्य नहीं सुधार सकता। मुक्त भले ही हो जाये।

पर ऐसे लोग अक्षयरुद्र अंशभूतशिव के लिए स्वार्थी हैं। जो मात्र अपने शिवोऽहम् भाव से सोऽहम् में ही 24 घंटे मग्न है उनको कुछ परवाह ही नहीं। मरना सबको है अतः मरने से पहले कुछ तो कर जाओ भाई।

# अध्याय 41
# राष्ट्र सेवा

पारिवारिक प्रेम चाहिए तो हे पुरुषों! परिवार के सदस्यों को सुख दो परंतु देश की सेवा भी अनिवार्य है। 24 घंटे ही परिवार की सेवा करना या सदस्यों को अपनी ही सेवा के लिए जंजीर की तरह बांधकर रखना संकुचित विचारधारा और पाप ही है। ऑफिसियल सेवा से अर्थात नौकरी आदि से देश की सेवा करने से पुण्य नहीं मिलता क्योंकि उस सेवा के बदले आपको मासिक धन मिलता है या जो धंधा व्यवसाय आदि धनार्जन के लिये किया जाता है उस धंधे से भी पुण्य नहीं मिलता क्योंकि उद्देश्य धनार्जन है न कि परोपकार। पर हाँ उस नौकरी या धंधे से जो धन आता है उसका दशांश दान गौ, संध्यापूत ब्राह्मण, संत आदि या प्रकृति ( वृक्ष,जल, वायु, अग्नि, आकाश, भूमि, धरा आदि ) में लगाना ही पुण्यप्रद व कल्याणप्रद है।

आप जिस पद पर कार्यरत हो वह पद आपको मासिक धन देता है तो वह सेवा नहीं व्यवसाय का ही एक रूप है। और वह धन ईमानदारी से कमाने पर ही ठीक होता है अन्यथा उल्टा पाप ही लगता है। सच्चा सेवक तो वह है जो रानी लक्ष्मीबाई, सुभाषचंद्र बोस, मीरा, विवेकानंद, सनत्कुमार, हनुमान, हरिकेश जैसा 100 प्रतिशत सरेंडर कर देता है और वेतन आदि से भी मुक्त हो जाता है। भविष्य को भी दाब पर लगा देता है। ये लोग तो अद्‌भुत त्यागी होते हैं। इनको ही आध्यात्मिक उच्च स्तरीय पद मिलता है।

ये लोग निश्चित ही परम दृढ़संकल्पी होते हैं। हालांकि इनको कभी कभी इनके घर वाले भी ( घर की सेवा न करने के कारण) शाप दे डालते हैं क्योंकि वे घर वाले कभी नहीं चाहते कि हमारी संतान घर छोड़कर जाये या हमारी संतान नैष्ठिक ब्रह्मचर्य पूर्वक रहे। ऐसे वीरों को भी घर के लोग घर में ही रखना चाहते हैं जो संकीर्ण सोच ही है ।

जल सेना, थल सेना और वायु सेना आदि में भर्ती होकर देश के लिए बलिदान की भावना वाले भी महान हैं वे भी चाहते तो साधारण सा काम चुनकर जिन्दगी निकाल सकते थे पर इनकी उत्तम भावना भी धन्य है। जाना

सबको है अतः स्वयं भी राष्ट्र सेवा करो और संतान को भी करने दो। अपनी संतानो को कीर्ति या धन के लिए सेना या पुलिस बल में भर्ती के सपने मत दिखाओ अपितु सेवा का भाव भरो। और बच्चा कमजोर है तो उसके अनुसार जो भी काम मिले उस काम को ईमानदारी से करने की शिक्षा दें। अधिक समर्पित न हो सको तो ईमानदारी से अपना धंधा भी ठीक ही है। पर दया भाव न छोड़े। और गृहस्थ हो तो बिना धन के कुछ भी नहीं होगा अतः धनार्जन अवश्य करें पर समय समय पर प्रकृति की रक्षा भी करें। और जो आजीवन संयम पूर्वक एकाकी रह सके वह देश को या श्रीहरि को 100 प्रतिशत समर्पण कर सकता है । और इसका फल भी अद्वितीय ही होगा। उसका त्याग( सुखभोग का त्याग ) उसे देवता ही बना डालता है। .................

# अध्याय 42
# स्त्री ही संसार है।

जो स्त्री की आसक्ति से मुक्त है वह निश्चित ही संसार से मुक्त हो गया। पर किसी भी उपनिषद में नारी को मुक्त करने की बात नहीं लिखी कि वह चाहे तो अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक रहकर निर्वाण पा सकती है या समस्त सिद्धियों के हेतु तप कर सकती है। पर यह अक्षयरुद्र लिखना चाहता है इस संदर्भ में । हमने नारी जीवन एक संघर्ष पुस्तक भी लिखी थी उसी का सार सुनें। जब नारी बच्ची थी तब उसकी 2से 10 साल की आयु में आप लोग पूजा सेवा करते थे पर 11 वर्ष की होने पर इतनी घृणा क्यों ?

कम से कम जो आजीवन ब्रह्मचर्य पूर्वक रहना चाहती है हे समस्त पिताओं! उनको तो मुक्त कर दो ।

वह संकल्पित नारी भी सुलभा या देवी सूक्त की ऋषिका जैसी मुक्त ही है जो हाड़ मांस से युक्त पुरुष की प्राप्ति के लिए यत्न न करके साधन चतुष्ट्य से संपन्न होकर अभिन्न भाव का प्रयास कर रही है यदि ऐसी नारी को कोई संत दीक्षा न दे या उसे संत उपलब्धि न हो पाई हो तो वह मुमुक्षु स्कन्द पुराण के राम हनुमान संवाद के अनुसार उपनिषदों से ज्ञान विज्ञान प्राप्त कर सकती है। क्योंकि मुमुक्षु पुरुष हो या मुमुक्षु या वैराग्यवान कोई भी उनको न तो कुछ विहित है न ही अविहित। वह शास्त्र के अनुशासन में भी नहीं न ही किसी के अधीन । और ऐसी मुमुक्षु नारी मालती को तो विवाह के बाद भी वसिष्ठ जी ने गायत्री मंत्र तक दे डाला था और उन वसिष्ठजी ने ही संध्या को अष्टाक्षरी शंकर मंत्र भी दिया था। और सति सावित्रीबाई की माँ को तो गायत्री मंत्र ही मिला था तथा गर्ग संहिता के अनुसार यशोदा जी को गर्गाचार्य जी ने गुप्त विद्या दी थी। ये नहीं कहा कि तुम्हारे पति ही तुम्हारे एकमात्र गुरु हैं।

So sorry----- i can’t give you any spritual mantra.

एक बात समझ नही आती कि एक दिन चिता पर सबको लेटना है पर फिर भी काहे सबमें परब्रह्म नहीं देखते अथवा कम से कम वीतरागी नारी को तो स्वतंत्र कर दो मेरे भाई।

अतः यह संसार आजकल योग्य नारी को भी गुरुदीक्षा देने की मना करता है यह पापकर्म ही है जो भगवाधारी या आधुनिक संत हर नारी को कामी क्रोधी और साधारण समझ बैठा वह न तो संत है न ही साधु।

ध्यान रहे आप जिन पुरुषों को दीक्षा दे रहे हैं उनमें 70प्रतिशत अपात्र होते हैं जिनके पास का 10–10 प्रतिशत दण्ड आपको भी भोगना होगा। वे पापी यदि मित्र या पड़ोस की स्त्री को कुभाव से देखेंगे या नौकरी करते समय दो नंबर की कमाई करेंगे या अन्य पाप तो दशांश पाप दीक्षादाता भी भोगता है और यदि आपने मुमुक्षु नारी या वीतरागी स्त्री को मंत्र देने से मना कर दिया तो उसका पाप भी आप भोगोगे ही।

जब वसिष्ठ जी और गर्गाचार्य जी दिव्य नारी को मंत्र दे सकते हैं तो आपको हर नारी से नफरत क्यों ?

तू कौन है ?

क्या तू तन है,

या बल है;

अथवा नर या नारी है।

तू तो वही है।

इस विश्व के लोगों ने

तुझे डराने के लिए

या करने के लिए

लघु घोषित ।

तुझे तुच्छ नाम

दे डाला।

हे ब्रह्म अद्वितीय!

तू वही है।

एक केवल वही

जिसको जमाना पूज रहा।
अतः जान ले अपने आपको
और हो जा तत्काल मुक्त
अंशभूत कहता
यही सत्य शब्द युक्त।
कहाँ तू
किसकी सुन सुनकर
कहाँ कहाँ
भटक गया ।
तू संसार की उपाधि नहीं,
तू है।
वही
जो है वही ।
केवल एक
और
केवल एक
ब्रह्म अद्वितीय।
बस

**इति श्री यथार्थ गीता संपूर्णम्**

आओ जड़ भरत का उपदेश सुनें आज

नारद पुराण से पूर्व भाग द्वितीय पाद 177

ब्राह्मण बोले– राजन् ! 'अहं' शब्दका उच्चारण

जिह्वा, दन्त, ओठ और तालु ही करते हैं, किंतु ये सब 'अहं' नहीं हैं; क्योंकि ये सब उस शब्दके उच्चारणमात्रमें हेतु हैं। तो क्या इन जिह्वा आदि कारणोंके द्वारा यह वाणी ही स्वयं अपनेको 'अहं' कहती है ? नहीं; अतः ऐसी स्थितिमें 'तू मोटा है' ऐसा कहना कदापि उचित नहीं। राजन् !

सिर और हाथ–पैर आदि लक्षणोंवाला यह शरीर आत्मासे पृथक् ही है; अतः इस 'अहं' शब्दका प्रयोग मैं कहाँ और किसके लिये करूँ ?

नृपश्रेष्ठ !

यदि मुझसे भिन्न कोई और भी सजातीय आत्मा हो तो भी 'यह मैं हूँ और यह अन्य है'– ऐसा कहना उचित हो सकता था। जब सम्पूर्ण शरीरोंमें एक ही आत्मा विराजमान है, तब 'आप कौन हैं। और मैं कौन हूँ' इत्यादि प्रश्नवाक्य व्यर्थ ही हैं।

**नरेश !**

**'तुम राजा हो,**

**यह पालकी है**

**और**

**ये सामने पालकी ढोनेवाले खड़े हैं ...**

तथा यह जगत् आपके अधिकारमें है'–ऐसा जो कहा जाता हैं, वह वास्तवमें सत्य नहीं है।

यह असत्य ही संसार का कारण है।

वृक्षसे लकड़ी पैदा हुई और उससे यह पालकी बनी, जिसपर तुम बैठते हो। यदि इसे पालकी ही कहा जाय तो इसका 'वृक्ष' नाम अथवा 'लकड़ी' नाम कहाँ चला गया? यह तुम्हारे सेवकगण ऐसा नहीं कहते कि महाराज पेड़पर चढ़े हुए हैं और न कोई तुम्हें लकड़ीपर ही चढ़ा हुआ बतलाता है। सब लोग पालकीमें ही बैठा हुआ बतलाते हैं; किंतु पालकी क्या है–लकड़ियोंका समुदाय।

मात्र समझने के लिए तथा लेन देन के लिए ही इस जगत ने झूठ नामों की कल्पना करके कुछ न कुछ नाम रख दिया उसी प्रकार यह आत्मा भी विशुद्ध परमतत्व है यही परब्रह्म स्वरूप है इसके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं, जीव नाम भी पशुत्व के कारण है यदि पशुत्व नष्ट हो जाये तो वह इस शरीर में ही प्रत्यक्ष परमात्मा ही जानने योग्य है।

नृपश्रेष्ठ। इसमेंसे लकड़ियोंके समूहको अलग कर दो और फिर खोजो—तुम्हारी पालकी कहाँ है?

इसी प्रकार छातेकी शलाकाओं (तिलियों) को पृथक् करके विचार करो, छाता नामकी वस्तु कहाँ चली गयी ? यही न्याय तुम्हारे और मेरे ऊपर लागू होता है (अर्थात् मेरे और तुम्हारे शरीर भी पञ्चभूतसे अतिरिक्त कोई वस्तु नहीं हैं)। पुरुष, स्त्री, गाय, बकरी, घोड़ा, हाथी, पक्षी और वृक्ष आदि लौकिक नाम कर्मजनित विभिन्न शरीरोंके लिये ही रखे गये हैं—ऐसा जानना चाहिये। भूपाल! आत्मा न देवता है, न मनुष्य है, न पशु है और न वृक्ष ही है। ये सब तो शरीरोंकी आकृतियोंके भेद हैं, जो भिन्न—भिन्न कर्मोंक अनुसार उत्पन्न हुए हैं। राजन्! लोकमें जो राजा, राजाके सिपाही तथा और भी जो—जो ऐसी वस्तुएँ हैं, वे सब काल्पनिक हैं, सत्य नहीं हैं। नरेश ! जो वस्तु परिणाम आदिके कारण होनेवाली किसी नयी संज्ञाको कालान्तरमें भी नहीं प्राप्त होती, वही पारमार्थिक वस्तु है। विचार करो, वह क्या है ? तुम समस्त प्रजाके लिये राजा हो, अपने पिताके पुत्र हो, शत्रुके लिये शत्रु हो, पत्नीके लिये पति और पुत्रके लिये पिता हो। भूपाल ! बताओ, मैं तुम्हें क्या कहूँ ? महीपते ! तुम क्या हो ? यह सिर हो या ग्रीवा अथवा पेट या पैर आदिमेंसे कोई हो तथा ये सिर आदि भी तुम्हारे क्या हैं? पृथ्वीपते ! तुम सम्पूर्ण अवयवोंसे पृथक् स्थित होकर भलीभाँति विचार करो कि मैं कौन हूँ। नरेश ! आत्म—तत्त्व जब इस प्रकार स्थित है, जब सबसे पृथक् करके ही उसका प्रतिपादन किया जा सकता है, तो मैं उसे 'अहं' इस नामसे कैसे बता सकता हूँ?.......................

# अध्याय 43
# अपनी गरिमा बनाये रखें

ब्राह्मण (यज्ञोपवीत धारी, संध्यापूत, वेदपाठी तथा कम से कम एक लाख गायत्री जापक और धर्मपरायण ) का कार्य कर्मकांड है इसी से धन कमायें और सात घरों से भिक्षा मांग कर परिवार के पेट का रक्षण करें। सैनिक, पुलिस आदि ही आज के क्षत्रिय हैं। ( जो देश की रक्षा अपनी भुजाओं से कर रहे हैं वे ही क्षत्रिय हैं यदि जन्मजात क्षत्रिय होकर भी जो परचूने की दुकान खोलकर बैठ गए उनको वैश्य ही माना जाए। अथवा जो ब्राह्मण होकर चपरासी की नौकरी कर रहा है ( कर्मकांड न करके दासत्व का काम कर रहा है जिसका बोस फलाना ढिमका या शराबी और आप जी हुजूर हुजूर किये जा रहे हो ) तो ये ठीक नही।

बोस यदि धार्मिक होगा तो ध्यान रहे आपके प्रति उसका आदर कम नहीं हो सकता।

पर रात दिन आप उस तथाकथित स्त्रीलम्पट या शराबी पियक्कड़ की चप्पलों की सेवा कर रहे हो यह अनुचित है। मरने या गरीबी से न डरो। स्वाभिमान भी कुछ होता है भाई!

# अध्याय 44
# प्रसाद को बांटकर ही खाना चाहिए

प्रसाद देवी का हो या प्रभु का..........उस प्रसाद को अर्पित के बाद बांटकर ही खाना चाहिए, कोई श्रृद्धालु न मिले तो थाली में रखकर एक दो गायों को खिला दें अथवा कम अर्पित करें पर अकेले ही अधिक न खायें। अति ऊर्जा को मनुष्य का शरीर झेल नहीं पाता और वह बीमार भी हो सकता है। हालांकि इसका वैज्ञानिक कारण तो सब लोग जानते ही हैं।

उदाहरण– एक नारियल फोड़कर या 250 ग्राम मिठाई देव को अर्पित कर ...कोई न मिले तो अकेले मत खाना । प्रसाद को तो वैसे भी बांटने का ही नियम है। अन्यथा बीमार हो जाओगे। और अभक्ष्य वस्तु अर्पित न करें वह प्रसाद बनता ही नहीं।

और दूसरी सामान्य बात – मनुष्य का बीमार होना अनुचित बेमेल आहार–विहार पर निर्भर करता है अतः खान पान हेतु आयुर्वेद पढ़े।

आजकल सब कुछ कुछ तो भी भक्षण किये ( ठूसे ) जा रहे हैं।

कुछ लोग तो बासा भोजन या आधा खराब केला या आधा सड़ा सेव फल भी खा जाते है फिर भले ही इलाज में 500₹ नष्ट कर दें।

यह ठीक नहीं

अतः सीमित खाओ।

नमक और चीनी धीमा जहर है। अतः बहुत कम खाओ।

गर्भवती पत्नी से रतिभोग न करें।

उसने भोजन किया हो तो तत्काल भोग न करें।

स्वर देखकर ही संसर्ग हो।

कच्चा भोजन न खायें।

मल मूत्र का वेग न रोके।

छींक आने पर कुल्ला करें।

अन्यथा आपकी आयु का ह्रास अवश्य होगा।

अति कामभोग से आयुष्य का क्षरण होता है। ऐसा धन्वंतरी जी ने कहा है।

कुछ मूर्ख पुरुष हमसे पूछते रहते हैं कि हम वीर्य का नाश बिना स्त्री के भी करते हैं आदत पड़ गई अब छूट नहीं रही ... क्या करें ....तथा हर तीन चार दिन में बिना स्त्रीसुख के चैन नहीं मिलता तो प्राजापत्य व्रत कैसे पालन करें ....

उत्तर– चिता के लिए तीन क्विंटल लकड़ी खरीद लो।

आगे सुनों अब

रविवार आदि कुछ वारों को क्षौरकर्म से आयुष्य की क्षति देवक्षति मानो।

नोट – क्या करें क्या न करें ये सब धर्म शास्त्र कहते हैं मात्र राम राम या शिव शिव जपकर ( और अति रतिभोग या बेमेल भोज के चरने से ) ही मनुष्य स्वास्थ्य लाभ पाने लगता तो आयुर्वेद की रचना नहीं होती।

अतः अक्षयरुद्र आपको सावधान करता है। मान जाओ।

0000000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 45
# प्राणायाम

अपने शरीरके भीतर रहनेवाली वायुको 'प्राण' कहते हैं। उस प्राण ( वायु )को रोकनेका नाम ही 'आयाम' है।

अतः 'प्राणायाम' का अर्थ हुआ – 'प्राणवायुको रोकना' । प्राणायाम से मनुष्य को मृत्यु का भय नही रह जाता। सांझ भले ही ढलेगी पर बहुत देरी से।

इसकी विधि इस प्रकार है –

अपनी अँगुलीसे नासिकाके एक छिद्रको दबाकर दूसरे छिद्रसे उदरस्थित वायुको बाहर निकाले। 'रेचन' अर्थात् बाहर निकालनेके कारण इस क्रियाको 'रेचक' कहते हैं। तत्पश्चात् चमड़ेकी धोंकनीके समान शरीरको बाहरी वायुसे भरे। भर जानेपर कुछ कालतक स्थिरभावसे बैठा रहे। बाहरसे वायुकी पूर्ति करनेके कारण इस क्रियाका नाम 'पूरक' है। वायु भर जानेके पश्चात् जब साधक न तो भीतरी वायुको छोड़ता है और न बाहरी वायुको ग्रहण ही करता है, अपितु भरे हुए घड़ेकी भाँति अविचल–भावसे स्थिर रहता है, उस समय कुम्भवत् स्थिर होनेके कारण उसकी वह चेष्टा 'कुम्भक' कहलाती है। बारह मात्रा (पल) का एक 'उद्घात' होता है।

इतनी देरतक वायुको रोकना कनिष्ठ श्रेणीका प्राणायाम है।

दो उद्घात अर्थात् चौबीस मात्रा तक किया जानेवाला कुम्भक मध्यम श्रेणीका माना गया है ।

तथा तीन उद्घात यानी छत्तीस मात्रातकका कुम्भक उत्तम श्रेणीका प्राणायाम है।

●●●●●

जिससे शरीरसे पसीने निकलने लगें, कँपकँपी छा जाय तथा अभिघात लगने लगे, वह प्राणायाम अत्यन्त उत्तम है। प्राणायामकी भूमिकाओंमेंसे जिसपर

भलीभाँति अधिकार न हो जाय, उनपर सहसा आरोहण न करे, अर्थात् क्रमशः अभ्यास बढ़ाते हुए उत्तरोत्तर भूमिकाओंमें आरूढ़ होनेका यत्न करे।

●●●●●

प्राणको जीत लेनेपर हिचकी और साँस आदिके रोग दूर हो जाते हैं तथा मल–मूत्रादिके दोष भी धीरे– धीरे कम हो जाते हैं। नीरोग होना, तेज चलना, मनमें उत्साह होना, स्वरमें माधुर्य आना, बल बढ़ना, शरीरवर्णमें स्वच्छताका आना तथा सब प्रकारके दोषोंका नाश हो जाना ।

ये प्राणायामसे होनेवाले लाभ हैं।

●●●●●

प्राणायाम दो तरहके होते हैं – 'अगर्भ' और 'सगर्भ'।

जप और ध्यानके बिना जो प्राणायाम किया जाता है, उसका नाम 'अगर्भ' है तथा जप और ध्यानके साथ किये जानेवाले प्राणायामको 'सगर्भ' कहते हैं।

इन्द्रियोंपर विजय पानेके लिये सगर्भ प्राणायाम ही उत्तम होता है; उसीका अभ्यास करना चाहिये। ज्ञान और वैराग्यसे युक्त होकर प्राणायामके अभ्याससे

●इन्द्रियोंको जीत लेनेपर सबपर विजय प्राप्त हो जाती है। जिसे 'स्वर्ग' और 'नरक' कहते हैं, वह सब इन्द्रियाँ ही हैं। वे ही वशमें होनेपर स्वर्गमें पहुँचाती हैं और स्वतन्त्र छोड़ देनेपर नरकमें ले जाती हैं।

शरीरको 'रथ' कहते हैं, इन्द्रियाँ ही उसके 'घोड़े' हैं, मनको 'सारथि' कहा गया है और प्राणायामको 'चाबुक' माना गया है। ज्ञान और वैराग्यकी बागडोरमें बँधे हुए मनरूपी घोड़ेको प्राणायामसे आबद्ध करके जब अच्छी तरह काबूमें कर लिया जाता है तो वह धीरे–धीरे स्थिर हो जाता है।

■■■■■■■■■■■■■■■

जो मनुष्य सौ वर्षोंसे कुछ अधिक कालतक प्रतिमास कुशके अग्रभागसे जलकी एक बूँद लेकर उसे पीकर रह जाता है, उसकी वह तपस्या और यह प्राणायाम – दोनों बराबर हैं।

विषयोंके समुद्रमें प्रवेश करके वहाँ फँसी हुई इन्द्रियोंको जो आहूत करके, अर्थात् लौटाकर अपने अधीन करता है, उसके इस प्रयत्नको 'प्रत्याहार' कहते हैं। जैसे जलमें डूबा हुआ मनुष्य उससे निकलनेका प्रयत्न करता है, उसी प्रकार संसार– समुद्रमें डूबे हुए अपने–आपको स्वयं ही निकालनेका प्रयत्न करे। भोगरूपी नदीका वेग अत्यन्त बढ़ जानेपर उससे बचनेके लिये अत्यन्त सुदृढ़ ज्ञानरूपी वृक्षका आश्रय लेना चाहिये ।

# अध्याय 46
# धर्मशास्त्रों के नियम ही कल्याण के मूल

धर्मशास्त्रों के नियम ही कल्याण के मूल हैं, भुवः लोक स्वर्ग, महर्लोक, जन लोक या तपोलोक व ब्रह्मलोक यूँ ही नहीं मिलता, फिर वैकुंठ, गोलोक या शिवलोक क्या भोगियों को मिल जायेगा। नहीं नहीं नहीं।

अरे मानव! बिना संतान की इच्छा के यदि संयम का खंडन करते हो, तो वराह पुराण के अनुसार इससे इष्ट प्रसन्न नहीं होते संतान तो हो ही गई न

अब क्या चाहते हो? अतः भजन करो और कपिल प्रभु का जीवन चरित्र पढ़कर कल्याण करो अंतकाल में हरि सुमिरन होने पर ही परम पद मिलता है. अतः इस बात को न भूलें.

और भागवत जी की वाणी सदा याद रखें.

कपिल प्रभु–मेरा सुमिरन और ध्यान छोड़कर जिस चमड़ी को चाहते हुए कहते हो कि मैं तुमसे बहुत प्रेम करता हूँ, मैं तेरे बिना नहीं जी पाऊँगा, तू ही मेरा सब कुछ है .....और भी हजारों मोहभरी बातें

इससे बार बार पुनरागमन और दुःखदायक संसार ही मिलेगा।

शरीर में बैसे भी मल, मूत्र, कफ, लार, रक्त और दुर्गंध ही है न कि अमृत।

उसकी सच्चाई जानकर कौन विवेकवान इस चमड़ी के पास बिना अति प्रायोजन के जा सकता है, आत्मा तो सबकी एक ही है।

एक दूसरे से सहायता (सहयोग) लेने में बुराई नहीं, बिना सहायता के तो जीवन ही नहीं चलेगा अतः सहायता लेने देने में हानि नहीं ......पर उसके पिंडों को स्वर्ग के सुख का आधार मानकर उसी के गंदे रसों का पान करने से तुम क्या अमर हो जाओगे?

यह विषैलारस पान करने वाला और सुअर की भाँति गंदगी चाटने वाला तो धर्मज्ञ ही नहीं फिर मेरा भक्त कैसे हो सकता है।

मर्यादित काम और प्राजापत्य ग्रहस्थ केवल वंश परंपरा और विश्व में आंशिक योगदान मात्र देने के लिये है वह भी अभिन्नभावी या अनन्य भक्त, मुमुक्षु या वीतरागी को अनिवार्य नहीं।

इस देह (पुरुषों के लिये स्त्री शरीर और कामी स्त्रियों या वैश्याओं पुंश्चली के लिये परपुरुष की गंदगी) में कौन सा अमृत है जो तुम पीना चाहते हो।

मेरे ध्यान समाधि या मेरी कथाओं के अमृत रस को छोड़कर जो योनी मार्ग के मूत्र या अन्य मल गमन मार्ग या अन्य दुर्गंध युक्त छिद्रों के दूषित रोगजनक तरल पदार्थ का पान या देह से स्पर्श सुख चाहता है वो अनन्य भक्त या ज्ञाननिष्ठ कैसे हो सकता है वह तो

**1.** कामी

**2.** गंदगी को चाटने वाला सुअर

**3.** पशु

**4.** वासना के दलदल का पुजारी

**5.** अभक्त (जिस पर मैं सपने में भी अनुग्रह नहीं कर सकता)

फिर क्यों चमड़ी के पीछे पड़े हो हे दुर्लभ तन पाने वाले चारों वर्णों के कामी पशुओं।

नोट–

जो दंपती संतानहीन है केवल वो ही ऋतुकाल के अंतिम मात्र 12 दिनों में (उसकी इच्छा हो तब ही...तथा पावन तिथियाँ न हो तब ही) स्त्री की योनी को स्पर्श कर सकता है ।

और जो चतुर्वर्णीय मूर्ख मानव संतान की इच्छा न रखकर स्त्री का संसर्ग करता है या लिंगपुराण के अनुसार कृतिम साधनों के प्रयोग से वीर्य की शक्ति व्यर्थ नष्ट करता है या जो पत्नि पति को मजबूर करती है उस कामी औरत को भी नरकों में लोहे की नारी या नर पिंड बनाकर भयंकर गर्म करके यमकिंकरों द्वारा घर्षण कराया जाता है और उससे बांध दिया जाता है। या जो पुरुष नसबंदी या नारी का आपरेशन करा कर बिना संतान की इच्छा के स्त्रीसंसर्ग करता है न कि संयम

वह पुरूष घोर नरकों में सड़ता है।

# अध्याय 47
# धर्मपरायण होने का गुण

जब तक आपमें धार्मिक भावना ( धर्मपरायण होने का गुण करुणा स्नेह ममता आदि ) नहीं आयेगी तब तक राम या राम नाम भी उद्धार नहीं कर सकता।

उदाहरण– आज हम किसी अतिथि को छोड़ने गए और भयंकर वर्षा आरंभ हो गई तो सोचा कि ऐसे में किसी एकाध ठेले वाले का मन टटोला जाए ।और

मोबाइल की सेफ्टी के नाम से एक ठेले वाले से पालीथीन मांगी पर उसने नहीं दी और 17 बातें कहना आरंभ कर दिया कि मोबाइल रख लेते हो पर सेफ्टी के लिए मोबाइल कवर नहीं रख सकते। जा नहीं है पन्नी मन्नी। हमने कहा 5 रुपये ले लो एक पन्नी दे दो। तब तो और भी भयंकर क्रोध करने लगा और एक बार हमने सोचा फलाने स्थान पर फलाना व्यक्ति फल बेंच रहा है। भूख की मिथ्या लीला ( ।बज... मजब ) करते हैं यदि वह हमें एक सेव फल देगा तो उसे 100₹ देंगे और दो देगा तो 200₹ तब जैसे ही कहा कि – भैया ! हमारा व्रत है एक समय फलाहार करते हैं अतः संभव हो तो थोड़ा बहुत सेव फल दे दीजिए। तो उसने बस वही कहा जो आजकल कुछ लोगों द्वारा साधुओं से कहा जाता है।

कामचोर, भगोड़ा कमाने की नहीं बनती तो भगवा पहनकर भीख मांगने चले आते हैं आदि आदि।

................................ पर जैसे ही उसे पता लगा कि हम डिग्रीधारी और 20–21 पुस्तकों को लिखने के माध्यम बन चुके हैं तथा निशुल्क ग्रंथालय चलाने के भी एक माध्यम भगवान ने बनाया है 3 किलोमीटर दूर रहते हैं ... तो माफी मांगने लगा

और कहने लगा कि माफ कर दो पता नहीं था। यदि आपके विषय में पता होता तो एक दो फल क्या 25–30 दे देते...

तो हमने कहा कि आपके पास भगवाधारी साधु कितने दिन में मांगने आते हैं भोजन या फल मांगने । ..जरा बताओ ।। तो कहने लगा कि महाराज जी ! 15–20 दिन में एकाध भगवाधारी आता ही है। तो हम बोले कि – एक माह में साधु के नाम से 40–50 ₹ का पका अन्न या फल दान कर दोगे तो क्या कंगाल हो जाओगे।.......

नोट –

मरने से पहले परोपकार की भावना न आ पाई तो.. समझ लेना कि राम या शिव नाम से भी आपके पाप अभी पूर्णतः भस्मीभूत नहीं हुए। अतः या तो नाम जप बढ़ाने की आवश्यकता है या संत, ब्राह्मण अथवा भूखे मनुष्य को कुछ भोज्य पदार्थ देने के माहात्म्य को सुनें किसी सत्संग में।

मात्र औपचारिक माला से कोई विशेष लाभ न होगा।

धार्मिक भावना भी होना ....पर धार्मिक कार्य में विघ्न आ रहे हैं तो उदास न होयें ऐसे में यह समझ लेना चाहिए कि अभी उस प्रजा की भलाई का समय नही आया जिनका आप कल्याण चाहते हो।

# अध्याय 48
# यम नियम अनिवार्य

देखिए सुख और आनंद के लिए यम नियम अनिवार्य है ही। आप अमर रहो या 50 साल बाद मरो पर यम व नियम मत छोडना। यह आनंद का सूत्र जानों।

यम नियम के बिना कोई भी मनुष्य मुक्त नहीं होता।

1. चोरी न करना भी यम है।
2. सत्य की रक्षा भी यम है।
3. भार्या के ऋतुकाल नियम का पालन भी गृहस्थ का यम है।
4. अति आवश्यक वस्तुओं के अतिरिक्त संग्रह न करना भी यम है।
5. जीव मात्र को भी कष्ट न देना यम है।

अतः समझ गए न ।

1. पवित्रता,
2. संतोष,
3. तप (व्रत–उपवास) ,
4. स्वाध्याय और
5. ईश्वर की पूजा ये पाँच नियम हैं।

000000000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 49
# अगर पराई नारी को पत्नी मान कर भोगा जाए

शंकराचार्यांश ब्रह्मानंद अक्षयरुद्र जी! अगर पराई नारी को पत्नी मान कर भोगा जाए उससे मैने गांधर्व विवाह कर लिया तो वह भी मुझे मन से पति मानने लगी ( पूर्व का पति भी है ) तो दोष लगता है या नहीं – Gohil's thought 14-10-2024 monday

उत्तर– जिस नारी की मांग में किसी पुरुष ने समाज के बीच पहली पत्नी के रूप में सिन्दूर का दान कर दिया वह उसी की है। उससे विवाह नहीं करना चाहिए।

उसका पति जीवित है ही। यदि आप उससे पीठ पीछे विवाह करते हो तो यह उस पति के प्रति भयंकर अपराध तथा महापाप ही है। आप दोनों का।

उससे आप न तो विवाह कर सकते हो न ही उसके शरीर का उपभोग। न ही प्रेम । न ही योनीसेवन अर्थात संबंध नही बना सकते।

पर हाँ यदि वो विवाह से पहले ही आपको पति मान चुकी हो (या गांधर्व विवाह हो चुका हो) पर जबर्दस्ती दूसरे से विवाह करवाया गया हो तब .... सुनें

जब तक उसका वैदिक पति जीवित है तब तक भी उससे प्रेम न करें अन्यथा उसके मान सम्मान का नाश होगा। पर यदि वह मर गया हो तो उसकी पत्नी आपसे विवाह कर सकती है क्योंकि वह पहले ही आपको पति बना चुकी। पर संसार बंधन में जकड़कर वह विवश थी।

नोट –

जो प्रारब्ध वश किसी की पत्नि बन चुकी उसको मीठी मीठी बातों में लगाकर या धन का लोभ देकर उससे शादी करना भी पाप ही है। उस पर आपका अधिकार नहीं।

अरे भाई ! मरने से पहले क्षणभंगुर सुख के लिए काहे पाप करते हो। सामर्थ्य है तो किसी क्वांरी से पुनः विवाह करें जैसा कि राजा दशरथ आदि ने किया था उनकी अनेक रानियाँ थी पर सभी पहले क्वांरी ही थी । किसी विवाहिता से दशरथ जी ने प्रेम नहीं किया। पर आजकल पता नहीं ये कौन सी खिचड़ी पक रही है ।

0000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 50
# प्रकट और तीन गुण

- श्वासोच्छ्‌वास, गति और अङ्‌गों को टेढ़ा– मेढ़ा करके किसीका स्पर्श करना– ये सब वायु के कार्य हैं।
- रूप, नेत्र, गर्मी, पाचन क्रिया, पित्त, मेधा, वर्ण, बल, छाया, तेज और शौर्य– ये शरीरमें अग्नितत्त्वसे प्रकट होते हैं।
- पसीना, रसना (स्वादका अनुभव करनेवाली जिह्वा), क्लेद (गलना), वसा (चर्बी), रसा (रस– ग्रहणकी शक्ति), शुक्र (वीर्य), मूत्र और कफ आदिका जो देहमें प्रादुर्भाव होता है, वह जलका कार्य है।
- घ्राणेन्द्रिय, केश, नख और शिराएँ (नाड़ियाँ) भूमितत्त्वसे प्रकट होती हैं।
- शरीरमें जो कोमल पदार्थ – त्वचा, मांस, हृदय, नाभि, मज्जा, मल, मेदा, क्लेदन और आमाशय आदि हैं, वे माताके रजसे उत्पन्न होते हैं।
- शिरा, स्त्रायु और शुक्रका प्रादुर्भाव पितासे होता है तथा काम, क्रोध, भय, हर्ष, धर्माधर्ममें प्रवृत्ति, आकृति, स्वर, वर्ण और मेहन (मूत्रादिकी क्रिया) आदि जीवके शरीरमें स्वतः प्रकट होते हैं (ये दोष और गुण उसके अपने हैं)।

■■■■■

अज्ञान (यथार्थ को न मानना ), प्रमाद, आलस्य, क्षुधा, तृषा, मोह, मात्सर्य, वैगुण्य, शोक, आभास और भय आदि भाव तमोगुणसे होते हैं।

■■■■■

काम, क्रोध, शौर्य, यज्ञकी अभिलाषा, बहुत बोलनेकी आदत, अहंकार तथा दूसरोंका अनादर करना – ये रजोगुणके कार्य हैं।

■■■■■

धर्मकी अभिलाषा, मोक्षकी आकाङ्‌क्षा, भगवान् विष्णु या शिव जी में पराभक्तिका होना, उदारता ये सब सतोगुण के कार्य हैं।

# अध्याय 51
# साधकों का भय दूर

नित्य 12000 अर्थात 120 माला प्रणव (ॐ ) के जप से 365 दिन में अद्वितीय अद्वैत ज्ञान की सिद्धि हो जाती है।

अर्थात 12000 में 365 का गुणा करके गुरु सान्निध्य में जप करें तो पराविज्ञान प्राप्त होगा।

तथा 10000000 ( एक कोटी ) जप से मनुष्य को हनुमान जी के समान सभी सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। पर प्रणव से पहले उसका विनियोग और न्यास भी करें। यह विस्तार से आप आग्नेय पुराण में देखें।

नोट – पर उन सिद्धियों का उपयोग गुरु की आज्ञा के बिना न करें फिर चाहे कैसी भी घटना घटित क्यों न हो रही हो।

00000000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 52
# संतों में श्रेष्ठ वही है जो..............

"दूसरे लोग कहते हैं कि प्रवृत्ति और निवृत्ति–दोनों प्रकारके कर्म करने चाहिये। परंतु वास्तवमें नैष्कर्म्य ही ब्रह्म है; वही भगवान् विष्णुका स्वरूप है– यही श्रेयका भी श्रेय है। जिस पुरुषको अद्वैतज्ञान की प्राप्ति हो जाती है, वह संतोंमें श्रेष्ठ है; वह अविनाशी परब्रह्म विष्णु या महादेव से कभी भेदको नहीं प्राप्त होता। ज्ञान, विज्ञान, आस्तिकता, सौभाग्य तथा उत्तम रूप तपस्यासे उपलब्ध होते हैं। इतना ही नहीं, मनुष्य अपने मनसे जो–जो वस्तु पाना चाहता है, वह सब तपस्यासे प्राप्त हो जाती है। हर व विष्णुके समान कोई ध्येय नहीं है, अखंड संयम से बढ़कर कोई तपस्या नहीं है, आरोग्यके समान कोई बहुमूल्य वस्तु नहीं है और गङ्गाजीके तुल्य दूसरी कोई नदी नहीं है। जगद्गुरु भगवान् हरिहर को छोड़कर दूसरा कोई बान्धव नहीं है।

0000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 53
# इस पृथ्वी पर एक ही सिद्धांत

इस पृथ्वीपर एक ही सिद्धांत बना है–

मैं ही अनेक रूपों को धारण करके भूमि पर आया मैने जिस जिस रूप से जैसा जैसा किया उस उस रूप को वैसा वैसा ही फल मिला और भविष्य में भी मिलेगा। मैने केवल कर्मफल व्यवस्था की है इस वसुन्धरा पर। मेरे लिए न तो कोई अपना न ही पराया।

मैं न तो किसी के पुण्य ग्रहण करता हूँ न ही किसी के पाप।

जो धर्म करेगा वह स्वर्ग का अधिकारी होगा।

जो अधर्म करेगा वह दण्ड का अधिकार पायेगा।

और जो अधर्म न करके धर्म का आचरण करता है पर उस आचरण के फल को इष्ट को समर्पित कर देता है वह उत्तम लोक को जाता है।

धरती पर हर मनुष्य को स्वतंत्रता है। इसमें ईश्वर की इच्छा, शक्ति और सामर्थ्य आदि का हवाला देना ठीक नहीं।

हे लेखक ( पूर्व काल का एपीक्यूरसम् ) यदि तू दुखी है तो तू तेरे ही पूर्व कुकर्म से दुखी है। हे लेखक! यदि तू स्वदेश के निवासियों के दुख को देखकर दुखी है तो भी दुख मत कर वे अपने अपने कर्म दण्ड भोग रहे हैं । और यदि तू आतंकवाद से त्रस्त है तो तू अपनी सुरक्षा इष्ट के रक्षात्मक पाठ से कर ले।

और सामने वाले भाई बन्धु भी तेरी शरण में आयें तो उसे भी रक्षात्मक आवरण प्रदान कर। पर जो मूर्ख नर मनमाना आचरण कर रहे हैं न ही संतों की शरण में हैं वे तो परिवार के सदस्यों से भी विक्षिप्त होते हैं तो पराये पुरुष से कैसे बचेंगे।

देश का राजा भी देश को बचा सकता है पर राजा ( कानून को बनाने बनाने वाला और हिन्दुहितार्थ समय समय पर संसोधन करके नियम बनाने

वाला ही ) यदि भौतिक हो न कि आध्यात्मिक तो देश को कौन बचा पायेगा। पर आप अपनी रक्षा गुरु के द्वारा प्रदत्त विद्या से अवश्य कर सकते हो।

रही बात दुश्मनों की एकता की ......तो आप स्वयं एकता बनाओ तो दुश्मन नष्ट हो जायेंगे। पर यदि पत्नि के पल्लू में ही बंधे रहे और यह सोचते रहे कि पत्नी बच्चों का क्या होगा तो शत्रु  हावी होगा ही क्योंकि वो जान चुका है कि हिन्दु डरपोक है। उसे मात्र यह भय है कि कहीं मैं मर गया तो मेरी घरवाली और बच्चो का क्या होगा ?

सार एक ही है – ईश्वर ने मात्र कर्मफल व्यवस्था की है वह किसी का भी पक्ष या विपक्ष नहीं करता पर अपने आश्रित जनों ( भक्तों ) का साथ उस भक्त की पुकार के अनुसार अवश्य देता है।

000000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 54
# कोई भी उच्च लोक जा सकता है

1. चारो वर्ण में से कोई भी उच्च लोक जा सकता है
2. और चारों वर्णों में से कोई भी नरक भी जा सकता है।
3. ये वर्ण तो एक सामान्य सी बात है जो समाज की व्यवस्था तक ही सीमित है।
4. पर अनासक्त, निश्छल हृदय और धर्मपरायण मनुष्य ही शान्ति को पाता है तथा तद्रूप होने पर ब्रह्मानंद भी।
5. इसमें वानप्रस्थ आश्रम या संन्यास या विशेष वर्ण अनिवार्य नहीं।
6. ये सब अपने अपने स्थान पर ठीक हैं पर
7. मुख्य बात अंतःकरण की है।
8. इसी कारण यह कहा गया कि जो ब्राह्मण अनासक्त है उसी को संन्यास का अधिकार है और उस अनासक्त ब्राह्मण संन्यासी को उच्च स्तरीय लोक मिलता है जबकि 70–75 में भी जो घर परिवार में उलझा है वह ब्राह्मण उच्च लोक का अधिकारी नहीं। और अनासक्त हो जाए तो उसे 75 में या (50 के बाद तत्काल कभी भी) घर छोड़कर चले जाना चाहिए। और अनासक्त क्षत्रिय को भी (50–55 के बाद ) वानप्रस्थ आश्रम स्वीकार कर लेना चाहिए। अतः भोगी क्षत्रिय और भोगी ब्राह्मण को (55 के बाद भी घर में चिपका रहे तो) नमन न करें। नमन का पात्र शास्त्र आज्ञा को मानने वाला है। पर आसक्त और भोगी को नमन करना अक्षयरुद्र अंशभूतशिव के अनुसार अनुचित है। (नोट – घर का सदस्य यदि बड़ा हो तो उसे अवश्य नमन करे उसके सामान्य अवगुण न देखें, वह अति पापी हो तो उसका त्याग कर सकते हैं).............

   0000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 55
# छोटी सी कुटिया

मनुष्य चाहे तो 10x10 के एक रूम  या दो रूम में ही सारी जिंदगी निकाल सकता है पर वह रात दिन 40x40 या 100x100 के 10–12 कक्षों के सपने ही देखता रहता है। और दो पुत्र हों तो एक एक रूम अतिरिक्त बनबा दो।

पर वह तो 10–12 ही चाहता है और हर रूम में 50–50 हजार के ऐश्वर्यात्मक सामान। यह अति परिग्रह ठीक नही। श्शायद लोगों को मरकर छोडने में मजा आता है।...............................खैर!

0000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 56
# ब्याज सहित निकलेगा बेटा!

कीर्ति व पद के लिए पाप न करें।

धनवान बनने के लिए भी पाप न करें।

किसी सुंदर और चरित्रवान युवती से विवाह के लिए भी झूठ का सहारा न लें।

नौकरी के रिश्वत और सोर्स का सहारा न लें। जालसाजी करके किसी की जमीन का एक इंचभाग भी न हड़पे

अब सुनों – जो लोग पाप करके यह सब ( धनाढ्यता, राजनेता या किसी भी प्रकार का पद या कुछ भी ) पा लेते हैं वे बहुत से बहुत 40–50 साल तक यदि ऐश्वर्य पा भी लें तो 4 युगों तक पशु योनी में सड़ते हैं अतः पाप कभी भी नहीं छोड़ता। समाज या पड़ोसी को दिखाने के लिए पाप न करें। पाप करके भले ही कुछ समय भोग मिल जायें पर मरने के बाद ये सब निकल जाते हैं।

– अंशभूत शिव

शुकमार्ग ही सुख का मूल
अप्सरा रम्भा और शुकदेव संवाद

Rambha &' I love you shuk dear

Look at my beautiful body] my body every part of it is the basis of ultimate happiness- There is an ocean of happiness from above to below- Embrace once] O Shukdev dear i love i love you-

Shukadev said & oh Rambha ! Listen to me- O foolish ] seÛual thoughtful mind and lust tainted!!!!!

I am saying truthful Your body is perishable] I meditate only on the beautiful feet of the Supreme Lord- That is the basis of my happiness-

You are Kamini and Maya] the destroyer of my power- But I am also a devotee of Krishna- I know everything-

And listen again o o o foolish ! ] I dont want enjoyment with you for few days or some minutes -i can not waste a minute for fleeting happiness-

The Geeta or Akshayrudra's Bhairav Geeta also says that

One who gives sorrow in the result of happiness] renounce it till death

With the pleasure of your 10 minutes] I will be away from devotion ]so i don't want your seÛual enjoy-

This I know- I want eternal God's happiness- - Please you go away Rambha fool

जड़भरत, ऋषभ देव, सनत्कुमार आदि के निवृत्तिमार्ग को देखकर सत्य का भान सहज ही हो जाता है और जिसका उदय होता है वो मुमुक्षा ही है, वो एकाकी जीवन का उपदेश ही है जो मुक्त करके पथ में भी आनंद देता है और लक्ष्य में भी केवल आनंद ही आनंद की वर्षा कर धन्य कर देता है इसमें मात्र संयम और ब्रह्मचर्य एक मात्र ही कीमत है जो आरंभ में चुकानी पड़ती हैं पर कुछ वर्षों के बाद ये कीमत भी विस्मृत हो जाती है कारण अपने मूल स्वरूप में ही रमण करने लगते हैं शुकमार्गी....वह भी सतत् रूप से देखें उन्होंने कहा था कि'

हे राजा! हे रहूगण! मात्र पूर्व वासनाओं और क्षणिक भोगों की, स्पृहा की आंतरिक दबी हुई सांसारिक इच्छाओं के कारण ही मनुष्य विवाहादि संबंध करके संयोग और वियोग में रोता हुआ दुःखी और भयग्रस्त होता रहता है (जबकि पहले मैथुनी सृष्टि नहीं थी तब भी ब्रह्मकार्य ने कभी भी विराम नहीं लिया तो एक के कारण कौन सी सृष्टि रुक ही जायेगी, वैसे भी जनसंख्या कौन सी कम है) जबकि आत्मा के सुख का मूल बाह्य कारण नहीं मात्र स्वयं का आत्मा है स्वयं ही है। मैने स्वयं अनेक जन्मों के पश्चात इस सत्यता को जाना कि परमगति के लिए निवृत्त होकर एकाकी रहना ही परम कल्याण का एक मात्र हेतु है भोगों की इच्छा कभी भी योग को जन्म नहीं दे सकती, भोगों या स्त्री आदि के भोगने से कामभाव का नाश कभी नहीं होता। कामनायें करके कोई मूर्ख उस प्राप्त हुये भोग को न भोगे, सुख का अनुभव न करे ऐसा कभी भी नहीं होता कि अग्नि में घृत डालने से अग्नि बुझ जाये।

इसका उदाहरण कण्डु नामक मुनि थे जिसकी भोग्या और एक अप्सरा प्रम्लोचा ने 907 वर्षों के बाद कह ही दिया कि हे स्वामी! मैं आपके भय से शांत थी आपने मेरा भोग वर्षों से किया, 100वर्ष बाद मैंने सत्य बताने का प्रयास किया पर आपने कहा कुछ वर्ष और प्रेम दो.....मैं 100वर्ष और रुक गई, फिर पुनः मैंने कहा कि भोगों से योग सिद्ध नहीं होता अतः आप तप करो तो आपने पुनः 200 वर्ष का और संग मांगा.....पर अब आपका जीवन काल के मुख में जा रहा है और आपकी वासना शांत ही नहीं हो पा रही.....और शांत हो भी नहीं सकती।

## रंभा–श्री शुकदेव जी संवाद

रंभा नामक एक अतीव सुंदरी (अप्सरा) श्री शुकदेव जी के रूपलावण्य को देख मुग्ध हो गयी और श्रीशुकदेव जी को लुभाने पहुँची। श्री शुकदेव जी सहज विरागी थे बचपन में ही वह वन चले गए थे उन्होंने ही राजा परीक्षित को भागवत पुराण सुनाया था वे महर्षि वेदव्यास के अयोनिज पुत्र थे और बारह वर्षों तक माता के गर्भ में रहे। श्रीकृष्ण के यह आश्वासन देने पर कि उन पर माया का प्रभाव नहीं पड़ेगा, उन्होंने जन्म लिया। उन्हें गर्भ में ही उन्हें वेद, उपनिषद, दर्शन और पुराण आदि का ज्ञान हो गया था कम अवस्था में ही वह ब्रह्मलीन हो गए थे।

रंभा ने उन्हें देखा, तो वह मुग्ध हो गई और उनसे प्रणय निवेदन किया शुकदेव ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया रंभा उनका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने में जुट गई जब वह बहुत कोशिश कर चुकी, तो शुकदेव ने पूछा, देवी! आप मेरा ध्यान क्यों आकर्षित कर रही हैं। रंभा ने कहा, ताकि हम जीवन का छक कर भोग कर सकें। शुकदेव बोले, देवी! मैं तो उस सार्थक रस को पा चुका हूँ, जिससे क्षण भर हटने से जीवन निरर्थक होने लगता है मैं उस रस को छोड़कर जीवन को निरर्थक बनाना नहीं चाहता कुछ और रस हो, तो भी मुझे क्या? रंभा ने अपने रंग रूप और सौंदर्य की विशेषताएँ बताईं। उसने कहा कि उसके शरीर से सौंदर्य की अजस्र धारा तो बहती ही रहती है, भीनी–भीनी सुवास की लहरियाँ भी फूटती रहती हैं। देवलोक में, जहाँ वह रहती है, कोई कभी वृद्ध नहीं होता। शुकदेव ने यह

सुना तो बोले, देवी! आज हमें पहली बार यह पता लगा कि नारी शरीर इतना सुंदर होता है यह आपकी कृपा से संभव हुआ। अब यदि भगवत प्रेरणा से पुनः जन्म लेना पड़ा, तो मैं नौ माह आप जैसी ही माता के गर्भ में रहकर इसका सुख लूंगा अभी तो प्रभु कार्य ही प्रधान है।

यहाँ हमें ध्यान देना है कि हम इसे श्रृंगार और अध्यात्म का संवाद कह सकते हैं। भोग और मोक्ष का संवाद कह सकते हैं। यहाँ हमें अपनी दृष्टि सांसारिक स्थूलता से हटा कर पारमार्थिक सूक्ष्मता की ओर बड़ी सावधानी से ले जानी चाहिए। यहाँ रंभा को भोग और श्री शुकदेव जी को मोक्ष का प्रतीक मानना चाहिए। इस संवाद के रचयिता अज्ञात हैं यह संवाद आचार्य परंपरा से प्राप्त है लेकिन है यह बहुत प्रसिद्ध।

रंभा रुपसुंदरी है और शुकदेवजी मुनि शिरोमणि। रंभा यौवन और श्रृंगार का वर्णन करते नहीं थकती, तो शुकदेवजी ईश्वरानुसंधान का दोनों के बीच हुआ संवाद अति सुंदर है।

**रम्भा–**

मार्गे मार्गे नूतनं चूतखण्डं खण्डे खण्डे कोकिलानां विरावः।
रावे रावे मानिनीमानभंगो भंगे भंगे मन्मथः पञ्चबाणः।।

हे मुनि! हर मार्ग में नयी मंजरी शोभायमान हैं, हर मंजरी पर कोयल सुमधुर टेहुक रही हैं। टेहका सुनकर मानिनी स्त्रीयों का गर्व दूर होता है, और गर्व नष्ट होते ही  पाँच बाणों को धारण करनेवाले कामदेव मन को बैचेन बनाते हैं।

**श्री शुक उवाच–**

मार्गे मार्गे जायते साधुसङ्गः, सङ्गे सङ्गे श्रूयते कृष्णकीर्तिः ।
कीर्तौ कीर्तौ नस्तदाकारवृत्तिः वृत्तौ वृत्तौ सच्चिदानन्द भासः ।।

हे रंभा! हर मार्ग में साधुजनों का संग होता है, उन हर एक सत्संग में भगवान कृष्णचंद्र के गुणगान सुनने मिलते हैं। हर गुणगाण सुनते वक्त हमारी

चित्तवृत्ति भगवान के ध्यान में लीन होती है, और हर वक्त सच्चिदानंद का आभास होता है।

> तीर्थे तीर्थे निर्मलं ब्रह्मवृन्दं वृन्दे वृन्दे तत्त्व चिन्तानुवादः।
> वादे वादे जायते तत्त्वबोधो बोधे बोधे भासते चन्द्रचूडः ।।

हर तीर्थ में पवित्र ब्राह्मणों का समुदाय विराजमान है। उस समुदाय में तत्त्व का विचार हुआ करता है। उन विचारों में तत्त्व का ज्ञान होता है, और उस ज्ञान में भगवान चंद्रशेखर शिवजी का भास होता है।

**रम्भा–**

> गेहे गेहे जङ्गमा हेमवल्ली वल्यां वल्यां पार्वणं चन्द्रबिम्बम् ।
> बिम्बे बिम्बे दृश्यते मीन युग्मं, युग्मे युग्मे पञ्चबाणप्रचारः ।।

हे मुनिवर! हर घर में घूमती फिरती सोने की लता जैसी ललनाओं के मुख पूर्णिमा के चंद्र जैसे सुंदर हैं। उन मुखचंद्रो में नयनरुप दो मछलीयाँ दिख रही है और उन मीनरुप नयनों में कामदेव स्वतंत्र घूम रहा है ।

**शुक–**

> स्थाने स्थाने दृश्यते रत्नवेदी, वेद्यां वेद्यां सिद्धगन्धर्वगोष्ठी ।
> गोष्ठयां गोष्ठयां किन्नरद्वन्द्वगीतं, गीते गीते गीयते रामचन्द्रः ।।

हे रंभा! हर स्थान में रत्न की वेदी दिख रही है, हर वेदी पर सिद्ध और गंधर्वों की सभा होती है। उन सभाओं में किन्नर गण किन्नरियों के साथ गाना गा रहे हैं। हर गाने में भगवान रामचंद्र की कीर्ति गायी जा रही है।

**रम्भा–**

> पीनस्तनी चन्दनचर्चिताङ्गी, विलोलनेत्रा तरुणी सुशीला ।
> नाऽऽलिङ्गिता प्रेमभरेण येन, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम् ।।

हे मुनिवर! सुंदर स्तनवाली, शरीर पर चंदन का लेप की हुई, चंचल आँखों वाली सुंदर युवती का, प्रेम से जिस पुरुष ने आलिंगन किया नहीं, उसका जन्म व्यर्थ गया।

**शुक–**

अचिन्त्य रूपो भगवान्निरञ्जनो, विश्वम्भरो ज्ञानमयश्चिदात्मा ।
विशोधितो येन हृदि क्षणं नो, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम् ।।

जिसके रुप का चिंतन नहीं हो सकता, जो निरंजन, विश्व का पालक है, जो ज्ञान से परिपूर्ण है, ऐसे चित्स्वरुप परब्रह्म का ध्यान जिसने स्वयं के हृदय में किया नहीं है, उसका जन्म व्यर्थ गया।

**रम्भा–**

कामातुरा पूर्णशशांक वक्त्रा, बिम्बाधरा कोमलनाल गौरा ।
नाऽऽलिङ्गिता स्वे ह्र्दये भुजाभ्यां, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम् ।।

हे मुनि! भोग की ईच्छा से व्याकुल, परिपूर्ण चंद्र जैसे मुखवाली, बिंबाधरा, कोमल कमल के नाल जैसी, गौर वर्णी कामिनी जिसने छाती से नहीं लगायी, उसका जीवन व्यर्थ गया।

**शुक–**

चतुर्भुजः चक्रधरो गदायुधः, पीताम्बरः कौस्तुभमालया लसन् ।
ध्याने धृतो येन न बोधकाले, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम् ।।

हे रंभा! चक्र और गदा जिसने हाथ में लिये हैं, ऐसे चार हाथ वाले, पीतांबर पहने हुए, कौस्तुभमणि की माला से विभूषित भगवान का ध्यान, जिसने जाग्रत अवस्था में किया नहीं, उसका जन्म व्यर्थ गया ।

**रम्भा–**

विचित्रवेषा नवयौवनाढ्या, लवङ्गकर्पूर सुवासिदेहा ।
नाऽऽलिङ्गिता येन दृढं भुजाभ्यां, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम् ।।

हे मुनिराज! अनेक प्रकार के वस्त्र और आभूषणों से सज्ज, लवंग कर्पूर इत्यादि सुगंध से सुवासित शरीर वाली नवयुवती को, जिसने अपने दो हाथों से आलिंगन दिया नहीं, उसका जन्म व्यर्थ गया।

**शुक–**

नारायणः पङ्कजलोचनः प्रभुः, केयूरवान् कुण्डल मण्डिताननः।
भक्त्या स्तुतो येन न शुद्धचेतसा, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम् ।।

कमल जैसे नेत्रवाले, केयूर पर सवार, कुंडल से सुशोभित मुखवाले, संसार के स्वामी भगवान नारायण की स्तुति जिसने एकाग्रचित्त होकर, भक्तिपूर्वक की नहीं, उसका जीवन व्यर्थ गया।

**रम्भा–**

प्रियवंदा चम्पकहेमवर्णा, हारावलीमण्डितनाभिदेशा।
सम्भोगशीला रमिता न येन, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे मुनिवर! प्रिय बोलनेवाली, चंपक और सुवर्ण के रंगवाली, हार का झुमका नाभि पर लटक रहा हो ऐसी, स्वभाव से रमणशील ऐसी स्त्री से जिसने भोग विलास नहीं किया, उसका जीवन व्यर्थ गया।

**शुक–**

श्रीवत्सलक्षाङ्कितहृत्प्रदेशः, तार्क्ष्यध्वजः शार्ङ्गधरः परात्मा।
न सेवितो येन नृजन्मनाऽपि, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

जिस प्राणी ने मनुष्य शरीर पाकर भी, भृगुलता से विभूषित हृदयवाले, ध्वजा में गरुड वाले, और शाङ्ग नामके धनुष्य को धारण करनेवाले, परमात्मा की सेवा न की, उसका जन्म व्यर्थ गया।

**रम्भा–**

चलत्कटी नूपुरमञ्जुघोषा, नासाग्रमुक्ता नयनाभिरामा।
न सेविता येन भुजङ्गवेणी, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे मुनिश्रेष्ठ! चंचल कमरवाली, नूपुर से मधुर शब्द करनेवाली, नाक में मोती पहनी हुई, सुंदर नयनों से सुशोभित, सर्प के जैसा अंबोडा जिसने धारण किया है, ऐसी सुंदरी का जिसने सेवन नहीं किया, उसका जन्म व्यर्थ गया।

**शुक–**

विश्वम्भरो ज्ञानमयः परेशः, जगन्मयोऽनन्तगुण प्रकाशी।
आराधितो नापि वृतो न योगे, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे रंभा! संसार का पालन करनेवाले, ज्ञान से परिपूर्ण, संसार स्वरुप, अनंत गुणों को प्रकट करनेवाले भगवान की आराधना जिसने नहीं की, और योग में उनका ध्यान जिसने नहीं किया, उसका जन्म व्यर्थ गया।

**रम्भा–**

ताम्बूलरागैः कुसुम प्रकर्षैः, सुगन्धितैलेन च वासितायाः।
न मर्दितौ येन कुचौ निशायां, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे मुनि! सुगंधी पान, उत्तम फूल, सुगंधी तेल, और अन्य पदार्थों से सुवासित कायावाली कामिनी के कुच का मर्दन, रात को जिसने नहीं किया उसका जीवन व्यर्थ गया।

**शुक–**

ब्रह्मादि देवोऽखिल विश्वदेवो, मोक्षप्रदोऽतीतगुणः प्रशान्तः।
धृतो न योगेन हृदि स्वकीये, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

ब्रह्मादि देवों के भी देव, संपूर्ण संसार के स्वामी, मोक्षदाता, निर्गुण, अत्यंत शांत ऐसे भगवान का ध्यान जिसने योग द्वारा हृदय में नहीं किया उसका जीवन व्यर्थ गया।

**रम्भा–**

कस्तूरिकाकुंकुम चन्दनैश्च, सुचर्चिता याऽगुरु धूपिकाम्बरा।
उरः स्थले नो लुठिता निशायां, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

कस्तूरी और केसर से युक्त चंदन का लेप जिसने किया है, अगरु के गंध से सुवासित वस्त्र धारण की हुई तरुणी, रात को जिस पुरुष की छाती पर लेटी नहीं, उसका जन्म व्यर्थ गया।

**शुक–**

आनन्दरुपो निजबोधरुपः, दिव्यस्वरूपो बहुनामरपः।
तपः समाधौ मिलितो न येन, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे रंभा! आनंद से परिपूर्ण रुपवाले, दिव्य शरीर को धारण करनेवाले, जिनके अनेक नाम और रुप हैं ऐसे भगवान के दर्शन जिसने समाधि में नहीं किये, उसका जीवन व्यर्थ गया।

**रम्भा–**

कठोर पीनस्तन भारनम्रा, सुमध्यमा चञ्जलखञ्जनाक्षी।
हेमन्तकाले रमिता न येन, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

जिस पुरुष ने हेमंत ऋतु में, कठोर और भरे हुए स्तन के भार से झुकी हुई, पतली कमरवाली, चंचल और खंजर से नैनोंवाली स्त्री का संभोग नहीं किया, उसका जीवन व्यर्थ गया।

**शुक–**

तपोमयो ज्ञानमयो विजन्मा, विद्यामयो योगमयः परात्मा।
चित्ते धृतो नो तपसि स्थितेन, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे रंभा! तपोमय, ज्ञानमय, जन्मरहित, विद्यामय, योगमय परमात्मा को, तपस्या में लीन होकर जिसने चित्त में धारण नहीं किया, उसका जीवन व्यर्थ गया।

**रम्भा–**

सुलक्षणा मानवती गुणाढ्या, प्रसन्नवक्त्रा मृदुभाषिणी या।
नो चुम्बिता येन सुनाभिदेशे, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे मुनिवर! सद्लक्षण और गुणों से युक्त, प्रसन्न मुखवाली, मधुर बोलनेवाली, मानिनी सुंदरी के नाभि का जिसने चुंबन नहीं किया उसका जीवन व्यर्थ गया।

**शुक–**

पल्यार्जितं सर्वसुखं विनश्वरं, दुःखप्रदं कामिनिभोग सेवितम्।
एवं विदित्वा न धृतो हि योगो, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे रंभा! जिस इन्सान ने, नारी के सेवन से उत्पन्न सब सुख नाशवंत, और दुःखदायक है ऐसा जानने के बावजुद जिसने योगाभ्यास नहीं किया, उसका जीवन व्यर्थ गया।

**रम्भा–**

विशालवेणी नयनाभिरामा, कन्दर्प सम्पूर्ण निधानरुपा।
भुक्ता न येनैव वसन्तकाले, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

जिस पुरुष ने वसंत ऋतु में लंबे बालवाली, सुंदर नेत्रों से सुशोभित कामदेव के समस्त भंडाररुप ऐसी कामिनी के साथ विहार न किया हो, उसका जीवन व्यर्थ गया।

**शुक–**

मायाकरण्डी नरकस्य हण्डी, तपोविखण्डी सुकृतस्य भण्डी।
नृणां विखण्डी चिरसेविता चेत्, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे रंभा! नारी माया की पटारी, नर्क की हंडी, तपस्या का विनाश करनेवाली, पुण्य का नाश करनेवाली, पुरुष की घातक है इस लिए जिस पुरुष ने अधिक समय तक उसका सेवन किया है, उसका जीवन व्यर्थ गया।

**रम्भा–**

समस्तशृङ्गार विनोदशीला, लीलावती कोकिल कण्ठमाला।
विलासिता नो नवयौवनेन, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे मुनि! जिस पुरुष ने अपनी युवानी में, समस्त शृंगार और मनोविवाद करने में चतुर और अनेक लीलाओं में कुशल और कोकिलकंठी कामिनी के साथ विलास नहीं किया, उसका जीवन व्यर्थ है।

**शुक–**

समाधि ह्रंत्री जनमोहयित्री, धर्मे कुमन्त्री कपटस्य तन्त्री।
सत्कर्म हन्त्री कलिता च येन, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

समाधि का नाश करनेवाली, लोगों को मोहित करनेवाली, धर्म विनाशिनी, कपट की वीणा, सत्कर्मो का नाश करनेवाली नारी का जिसने सेवन किया, उसका जीवन व्यर्थ गया।

**रम्भा–**

बिल्वस्तनी कोमलिता सुशीला, सुगन्धयुक्ता ललिता च गौरी।
नाऽऽश्लेषिता येन च कण्ठदेशे, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे मुनिराज! बिल्वफल जैसे कठिन स्तन है, अत्यंत कोमल जिसका शरीर है, जिसका स्वभाव प्रिय है, ऐसी सुवासित केशवाली, ललचानेवाली गौर युवती को जिसने आलिंगन नहीं दिया, उसका जीवन व्यर्थ गया।

**शुक–**

यथादुःखमया सदोषा, संसारपाशा जनमोहकर्त्री।
सन्तापकोशा भजिता च येन, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

चिंता, पीडा, और अनेक प्रकार के दुःख से परिपूर्ण, दोष से भरी हुई, संसार में बंधनरुप, और संताप का खजाना, ऐसी नारी का जिसने सेवन किया उसका जन्म व्यर्थ गया।

**रम्भा–**

आनन्द कन्दर्पनिधान रुपा, झणत्क्वणत्कं कण नूपुराढ्या।
नाऽस्वादिता येन सुधाधरस्था, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे मुनिवर! आनंद और कामदेव के खजाने समान, खनकते कंगन और नूपुर पहेनी हुई कामिनी के होठ पर जिसने चुंबन किया नहीं, उस पुरुष का जीवन व्यर्थ है।

**शुक–**

कापट्यवेषा जनवञ्चिका सा, विण्मूत्र दुर्गन्धदरी दुराशा।
संसेविता येन सदा मलाढ्या, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

छल–कपट करनेवाली, लोगों को बनानेवाली, विष्टा–मूत्र और दुर्गंध की गुफारुप, दुराशाओं से परिपूर्ण, अनेक प्रकार से मल से भरी हुई, ऐसी स्त्री का सेवन जिसने किया, उसका जीवन व्यर्थ है।

**रम्भा–**

चन्द्रानना सुन्दरगौरवर्णा, व्यक्तस्तनीभोगविलास दक्षा।
नाऽऽन्दोलिता वै शयनेषु येन, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे मुनिवर! चंद्र जैसे मुखवाली, सुंदर और गौर वर्णवाली, जिसकी छाती पर स्तन व्यक्त हुए हैं ऐसी, संभोग और विलास में चतुर, ऐसी स्त्री को बिस्तर में जिसने आलिंगन नहीं दिया, उसका जीवन व्यर्थ है।

**शुक–**

उन्मत्तवेषा मदिरासु मत्ता, पापप्रदा लोकविडम्बनीया।
योगच्छला येन विभाजिता च, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे रंभा! पागल जैसा विचित्र वेष धारण की हुई, मदिरा पीकर मस्त बनी हुई, पाप देनेवाली, लोगों को बनानेवाली, और योगीयों के साथ कपट करनेवाली स्त्री का सेवन जिसने किया है, उसका जीवन व्यर्थ है।

**रम्भा–**

आनन्दरुपा तरुणी नगाङ्गी, सद्धर्मसंसाधन सृष्टिरुपा।
कामार्थदा यस्य गृहे न नारी, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे मुनि! आनंदरुप, नतांगी युवती, उत्तम धर्म के पालन में और पुत्रादि पैदा करने में सहायक, इंद्रियों को संतोष देनेवाली नारी जिस पुरुष के घर में न हो, उसका जीवन व्यर्थ है।

**शुक–**

अशौचदेहा पतित स्वभावा, वपुःप्रगल्भा बललोभशीला।
मृषा वदन्ती कलिता च येन, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

अशुद्ध शरीरवाली, पतित स्वभाववाली, प्रगल्भ देहवाली, साहस और लोभ करानेवाली, झूठ बोलनेवाली, ऐसी नारी का विश्वास जिसने किया, उसका जीवन व्यर्थ है।

**रम्भा–**

क्षामोदरी हंसगतिः प्रमत्ता, सौंदर्यसौभाग्यवती प्रलोला।
न पीडिता येन रतौ यथेच्छं, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे मुनिवर! पतली कमरवाली, हंस की तरह चलनेवाली, प्रमत्त सुंदर, सौभाग्यवती, चंचल स्वभाववाली स्त्री को रतिक्रीडा के वक्त अनुकुलतया पीडित की नहीं है, उसका जीवन व्यर्थ है।

**शुक–**

संसारसद्भावन भक्तिहीना, चित्तस्य चौरा हृदि निर्दया च।
विहाय योगं कलिता च येन, वृथा गतं तस्य नरस्य जीवितम्।।

हे रंभा! संसार की उत्तम भावनाओं को प्रकट करनेवाले प्रेम से रहित पुरुषों के चित्त को चोरनेवाली, हृदय में दया न रखनेवाली, ऐसी स्त्री का आलिंगन, योगाभ्यास छोडकर जिस पुरुष ने किया, उसका जीवन व्यर्थ है।

**रम्भा–**

सुगन्धैः सुपुष्पैः सुशय्या सुकान्ता वसन्तो ऋतुः पूर्णिमा पूर्णचन्द्रः।
यदा नास्ति पुंस्त्वं नरस्य प्रभूतं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्।।

हे मुनिवर! सुंदर, सुगंधित पुष्पों से सुशोभित शय्या हो, मनोनुकूल सुंदर स्त्री हो, वसंत ऋतु हो, पूर्णिमा के चंद्र की चांदनी खीली हो, पर यदि पुरुष में परिपूर्ण पुरुषत्त्व न हो तो उसका जीवन व्यर्थ है।

**शुक–**

सुरुपं शरीरं नवीनं कलत्रंधनं मेरुतुल्यं वचश्चारुचित्रम्।
हरस्याङ्घ्रि युग्मे मनश्चेदलग्नं ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्।।

हे रंभा! सुंदर शरीर हो, युवा पत्नी हो, मेरु पर्वत समान धन हो, मन को लुभानेवाली मधुर वाणी हो, पर यदि भगवान शिवजी के चरणकमल में मन न लगे, तो जीवन व्यर्थ है।

# अध्याय 57
# ममता नाशक अध्याय

विष्णु पुराण चतुर्थ अंश अध्याय 24 के 9 श्लोको में .ममता नाशक शक्ति है क्योंकि ये 9 श्लोक यथार्थ ज्ञान का दर्पण हैं जो भूमाता की वाणी है ) यह 9 श्लोक पृथ्वी गीता कहलाती हैं। यह ममता ही मानव से पाप कराती है यह ममता ही दुख देती है। सब जानते हैं कि हम एक दिवस अवश्य मर जाएंगे पर फिर भी मेरा मेरा अर्थात् मेरापन नहीं छोडते जिससे सब पाप करके नरक में गिरते हैं। सुनें –

पृथिवी कहती है–

1. अहो ! बुद्धिमान् होते हुए भी इन राजाओंको यह कैसा मोह हो रहा है जिसके कारण ये बुलबुलेके समान क्षणस्थायी होते हुए भी अपनी स्थिरतामें इतना विश्वास रखते हैं ॥
2. ये लोग प्रथम अपनेको जीतते हैं और फिर अपने मन्त्रियोंको तथा इसके अनन्तर ये क्रमशः अपने भृत्य, पुरवासी एवं शत्रुओंको जीतना चाहते हैं ॥ इसी क्रमसे हम समुद्रपर्यन्त इस सम्पूर्ण पृथिवीको जीत लेंगे' ऐसी बुद्धिसे मोहित हुए ये लोग अपनी निकटवर्तिनी मृत्युको नहीं देखते ॥
3. यदि समुद्रसे घिरा हुआ यह सम्पूर्ण भूमण्डल अपने वशमें हो ही जाय तो भी मनोजयकी अपेक्षा इसका मूल्य ही क्या है ?
4. क्योंकि मोक्ष तो मनोजयसे ही प्राप्त होता है ॥
5. जिसे छोड़कर इनके पूर्वज चले गये तथा जिसे अपने साथ लेकर इनके पिता भी नहीं गये उसी मुझको अत्यन्त मूर्खताके कारण ये राजालोग जीतना चाहते हैं।
6. जिनका चित्त ममतामय है उन पिता–पुत्र और भाइयों में अत्यन्त मोहके कारण मेरे ही लिये परस्पर कलह होता है।

7. जो–जो राजालोग यहाँ हो चुके हैं उन सभीकी ऐसी कुबुद्धि रही है कि यह सम्पूर्ण पृथिवी मेरी ही है और मेरे पीछे यह सदा मेरी सन्तानकी ही रहेगी ॥
8. इस प्रकार मेरे में ममता करनेवाले एक राजाको, मुझे छोड़कर मृत्युके मुखमें जाते हुए देखकर भी न जाने कैसे उसका उत्तराधिकारी अपने हृदयमें मेरे लिये ममताको स्थान देता है ?
9. जो राजालोग दूतोंके द्वारा अपने शत्रुओंसे इस प्रकार कहलाते हैं कि 'यह पृथिवी मेरी है तुमलोग इसे तुरन्त छोड़कर चले जाओ' उनपर मुझे बड़ी हँसी आती है और फिर उन मूढोंपर मुझे दया भी आ जाती है।

श्रीपराशरजी बोले– हे मैत्रेय ! पृथिवीके कहे हुए इने श्लोकोंको जो पुरुष सुनेगा उसकी ममता इसी प्रकार लीन हो जायेगी जैसे सूर्य के तपते समय बर्फ पिघल जाता है।

मैत्रेय पृथिवीगीता श्लोकाश्चात्र निबोध तान् ।
यानाह धर्मध्वजिने जनकायासितो मुनिः ॥

पृथिव्युवाच ––

कथमेष नरेन्द्राणां मोहो बुद्धिमतामपि ।
येन फेन सधर्माणोऽप्यभिविश्वस्तचेतसः ॥ 1 ॥

पूर्वमात्मजयं कृत्वा जेतुमिच्छन्ति मन्त्रिणः ।
ततो भृत्यांश्च पौरांश्च जिगीषन्ते तथा रिपून् ॥ 2 ॥

क्रमेणानेन जेष्यामो वयं पृथ्वीं ससागराम् ।
इत्यासक्तधियो मृत्युं न पश्यन्त्यविदूरकम् ॥ 3 ॥

समुद्रावरणं याति मन्मण्डलमथो वशम् ।
कियदात्मजयादेतन्मुक्तिरात्मजये फलम् ॥ 4 ॥

उत्सृज्य पूर्वजा याता यां नादाय गतः पिता ।
तां ममेति विमूढत्वात् जेतुमिच्छन्ति पार्थिवाः ॥ 5 ॥

मत्कृते पितृपुत्राणां भ्रातां चापि विग्रहाः ।
जायन्तेऽत्यन्तमोहेन ममताधृतचेतसाम् ॥ 6 ॥

पृथ्वी ममेयं सकला ममैषा मदन्वयस्यापि च शाश्वतीयम् ।
यो यो मृतो ह्यत्र बभूव राजा कुबुद्धिरासीदिति तस्य तस्य ॥ 7 ॥

दृष्ट्वा ममत्वादृतचित्तमेकं विहाय मां मृत्युवशं व्रजन्तम् ।
तस्यानु यस्तस्य कथं ममत्वं हृद्यास्पदं मत्प्रभवः करोति ॥ 8 ॥

पृथ्वी ममैषाशु परित्यजैनां वदन्ति ये दूतमुखैः स्वशत्रुम् ।
नराधिपास्तेषु ममातिहासः पुनश्च मूढेषु दयाभ्युपैति ॥ 9 ॥

श्री पराशर उवाच

इत्येते धरणीगीताश्लोका मैत्रेय यैः श्रुतैः ।
ममत्वं विलयं याति तपत्यर्के यथा हिमम् ॥

**<u>इति पृथिवीगीता समाप्ता</u>**

हमारा धन नाम की कमाई है और यदि यह कहो कि कमायेगा नहीं तो खायेगा और पहनेगा क्या?

24 घंटे नाम, जप तप ध्यान से क्या होगा?

तो सुनों भाई!!

हम तो गीता 9.22, 18.66 के अधीन हैं, हरि नाम की शक्ति से योगक्षेम वहन हो अथवा भिक्षुक बने रहें हमें फर्क नहीं पड़ता क्योंकि संघर्ष का मूल कारण हमने मात्र ब्रह्मचर्य पालन से कोसों दूर कर दिया।

जिसको भोगो ( कंचन से या कामिनी से अथवा ऐश्वर्य से)
की स्पृहा नहीं उसके संघर्षों की गठरी अकामी होने से एक पल में ही (ब्रह्मचर्य रूपी तेज से ) जल जाती है।
और

रही जन कल्याण कार्य की बात तो प्रजा जब तक जनहितार्थ देती रहेगी तब तक हम आध्यात्मिक योजनाओं को करता रहेंगे।

भीड़तंत्र से मुक्त। ।।

**चरणों में तेरे अर्पित हूँ केशव**

चरणों में तेरे अर्पित हूँ केशव,
समझो यूं कि पुष्प हूँ केशव,
मन अभिषेक समझ ओ केशव।
तन सेवक ग्रहण लो केशव।

वाक् तनोमन अर्पित हो केशव,
श्वांस प्रश्वांस समाये हो केशव,
अंश अभिन्न हूँ तुम्हारा केशव।
नाम अनंत कहूँ कैसे ओ केशव।

पुकार सुनो नम चक्षु है केशव,
आशीष से अपने रंगों ओ केशव,
लीला अनन्त रचाये हो केशव।
प्रह्लाद परमेष्ठ नृसिंह हो केशव।

सृष्टि ब्रह्म रूप सजाये हो केशव,
पालन हरि रूप हो केशव,
संहारी गंगाधर इष्ट हो केशव।
तिरोभाव महेश अदृश्य हो केशव।

अनुग्रह सदाशिव प्रिय हो केशव,
**अक्षय आनन्द** परब्रह्म हो केशव,
कंचन कामिनी माया है केशव भौतिक पदार्थ।
जादू ये कैसा छाया है केशव।

कलिकाल विष से बचाओ हे केशव,
नाम जपूं सदा हे केशव,
सुमिरन करूं सदा है केशव,
वक्त नजाकत न जानूं है केशव।
काम–द्वेषादि हरो हे केशव।

सर्वमय शिव अनादि रूप हो केशव,
आँवला तुलसी प्रिय है केशव,
गो, गुरू, गीता धाम है केशव।
भव रोग से छुड़ाओ हे केशव।

विरह तेरे न जिया जाए केशव,
कल्प कोटि से व्यथा है केशव,
कहीं थम न जाए वक्त हे केशव।
प्यास अंखियन की बुझा हे केशव।

संत विरक्ति मीरा–भक्ति हो केशव,
ब्रह्मज्ञान, मर्यादा राम हो केशव,
शिव–शक्ति राधावल्लभ हो केशव।
अयमात्मा ब्रह्म अभिन्न हो केशव।

मथुरा वृन्द रज रूप हो केशव,
**ग्रन्थ रहस्य** में समाए हो केशव,
अंत श्वांस नाम रहे केशव।
विनति बस इतनी है केशव।

जहाँ में अनगिनत नर हैं केशव,
सकाम सुमिरन करते हैं केशव
भक्त सूरमा बिरले है केशव।
जो सर्वत्याग भजे है केशव।

मोहनी रूप रूद्र बचाये हो केशव,
गीता–अमृत अर्जुन सुनाए हो केशव,
शेष शैय्या चतुर्भुजी हो केशव।
गोपी वस्त्र प्रिय चुराए हो केशव।

भक्त वत्सल एकादशी रूप हो केशव,
प्रेम दल–तुलसी तृप्त हो केशव,
मुरली धारी अंशभूत भाए हो केशव।
बहुत हुआ अब तो आओ हे केशव!

इंद्रियों की समस्त चंचलताओं का निरोध अर्थात् भ्रमित बुद्धि का नाश होकर जब बुद्धि एकमात्र परमात्मा में अचल एवं स्थिर हो जाती है वही अवस्था परमयोग कहलाती है।

सब ओर से परिपूर्ण जलाशय के प्राप्त होने पर छोटे जलाशय में मनुष्य का जितना प्रयोजन रहता है, ब्रह्म को तत्त्व से (सर्वमय) जानने वाले ज्ञानी (उपनिषद अनुसार अद्वैतवादी ही ज्ञाननिष्ठ एवं परम ब्राह्मण है, उसी) का समस्त वेदों में उतना ही प्रयोजन रहता है। शांति हेतु आत्मा रूपी शाश्वत तत्त्व का ज्ञान अनिवार्य है जो मेरी भक्ति से ही स्थिर हो सकता है। यथार्थ में सर्वमय ऊँ कार

तत्त्व के अलावा जगत् मिट्टी और पानी के सिवाय और कुछ नहीं है। एक और बात–

जीवन में सफल होना हो तो
इस महास्तोत्र का पाठ
शुभ मुहूर्त से हर
शैव और हर वैष्णव नित्य करे।

अक्षयरुद्र का यह अनुभव है। और वह फल भी देख चुके ।वास्तव में अद्भुत स्तोत्र है यह।

बोलो जय जय श्री हरिहर जय जय शिवहरि।

विजय स्तोत्रम्–

शिव हरे शिव राम सखे प्रभो त्रिविधतापनिवारण हे विभो।
अज जनेश्वर यादव पाहि मां शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ १ ॥

कमललोचन राम दयानिधे हर गुरो गजरक्षक गोपते।
शिवतनो भव शङ्कर पाहि मां शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ २ ॥

सुजनरञ्जन मङ्गलमन्दिरं भजति ते पुरुषः परमं पदम् ।
भवति तस्य सुखं परमद्भुतं शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ ३ ॥

जय युधिष्ठिरवल्लभ भूपते जय जयार्जितपुण्यपयोनिधे ।
जय कृपामय कृष्ण नमोऽस्तु ते शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ ४ ॥

भवविमोचन माधव मापते सुकविमानसहंस शिवारते।
जनकजारत राघव रक्ष मां शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ ५ ॥

अवनिमण्डलमङ्गल मापते जलदसुन्दर राम रमापते ।
निगमकीर्तिगुणार्णव गोपते शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ ६ ॥

पतितपावन नाममयी लता तव यशो विमलं परिगीयते ।
तदपि माधव मां किमुपेक्षसे शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ ७

अमरतापरदेव रमापते विजयतस्तव नामधनोपमा ।
मयि कथं करुणार्णव जायते शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ ८ ॥

हनुमतः प्रिय चापकर प्रभो सुरसरिद्धृतशेखर हे गुरो।
मम विभो किमु विस्मरणं कृतं शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ ६ ॥

अहरहर्जनरञ्जनसुन्दरं पठति यः शिवरामकृतं स्तवम् ।
विशति रामरमाचरणाम्बुजे शिव हरे विजयं कुरु मे वरम् ॥ १० ॥

प्रातरुत्थाय यो भक्त्या पठेदेकाग्रमानसः ।
विजयो जायते तस्य विष्णुमाराध्यमाप्नुयात् ॥ ११ ॥

अर्थ–

1. हे शिव! हे हरे,
2. हे शिव, हे राम,
3. हे सखे! हे प्रभो,
4. हे त्रिविध तापनिवारण विभो ! हे अज,
5. हे जगन्नाथ, हे यादव!
6. मेरी रक्षा करोः हे शिव! हे हरे! मेरी कल्याणमय विजय करो ॥१॥
7. हे कमललोचन दयानिधे राम! हे हर! हे गुरो !
8. हे गजरक्षक! हे गोपते!
9. हे कल्याण रूपधारी भव! हे शंकर! मेरी रक्षा करो;
10. हे शिव! हे हरे! मेरा उत्तम विजय– साधन करो ॥ २ ॥
11. हे सज्जन मनरंजन! जो पुरुष तुम्हारे मंगलमन्दिर (शिव और विष्णुरूप) परमपदका आश्रय लेते हैं,
12. उन्हें परम दिव्य सुख प्राप्त होता है; अतएव हे शिव! हे हरे! मेरा वर विजय साधन करो ॥ ३ ॥
13. हे युधिष्ठिरके प्रियतम ! हे भूपते! आप विजयी हों।
14. हे पुण्यमहासागरके उपार्जन करनेवाले! आपकी जय हो, जय हो;
15. हे दयामय कृष्ण! आपकी जय हो, आपको नमस्कार है;
16. हे शिव! हे हरे! आप मेरी कल्याणमय विजय करें ॥ ४ ॥
17. हे भवभयहारी माधव ! हे लक्ष्मीपते!

18. हे सुकवि–मानस हंस! हे पार्वतीप्रिय ! हे जानकीजीवन राघव! मेरी रक्षा करो,
19. हे शिव! हे हरे! मेरा वर विजयसम्पादन करो ॥ ५ ॥
20. हे भूमिमण्डलके मंगलस्वरूप ! हे श्रीपते!
21. हे घनश्याम सुन्दर! हे राम! हे रमापते!
22. हे वेदवर्णित गुण–सागर!
23. हे गोपते! हे शिव!
24. हे हरे! मेरी कल्याणमय विजय करो ॥ ६ ॥
25. हे पतितपावन! तुम्हारा नाम कल्पलता है,
26. तुम्हारा यश नित्य सर्वत्र गाया जाता है तथापि हे माधव! तुम मेरी उपेक्षा क्यों कर रहे हो ?
27. हे शिव! हे हरे! मेरा शुभ विजय साधन करो ॥ ७
28. हे देवोंमें श्रेष्ठ देव! हे दयासागर रमापते ! सर्वत्र विजय पानेवाले तुझ परमेश्वरके नामरूपी धनका आदर्श कोष मेरे पास किस प्रकार संचित हो जायगा ?
29. हे शिव! हे हरे! मेरा परम विजय–साधन करो ॥ ८ ॥
30. हे हनुमत्प्रिय! हे चापधारी प्रभो!
31. हे शीशपर गंगाजीको धारण करनेवाले गुरुदेव !
32. हे विभो ! तुम क्यों मुझे भूल गये ?
33. हे शिव! हे हरे! मेरा परम जय – साधन करो ॥ ९ ॥

जो मनुष्य इस लोकप्रिय सुन्दर श्रीरामानन्द स्वामी के द्वारा विरचित शिवराम – स्तवका पाठ करता है, वह राम–रमाके चरणकमलोंमें प्रवेश करनेमें समर्थ होता है।

हे शिव! हे शिव! हे हरे! मेरा श्रेष्ठ विजय साधन करो ॥ १० ॥

जो प्रातः काल उठकर एकाग्रचित्तसे इन महानतम शिव और राम मय श्लोकों से युक्त इस शिवरामस्तोत्रका पाठ करता है, उसकी सर्वत्र जय होती है और वह अपने आराध्यदेव विष्णुको निश्चित ही प्राप्त होता है ॥ ११

# अध्याय 58
# 18 वर्ष तक या विवाह से पहले

जो पुरुष या जो स्त्री 18 वर्ष तक या विवाह से पहले ही संपूर्ण कामनाओं को जीत लेते हैं अर्थात इच्छाओं के महाबंधन से मुक्त हो जाते हैं उनका सारा जीवन सुख और आनंद में बीतता है। फिर उनको किसी भी प्रकार का मानसिक कष्ट नहीं होता। वे सदा ब्रह्मसुख का रसास्वादन करते हैं। इसके विपरीत जो कामकामी महत्वाकांक्षी है वह चाहे भगवा पहनकर जंगल में चला जाए या हजारों उपदेश देता रहे अथवा 24 तो क्या 240 पुस्तकें भी लिख दे तो भी ब्रह्मसुख का उपभोग नहीं कर सकता ।

तृष्णा का दास चाहे वानप्रस्थी हो चाहे संन्यास आश्रम धारण कर ले ; वह तृष्णा का शिकार चाहे ब्राह्मण हो या शूद्र अथवा चाण्डाल सदा ही मारा मारा फिरता है।

अतः हे निज स्वरूपों ! तुम यह भलीभांति जान लो कि तुम साक्षात ब्रह्म ही हो न कि काम या क्रोध के दास अतः अपनी स्त्रीलम्पटता या लोभ व मोह आदि से मुक्त हो जाओ। और मैं वही हूँ ऐसा जानकर तद्भावित ही रहो।

यही मुक्ति है यही निर्वाण और यही अपरोक्ष ज्ञान कहा गया है योगवसिष्ठ में ज्ञान की उच्च स्तरीय भूमिका यही घोषित है। कर्म पुराण के देवी चरित्र में 323 श्लोक हैं उन सबका सार भी यही है कि तुम वही हो न कि बंधन युक्त पशु। इस भाव के लिए आपको महान संतों का संग करना होगा पर वे महासंत कैसे हों इसका वर्णन मात्र अवधूत उपनिषद या अवधूत गीता ही दे सकती है अन्य नहीं ।

अपना स्वरूप बोध ही परम लक्ष्य है न कि धन , संतान, ऐश्वर्य या पद के लिए विलाप करना।

# अध्याय 59
# परम ब्राह्मण के गुण

ब्राह्मण 8 प्रकार के बताये गए हैं जिसमें कुछ अल्प फलदायक है और कुछ अधिक फलदायक। ये सब उनके त्याग और तपस्या के कारण है। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि ASI का कम सम्मान होता है और TI का अधिक तथा कलेक्टर का उससे भी अधिक आदि आदि।

पर वह यदि आठ प्रकारों से भी च्युत हो जाए तो सेवन या ग्रहण के योग्य नहीं रह जाता ।

जैसे कि तीन काल की संध्या का अभाव, वेद पाठ का अता पता नहीं, अग्निहोत्र भी पता नहीं। और यदि वह वेद पाठ भी करता हो या अग्निहोत्र भी पर यदि वह पीठ पीछे परस्त्रीगमन रूपी जघन्य अपराध में involved हो चुका तो वह ब्राह्मण पूजा सत्कार तो दूर नमन के भी योग्य नहीं ऐसा गरुड पुराण व ब्रह्म वैवर्त पुराण कहता है।

कृपया यहाँ कोई वज्रसूचिक उपनिषद की बात आज न करें। उसकी यथार्थता पर बाद में पोस्ट होगी। उसका सम्यक् वर्णन तो हमारी पुस्तक मैं ब्रह्म हूँ में हुआ ही है।

पर यहाँ ब्राह्मण वर्ण पर यह कथन है जो किसी संत के वचन हैं। पर मिश्रित कर दिये।

रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी
ने लिखा है कि –
भगवान श्री राम जी ने श्री परशुराम जी से कहा कि →
"देव एक गुन धनुष हमारे।
नौ गुन परम पुनीत तुम्हारे।।"
हे प्रभु! हम क्षत्रिय हैं हमारे पास एक ही गुण
अर्थात धनुष ही है आप परम ब्राह्मण हैं क्योकि आप में
परम पवित्र 9 गुण है–

आदर्श ब्राह्मणों –के–नौ–गुण :–
रिजुः तपस्वी सन्तोषी क्षमाशीलो जितेन्द्रियः|
दाता शूरो दयालुश्च ब्राह्मणो नवभिर्गुणैः||

- रिजुः = सरल हो,
- तपस्वी = तप करनेवाला हो,
- संतोषी= मेहनत की कमाई पर सन्तुष्ट, रहनेवाला हो,
- क्षमाशीलो = क्षमा करनेवाला हो,
- जितेन्द्रियः = इन्द्रियों को वश में रखनेवाला हो,
- दाता= दान करनेवाला हो,
- शूर = बहादुर हो,
- दयालुश्च= सब पर दया करनेवाला हो,
- ब्रह्मज्ञानी,

श्रीमद् भगवत गीता के 18वें अध्याय के 42श्लोक में भी यथार्थ ब्राह्मण के कुछ गुण– ( पद्म पुराण, स्कंद पुराण आदि में चाण्डाल ब्राह्मण और शूद्र ब्राह्मण के अवगुणों की भी बात है वह यहाँ प्रस्तुत नहीं कर रहे )

इस प्रकार बताए गये हैं–

"शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च|
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्म कर्म स्वभावजम्||"

अर्थात–

- मन का निग्रह करना,
- इंद्रियों को वशमें करना,
- तप( धर्म पालन के लिए कष्ट सहना),
- शौच (बाहर भीतर से शुद्ध रहना),शान्तस्वभाव और क्षमा (दूसरों के अपराध को क्षमा करना),

●आर्जवम ( शरीर, मन आदि में सरलता रखना)

● वेद शास्त्र आदि का ज्ञान होना, यज्ञ विधि को अनुभव में लाना

और परमात्मा वेद आदि में आस्तिक भाव

रखना यह सब ब्राह्मणों के स्वभाविक कर्म हैं।

**अब तो सुमिरन करना होगा....**
**अब तो सुमिरन करना होगा,**
**खुशी हो या हो गम का आलम।**
**चाहे जगवासी समझे पागल,**
**लक्ष्य जीवन का पाना होगा**
**अब तो सुमिरन करना होगा।।**

**भव बंधन अब बहुत हो गया,**
**करके याद गुरू की वन्दे।**
**अष्ट पाश से बचना होगा,**
**जन्म–मरण से रक्षा हेतु**
**अब तो सुमिरन करना होगा।।**

**तृष्णा विष को बहुत पी लिया,**
**दुःखों में अब तक बहुत जी लिया।**
**अब तो अमृत पीना होगा,**
**चाहे मरण या विरह की पीड़ा**
**अब तो सुमिरन करना होगा।।**

**माँ को देकर गर्भ की पीड़ा,**
**बार–बार के गर्भ का कीड़ा।**
**हमें नहीं अब बनना होगा,**
**जरा व्याधि से रक्षा हेतु**
**अब तो सुमिरन करना होगा।।**

**भक्ति का विकल्प नहीं और,**
**कामनाओं का नहीं है छोर।**
**आसक्ति की हत्या करके,**
**हत्यारा अब बनना होगा।**
**अब तो सुमिरन करना होगा।।**

**प्रथम सीढ़ी गुरूदीक्षा चढ़कर,**
**यम नियम में सब से बढ़कर।**
**शिवमय जीवन पाना होगा**
**पशुता में बहुत जी लिया**
**अब तो सुमिरन करना होगा।।**

**देह क्षरण का नहीं भरोसा,**
**फिर भी महल क्यों भर लिया।**
**व्यर्थ का कर्म बहुत कर लिया**
**कर्म बंधन से मुक्ति हेतु**
**अब तो सुमिरन करना होगा।।**

**मान मिले या अपमान,**
**परिस्थिति विपरीत या अनुकूल।**
**ध्येय की अन्तिम सीढ़ी पाकर**
**परम् निर्वाण पाना होगा**
**अब तो सुमिरन करना होगा।।**

कहने का तात्पर्य है कि परम् ध्येय (सुख, आनन्द, प्रेम, विश्रांति यह भी सतत् रूप से) प्राप्ति ही आत्मा (प्रत्येक प्राणी) का परम् कर्त्तव्य है। अन्य मत–मतान्तर एवं भ्रम जंजालों में कुछ नहीं रखा, जीवन अनंत है क्योंकि आत्मा अनन्त है अतः भय, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा आदि विकार त्यागकर संसार रूपी महापरिवार में वैसे ही रहो जैसे कि हम छः–सात सदस्यों से युक्त लक्षु परिवार में रहते हैं अर्थात् वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना से ओतप्रोत रहो।

यदि प्रत्येक मानव यथार्थ में इस पृथ्वी को अपना कुटुम्ब मानकर चलेगा तो वह निःसंदेह सभी प्रकार के संकटों (खासकर आतंकवाद, जातिवाद, वर्णवाद, दहेजवाद...........) से मुक्त रहेगा। **समस्त प्रकार के संकटों का कारण वास्तव में सम्यक दर्शन (समदर्शी अर्थात् भेदभावरहित होकर सभी को परमेश्वर की संतानें मानकर निजबन्धु–बांधव मानने) का अभाव ही है और यह सम्यक दर्शन केवल गुरूकृपा से प्राप्त सम्यक ज्ञान (आत्मतत्त्व, शिवतत्त्व तथा गुरूतत्त्व के अपरोक्ष बोध) से ही संभव है।**

**000000000000000000000000000000000000000000000000000000000000000**

# अध्याय 60
# तत्काल वैराग्य जगाने वाला परम सच

45 वर्ष तक आते आते विवेकवान व्यक्ति का राग नष्ट हो जाता है होगा भी क्यों नहीं इस आयु तक वे सभी शिक्षको का समुदाय भी चिता पर नंगा ही सो चुका होता है, जिन्होनें आपको प्राथमिक या माध्यमिक विद्यालय में शिक्षा दी थी और हायर सेकंडरी के आचार्यगणों के पाँव भी कवर में लटके होते है और उनकी हालत भी बड़ी ही दयनीय हो जाती है उनके बच्चे विदेश में होते है और ये महाशय बेचारे स्वयं साईकिल से गेंहू पिसवाने जाते हैं स्वयं ही या नौकर से अन्य कार्य करवाते हैं तथा शारीरिक दर्द की तो पूछो ही मत, फिर भी इन सभी को देखकर भी हम किशोरों को यथार्थ

नहीं दिखाई देता वे किशोर भी भरी जवानी में मात्र रंगरलियां ही मनाते रहते हैं अथवा एकाध प्रेमिका मिल जाए तो उसी के चिन्तन में अपना युवापना नष्ट कर डालते हैं और पद या लोकेष्णा तक की संकीर्ण सोच ही प्राप्त कर पाते हैं वे मूर्ख कभी भी सोच ही नहीं पाते कि ध्रुव और मीरा जैसे ठाठ बाट वालों ने या शंकराचार्य जी ने संसार का त्याग क्यों किया ऐसा क्या है  हरि के लिए सरेण्डर होने में जो 5 करोड़ के महल में नहीं जो स्त्री और पुरुष के शरीर में नहीं जो कलेक्टर या मंत्री अथवा राष्ट्रपति बनने में नहीं।

उनमें होगा भी क्या?

इन सब पदों के लिए भेड़ जैसा भीड़तंत्र चारों ओर फैला हुआ है आप नही बनोगे तो और दूसरा बन जायेगा।

अरे !

आजकल तो सरकारी दफ्तर में चपरासी बनने के लिए भी ॅपजपदह सपदम लगी है फिर आपके क्षेत्र के पद विशेष को कौन नहीं चाहेगा पर सत्य यही है कि ऐसे पद की भूख वाले  99 फीसदी  लोग रजोगुणी और महत्वाकाँक्षी होते हैं।

वे देश सेवा तो औपचारिक करते हैं यथार्थ में प्रसिद्ध होना चाहते हैं कि मेरा थोपड़ा समाज और राज्य में छा जाये।

बस

अन्यथा वे उस समय नहीं रोते जब वे हारते हैं।

सबकी जलना है चिता

एक दिन

आज उसकी जली

कल मेरी

और परसों

जलेगी तेरी भी

सबकी जलना है

एक दिन ।

# अध्याय 61
# पूर्व जन्म का शव

चिता सज रही है अर्थात् लकड़ियों का ढेर लगाया जा रहा है ऐसी काष्ठ एक के ऊपर एक रखी जा रही है ताकि वे गिरे न और शव भी शान्ति से जल जाये।

और.. अब मेरे शव को इस पर रखा गया , रखने से पहले भाई बंधु मेरे चेहरे को गौर से देख रहे थे और सिसक सिसक कर आँसु बहाये जा रहे थे और उन गलतियों के लिए माफी माँग रहे थे जो मेरे जीवित होने पर उनसे हुई थी, मैने क्षमा कर दिया सबको, सोचा कि गलतियाँ मनुष्य से ही होती है पर ...

बोलते ही रहो। हरि हरि जय जय श्री हरि

हरये नमः हरये नमः हरये नमः

जमाना बहुत से बहुत आपको पागल कहेगा और कुछ भी नहीं अभी आपकी आयु 16–17 हो तो महामूर्ख कहेगा जगत। हमको भी 1999 में मात्र 18 वर्ष में यह पद मिल चुका है पर जिन्होनें कहा था वे मरने से पहले हमारे चरण छूकर ही मरें।

अर्थात आप हरि मार्ग पर हो तो वह सभी एक दिन स्वयं इस मार्ग पर न आ सकें तो आपके दर्शन से भी उनको संतोष होने लगता है अभी नहीं तो वे 50–55 में आपकी सच्चाई को समझ लेते हैं कि हाँ अंशभूत आपका कार्य ही

सच्ची दौलत थी पर हमनें फैशन के चक्कर में आपका मजाक उड़ाया अतएव क्षमा करें।

और अति पापी हुए वे तो मरने पर चिता भूमि ( श्मशान)
पर अवश्य ही आपसे क्षमा माँग लेते हैं।

खैर.....

जो भी हो पर प्रभु स्मरण न छोड़े।

भज मन

नारायण नारायण नारायण......

देखो भागवत क्या कहती है –

जो मनुष्य गिरते–पड़ते, फिसलते, दुःख भोगते अथवा छींकते समय विवशतासे भी ऊँचे स्वरसे बोल उठता है 'हरये नमः', वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है ॥ ४६ ॥

( श्रीमद्भागवत महापुराण द्वादश स्कंध अध्याय 12 श्लोकार्थ 47,48)

यदि देश, काल एवं वस्तुसे अपरिच्छिन्न भगवान् श्रीकृष्णके नाम, लीला, गुण आदिका सङ्कीर्तन किया जाय अथवा उनके प्रभाव, महिमा आदिका श्रवण किया जाय तो वे स्वयं ही हृदयमें आ विराजते हैं और श्रवण तथा कीर्तन करनेवाले पुरुषके सारे दुःख मिटा देते हैं ठीक वैसे ही जैसे सूर्य अन्धकारको और आँधी बादलोंको तितर–बितर कर देती है ॥ ४७ ॥ जिस वाणीके द्वारा घट–घटवासी अविनाशी भगवान् के नाम, लीला, गुण आदिका उच्चारण नहीं होता, वह वाणी भावपूर्ण होनेपर भी निरर्थक है सारहीन है, सुन्दर होनेपर भी असुन्दर है और उत्तमोत्तम विषयोंका प्रतिपादन करनेवाली होनेपर भी असत्कथा है। जो वाणी और वचन भगवान्के गुणोंसे परिपूर्ण रहते हैं, वे ही परम पावन हैं, वे ही मङ्गलमय हैं और वे ही परम सत्य हैं ॥ ४८ ॥ जिस वचनके द्वारा भगवान्के परम पवित्र यशका गान होता है, वही परम रमणीय, रुचिकर एवं प्रतिक्षण नया–नया जान पड़ता है। उससे अनन्त कालतक मनको परमानन्दकी अनुभूति होती रहती है। मनुष्योंका सारा शोक, चाहे वह समुद्रके समान लंबा और गहरा क्यों नं हो, उस वचनके प्रभावसे सदाके लिये सूख जाता है ॥ ४६ ॥ जिस वाणीसे— चाहे वह रस, भाव, अलङ्कार आदिसे युक्त ही क्यों न हो दृजगत्को पवित्र करनेवाले भगवान्

श्रीकृष्णके यशका कभी गान नहीं होता, वह तो कौओंके लिये उच्छिष्ट फेंकनेके स्थानके समान अत्यन्त अपवित्र है।

पतितः स्खलितश्चार्तः क्षुत्त्वा वा विवशो ब्रुवन् ।

हरये नम इत्युच्चैर्मुच्यते सर्वपातकात् ।।

**0000000000000000000000000000000000000000000000000000000000000000**

# अध्याय 62
# मनुष्य को पाप करने का अधिकार नहीं

मनुष्य को पाप करने का अधिकार नहीं। यदि वह आपका स्वर्ण, रजत, कन्या, गाय या गाड़ी (वाहन) अथवा पैसा आदि चुराता है तो अगले जन्म में वह इतनी ही धनराशि ब्याज सहित चुकाता है।

बस यही है कर्मचक्र । अतः आपकी कोई भी वस्तु चोरी हो जाये तो अति दुख न मनाये न ही भगवान को कोसे न ही भाग्य को कोसे। इस धरती पर सभी के नवीन नवीन कर्मफल अपने आप बढ़ते जाते हैं। भगवान ने सबको स्वतंत्र कर रखा है। पर हाँ प्राकृतिक आपदाओं ( बाढ़ तूफान, ज्वालामुखी विस्फोट, दुर्घटना में अंग भंग होना )

की चपेट में आना या मौसमीय पीड़ा ( सर्दी गरमी का शारीरिक कष्ट ) अवश्य पाप का दण्ड है। और पुत्र या बहु द्वारा जो कष्ट माता पिता सास ससुर को दिया जाता है वह भी आपके पाप का दण्ड नहीं अपितु उनको ही भयंकर पाप लगता है। पत्नि यदि पड़ोसी के साथ मुख काला कर रही हो तो वह भी आपका पाप नहीं अपितु उसके कुकर्म का फल वही भोगेगी तथा वह परपुरुष भी।

वैसे भी सोचने वाली बात है कि यदि भाग्य में ही स्त्री का परपुरुष से कुसंग लिखा होता तो परपुरुष को दण्ड नहीं मिलना चाहिए था पर विधान केवल इतना है कि परनारी भोग से उस पुरुष को दण्ड अवश्य मिलेगा। अतः इससे भी यह बात सिद्ध होती है कि किसी स्त्री को दूषित करना

पुरुष का कुकर्म मात्र है । अतः पति लोग दुखी न हो। यह आपका पाप फल है ही नही।

# अध्याय 63
# संत वेश धारण करना सरल नहीं

संत वेश धारण करना या साधुओं की तरह दिखाई देना कोई सरल बात नहीं इसमें पग पग पर बहुत कुछ सोचना पड़ता है। उसकी हजारों मर्यादायें हो जाती है। इस कारण जो लोग कहते हैं कि भगवा धारण से कुछ नहीं होता; वे गलत कहते हैं। हालांकि स्थितप्रज्ञ को सोचना नहीं पड़ता सब कुछ सहज होता है। संत वेश का तात्पर्य यह मान लो कि दसों दिशाओं में आपके चारो ओर सीसीटीवी केमरा लगना।

–,अक्षयरुद्र अंशभूतशिव

Wearing the attire of a saint is not an easy task. One has to think a lot at every step- It has thousands of restrictions- That is why those who say that wearing saffron clothes does not help] they are wrong-

Consider the meaning of saintly attire to be CCTV cameras installed all around you in all the ten directions.

# अध्याय 64
# 100 साल से ज्यादा एक स्वामी बर्दाश्त नहीं

जमीन का भूखण्ड अर्थात् भूभाग 100 साल से ज्यादा एक स्वामी को बर्दाश्त नहीं करता ।

जब ये मकान बनना शुरू हुआ होगा तो घर वालों ने कितने शौक से बनाया होगा कितनी शिद्दत से इसकी सजावट की होगी । सब देख देखकर फूले न समाये होंगे

और अपनी किस्मत पर गर्व होकर छाती फूल गई होगी। पर ये छाती मात्र 20–30 साल तक थी न कि टिल ऑलवेज। क्योंकि श्मशान की तीन क्विंटल लकड़िया में ही जलना जो तय था। भार्या कहती होगी यहां ये डिज़ाइन बनाना है यहां पर ये दरवाज़ा लगना है और यहाँ पर ऐसी खिड़की रखनी है.

आह... चले गए ना सब. यहां से सब को जाना है । आपको भी हमको भी। अतः परामबा से नाता जोड़ो। न कि लूटपाट करो।

ज़मीन और मकान के लिए न लड़ा करो मालिको।

ज़मीन 100 साल से ऊपर एक मालिक बर्दाश्त नहीं करती है। आपका पुत्र अच्छा भी होगा तो आपका पोता उस जमीन या घर को बेंचकर दूर निश्चित ही जायेगा।

पुश्तैनी घर कोई पसंद नहीं करता आधुनिक युग में। यह सब एक सज्जन ने अपने लेख में प्रस्तुत किया था अतः उनके वैराग्य को नमन। आगे पुनः कहा कि –

मालिक बदलते रहते हैं ................कमाई की हद तय करो............अति मत भटको............

जीना सीखो एक उम्र के बाद अपनी मर्जी से कहीं जा भी नही सकोगे। आज खुद के लिए वक्त नहीं निकलता कल कहीं गिर ना जाओ कहीं खो ना जाओ ........नही पापा वहां नही जाना है आकर बीमार पड़ जाओगे। बच्चे भी फिर बहाना लगा देंगे । और अगर गलती से जिद्द कर के चले भी गए और

कहीं चोट लग गई या बीमार हो गए तो वही बच्चे बहू सो दो सौ ताने देने लगेंगे हमने तो पहले ही रोका था अब कौन करेगा इनका । बच्चे देखें या इन्हें। अगली बार से ऐसे करेंगे तो मैं नही करूंगी करके बहू भी पल्ला झाड़ लेगी। जब तक जियो जी भर कर जियो। क्योंकि जिनके लिए जोड़ रहे हो कल वही तुम्हे आराम नही करने देंगे।
उनसे पूछ कर आराम करना होगा।

ये दुनियां एक नाटक है अपना किरदार निभाते चलो तुम इस नाटक का हिस्सा भर हो ।

● किसी बेतहाशा कमाने वाले या 5–10 करोड़ जिसके बैंक में हैं उसके अंतिम दिनों के समय पूछना क्या मिला जोड़ते जोड़ते?

क्या मिला सपने मारते मारते ....यूँ ही जीकर क्या मिला।

कितना सुख हुआ।

वो कहेगा तजुर्बा यही कहता है खुद से पूछ कर करता हूं तो "ना" मिलती है अर्थात nothing happened---

ना ही कुछ शाश्वत ब्रह्ममय सुख मिला।

और बैंक में उस मनी का सोच सोचकर आँसु भी आ रहे है । काश ! 20प्रतिशत से 25 आध्यात्मिक कार्य में लगा डालता।

यह अध्याय 64 एक महान संत के अमृत वचन हैं हालांकि वक्त और परिस्थिति से थोड़े–बहुत शब्द एड करना पड़ा जिनके पालन से भी जीव काफी हद तक दुखों से मुक्त हो जाता है। अतः उन संत को नमन आशा है कि लोग संत वाणी को अपनाएं और जीवन में निखार लाये इस पुस्तक के कुल 81 अध्यायों में तीन अध्याय संतों की ही वाणी या उनके लेख हैं जो हमको जीव के कल्याण के लिए अच्छे लगे इस कारण इनको पुस्तक की शोभा बना दिया। वैसे भी इस अक्षयरुद्र अंशभूतशिव का एक भी शब्द अपना नहीं कुछ शब्द भगवान वेदव्यास जी ने सिखाये कुछ संतों के प्रवचनों ने और कुछ आध्यात्मिक शास्त्रों को पढ़कर निचोड़ निकाला और कुछ जलती चिता और रोगी व बीमार नर नारी देखकर सत्य का बोध हुआ। और मुख्य भूमिका तो गुरुदेव की होती ही है। अतः सभी को नमस्कार।

हम केवल एक माध्यम हैं कर्ता मात्र गुरुदेव और संतजन की कृपा।

# अध्याय 65
# अधिक का फल सदा अधिक ही

एक नाम या एक गायत्री का फल कम ही होता है 1000 मंत्र का अधिक तथा 10 लाख का फल और भी ज्यादा। अर्थात् अधिक का फल सदा अधिक ही होता है अतः बहाने न बनाये और जितना हो सके अपने लक्ष्य को पाने के लिये उतना ही अधिक प्रयास करें। यदि ईश्वर की प्राप्ति भी करना है तो यदि आपका तन कहीं व्यस्त हो तो मन और बुद्धि तो है ही न, अतः अपने मन और बुद्धि से आप जिस प्रकार संसार का चिंतन मनन करते हो उसी प्रकार प्रभु के मनन में कौन सी समस्या है। आप मानसिक कार्यों की व्यस्तता कहकर भी बहाना नहीं बना सकते ईश्वर सब कुछ जानता है।

आप मानसिक कार्य भी कितना कर सकते हो बहुत से बहुत सुबह 10से 5तक बांकी, भगवान को चूना क्यों लगाते हो।

अच्छा बताओ तो सही......

सुबह 5 से 10 तक मन और बुद्धि में क्या चलता है? तथा शाम को (ज़िमत वपिबपंस ूवता) 5के बाद रात भर (12तक) किसका चिंतन करते हो?

और जो ग्रहणियाँ हैं वे भी रोटी बनाते समय, सब्जी काटते समय, बर्तन साफ करते करते, झाड़ू पोंछा के समय भी तथा नहाते धोते भी क्या सोचकर दिन काटती हैं। ये सबको पता है।

वे नारियाँ राधे राधे जपती हैं या अनावश्यक फ्यूचर प्लानिंग।

सच में कितना समय है प्रभु स्मरण के लिए (बहुत समय है) पर हम मक्कारी मारते हैं 17 बहाने बनाते हैं सीधी सी बात क्यों नहीं कहते कि आपको भोग और इधर उधर की निंदा ही प्रिय है।

आप बार बार कहते हो कि समय नहीं है...........हम सुमिरन कैसे करें।? सब झूठ बोलते हो।

सहेली या मित्र से चैटिंग पैटिंग या कॉल पर आधा एक घण्टा नष्ट मत करो।

उस आधे घण्टे में महान ग्रंथ श्रीमद्‌भागवत या वैराग्य शतक पढ़ो, पर तुमको कामवासना ये युक्त सैक्सुअल पुस्तकें पढ़ने से फुर्सत मिले तो न।

हे पुरुषों! अति अनिवार्य न हो तो नित्य शेविंग में समय बर्बाद मत करो सप्ताह में एक दिन बुधवार ही पर्याप्त है वैसे भी शायद आपको पता नहीं है कि रविवार को क्षौर कर्म नहीं किया जाता और जो लोग सोमवार को क्षौरकर्म करते हैं उनको परम ज्ञान की प्राप्ति नहीं होती और शनि, गुरु और मंगल को सपने में भी क्षौर कर्म न करें और हे नारियों! तुम हर 2–4 दिन में ब्यूटी पार्लर की ओर मत भागो.....इस संदर्भ में एक बात सुनो, आप जिस पार्लर पर जाती हो और यदि पार्लर वाली स्त्री रजोधर्म से युक्त है या परपुरुषगामी है तो आपको इसका परिणाम बहुत घातक होगा। विस्तार से बताने की आवश्यकता नहीं है अतः जब तक अति अनिवार्य न हो तब तक पार्लरों पर न जाए यदि धन अधिक हो तो गाय माता को चारा खिला दें या पार्लर वाली गरीब हो तो उसको पवित्र तिथियों में धन का दान कर सकती हो पर अपनी बॉडी को उसके हाथ से स्पर्श न करवाएं।

अतः पॉर्लर न जाने से वह समय भी बचेगा और टीवी या मोबाइल के माध्यम से सत्संग का श्रवण या गीता का पाठ कर सकती हो।

ये जो थोपड़ा है न इसके साथ अति मत करो, मरने के बाद जप तप का फल ही जायेगा और ये चिकना चेहरा आग में जल जाएगा अतः आवश्यकता के अनुसार ही अपने देह की सेवा करें अति वैसे भी हर जगह वर्जित है। हे अक्षयरुद्र! पूर्ण ब्राह्मण कौन ?

उत्तर– यह सब शिव पुराण में विद्येश्वर संहिता में लिखा है आप देखें साथ में अन्य महत्वपूर्ण बात भी सुनें –

शिव पुराण विद्येश्वर संहिता अध्याय 13 श्रीमद्देवीभागवत महापुराण नवें स्कन्ध के अध्याय 26 से तथा अग्निपुराण 541,671 पृष्ठ पर भी वर्णित है ..

●नित्य एक हजार बार किया हुआ जप ब्रह्मलोक प्रदान करनेवाला होता है–ऐसा जानना चाहिये।

●नित्य सौ बार किया हुआ जप इन्द्रपदकी प्राप्ति करानेवाला माना गया है।

● कुल 100 लाख जप से ब्राह्मण संपूर्ण पापों से मुक्त हो जाता है और 10 लाख से तीन से 10 जन्मों की शुद्धि हो जाती है। अतः जप तप में प्रमाद न करना तभी परम मंगल होगा।

●ब्राह्मणेतर पुरुष आत्मरक्षाके लिये जो स्वल्पमात्रामें जप करता है, वह ब्राह्मणके कुलमें जन्म लेता है।

(इतरत्त्वात्म रक्षार्थं ब्रह्मयोनिषु जायते शि. पु. विद्ये. सं. अध्याय 13, श्लोक 45)

●बारह लाख गायत्रीका जप करनेवाला पुरुष पूर्णरूपसे ब्राह्मण कहा गया है।

●जिस ब्राह्मणने एक लाख गायत्रीका भी जप न किया हो, उसे वैदिक कार्यमें न लगाये।

●एक दिन बिना गायत्री के बीते तो एक माला अतिरिक्त करें।

●10 दिन का अंतराल हो गया हो तो एक लाख गायत्री से उस दोष का मार्जन हो जाता है पर एक माह से अधिक दिन बीत गए हो तो पुनः उपनयन संस्कार कराना चाहिए।

( यह प्रमाण शिव पुराण विद्येश्वर संहिता अध्याय 13 में श्लोक 30,31 में देखें )

●पर आधुनिक युग में कर्मकांड के लिए अनिवार्य पात्रता एक लाख गायत्री जापक कही गई है इसका तात्पर्य यह है कि यदि किसी ब्राह्मण ने संध्या छोड़ दी हो 10 दिन से अधिक समय तक या एक दो मास तो पहले तो पुनः उपनयन संस्कार कराकर 1 लाख अतिरिक्त जपे इससे दोष निवारण होगा तदोपरान्त कर्मकांड के लिए पात्र बनने के लिए पुनः 100000 गायत्री जपे।

इतना करने पर भी आप यजमान का अधिक कल्याण नहीं कर पाओगे ; क्योंकि पूर्ण ब्राह्मण ही यजमान का पूर्ण कल्याण करता है और पूर्ण ब्राह्मण कौन ? यह

शिव पुराण की विद्येश्वर संहिता के अध्याय 13 में श्लोक 46 देखें अर्थात अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक 12 लाख गायत्री मंत्र का जप करके ही आप यजमान का परम मंगल कर सकोगे।

सत्तर वर्षकी अवस्थातक नियमपालनपूर्वक कार्य करे। इसके बाद गृह त्यागकर संन्यास ले ले। परिव्राजक या संन्यासी पुरुष नित्य प्रातःकाल बारह हजार प्रणवका जप करे।

यदि एक दिन नियमका उल्लंघन हो जाय, तो दूसरे दिन उसके बदलेमें उतना मन्त्र और अधिक जपना चाहिये; इस प्रकार जपको चलानेका प्रयत्न करना चाहिये। यदि क्रमशः एक मास उल्लंघनका व्यतीत हो गया हो तो डेढ़ लाख जप करके उसका प्रायश्चित्त करना चाहिये। इससे अधिक समयतक नियमका उल्लंघन हो जाय तो पुनः नये सिरेसे गुरुसे नियम ग्रहण करे। यह भी इसी विद्येश्वर संहिता के अध्याय 13 में है।

ऐसा करनेसे दोषोंकी शान्ति होती है, अन्यथा रौरव नरकमें जाना पड़ता है।

कितना बड़ा तू महल बना ले,
चारपाई केवल तेरी है।
स्त्री, पुत्र खूब सजा ले,
अंतिम बारी तेरी है।
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

कर योग्य संत की सेवा पूजा,
उन जैसा नहीं कोई दूजा।
जीव सुन सत्य कहानी,
पूर्णत्व अद्वैत वाणी है।
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

जगत के सुन्दर चेहरों में,
लुटते केवल कामी हैं।
देखना है तो परम को देख,
राम मय शिव ही दानी है।
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

सद्गुरु को परम तीर्थ जान,
क्यों करता है झूठा मान।
ब्रह्मनिष्ठ में ही रहने वाले,
काशी, प्रयाग, और कन्याकुमारी है
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

जुआ, शराब और हिंसा,
श्राद्ध पर्व पर कामुकता।
विनाश काल की झांकी है,
होकर भी बूढ़ा क्यों कर बचकानी है।
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

त्रयऐषणा अब तो छोड़,
काल लायेगा अंतिम मोड़।
समझ ले प्राणी प्रथम कर्त्तव्य,
विशुद्धता ही जिन्दगानी है।
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

आज जो तू संत बना,
त्याग की ये निशानी है।
विज्ञान की अधिष्ठात्री,
दिव्य शक्ति ब्रह्माणी है।
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

जिसको कुभाव से तू देख रहा,
भविष्य में निश्चित ही,
उसकी गंदगी का तू निवासी है।
जड़ नहीं चैतन्य तू रूहानी है,
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

क्यों भूलता है अपने को,
क्यों जाता है कोठे को।
गर न कर पाये संयम तू,
पत्नी सर्वसौख्य की रानी है।
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

शहीदों को जो तू भूल रहा,
पतन की यह निशानी है।
तेरा आज जो स्वतंत्र अस्तित्व,
बलिदानों की ये निशानी है।
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

ज्ञान दृष्टि खोल जरा,
तत्त्व से नहीं भेद किसी में।
मेरा परम और तेरा तुच्छ,
मूढ़ता की ये निशानी है।
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

जो भी तुझे दिख रहा,
अज्ञान और मायारानी है।
भिन्न दृष्टि त्याग जरा,
भेद ही जगत कहानी है।
मैं सत्यम् शिवम् बोल रहा,
जगत् मिट्टी और पानी है।

"जो कमाएगा वो जतायेगा पर यह संकीर्ण सोच है कमाने वाला या कमाने वाली क्यों जताए। यदि अधिक गरज है तो अकेले रहो धन ही खाओ। पर सामने वाले का सहयोग 1प्रतिशत भी लेते हो तो जताओ मत कि मैं कमाता या कमाती हूँ।

यह छोटी मोटी बाते ही लड़ाई की जननी है। पति या पत्नि दोनों में एक जिद्दी हो तो वह परिवार श्मशान के समान दुखालय हो जाता है। श्मशान में भी 99 प्रतिशत लोग रोते है ऐसे घर में भी उन दोनों में से एक की जिद्द के चक्कर में पूरा घर दुखी होता है उनके बच्चों का मन भी खिन्न होने से परीक्षा फल खराब आता है। अतः यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नही कि युवती या युवक के लक्षण (लच्क्षण) देखकर ही विवाह करें आजीवन अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक रहना अच्छा है पर जिद्दी या महत्वाकांक्षी या अति कामुक से विवाह दुखदायक है।

अधिक भूमि , महंगी गाड़ी , आलीशान बंगला ,
और उसमें महंगी वस्तुओं को भरने के लिए जो नियत बिगाड़कर लूट खसोट की जाती है वह भविष्य में भयंकर दुख देती है। ये सब कुछ झूठा नाम कमाने के लिए पापी लोग करते हैं परंतु मरने पर Entire property's यहीं इसी लोक में छूट जाती है और वह मूर्खानन्द हमारी ही गली का कुत्ता बनकर पूंछ हिलाता है या चूहा बनकर रोटीचोर बनता है। काहे ये सब करते हो हे पागलों ! चुपचाप 10 किलो आटे की मंथली रोटी खाओ और तपस्या न बने तो राम राम बोलो । पर किसी की बद्दुआ मत लो। और जिस्म की भूख मिटाने के लिए भी पराई औरत का इस्तेमाल मत करो वह परनारी नरक का द्वार है । - Akshayrudra 10.8.24 ✍️

00000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 66
# पच्चीस साल के होकर क्या हासिल कर लोगे

65 साल के बुजुर्ग 25 साल के होकर क्या हासिल करने की ख्वाहिश रखते होंगे

महाभारत में एक प्रसंग है जहां ययाति अपने पुत्रों से युवा जीवन का आनंद लेने की इच्छा व्यक्त करते हैं और अपने पुत्रों से अपने युवा शरीर को अपने पुराने शरीर के साथ बदलने के लिए कहते हैं। उनके पुत्रों में से एक, पुरु सहमत हो जाता है और ययाति पुरु के युवा शरीर का उपयोग करके भौतिक शरीर के सुखों का आनंद लेता है। कुछ वर्षों के बाद, उसे इस बात का अहसास होता है कि इच्छाएं (काम) अतृप्त हैं। इस अहसास की प्रकृति नीचे दिए गए श्लोक में दी गई है।

इत्यवेक्ष्य महाप्रज्ञः कामनां फल्गुतां नृप।
समाधाय मनोबुद्ध्या प्रत्ययगृह्णाज्जरं सुतात्।।

यह देखकर और इस बात से संतुष्ट होकर कि इच्छाएं कभी तृप्त नहीं होतीं, महाबुद्धिमान राजा ने अपने पुत्र (पुरु) से अपनी वृद्धावस्था पुनः प्राप्त कर ली।

तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः।

तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः ॥

अर्थात, हमने भोग नहीं भुगते, बल्कि भोगों ने ही हमें भुगता है; हमने तप नहीं किया, बल्कि हम स्वयं ही तप्त हो गये हैं; काल समाप्त नहीं हुआ हम ही समाप्त हो गये; तृष्णा जीर्ण नहीं हुई, पर हम ही जीर्ण हुए हैं !

क्या आज धोखे में ठगे गए वृद्ध ययाति के इस अनुभव से कुछ सीख लेगा श्री मद्भागवत का निम्न श्लोक ऐसे सभी वृद्ध व्यक्तियों के लिये पठनीय मननीय है

पृथिवी रत्नसम्पूर्णा हिरण्यं पश्वः स्त्रीः।
नाल्मेकस्य तत् सर्वम् इति मत्वा शमं व्रजेत्।।

जब कोई व्यक्ति सारी पृथ्वी को, उसके धन, हीरे, सोने, पशुओं और स्त्रियों सहित भोग ले, तब भी उसकी इच्छाएं कभी तृप्त नहीं होंगी। अतः सावधान मरना है ही फिर काहे दंद फंद करते हो।

इस प्रकार यह मनुष्य इतना भोगी है कि पूछो ही मत इसे यदि एक साथ 11 –11 सुंदर स्त्रियाँ भी भोगने के लिए मिले तो भी यह मूर्ख 21–21 की याचना करने लगेगा। इसकी हर इन्द्रियोंपर एक भोग्यानारी को स्पर्श कर दिया जाये तो भी यह स्त्रीलम्पट पुरुष संतोष नहीं पा सकता।

इसकी वासना बढ़ती ही जाती है अतः उचित है कि भोगों को नाश का कारण समझकर इनसे दूर रहा जाये। यह वासना तो आग में घी की तरह भयंकर बढ़ती ही रहती है।

यह अध्याय एक वीतरागी पुरुष के भाव हैं जो अक्षयरुद्र के अनुसार यथार्थ वचन हैं। इनको समझकर हमें अपना शेष समय प्रभु में ही लगाना चाहिए।

खाली दिमाग शैतान का घर होता है अतः कभी नाम जप करो ,कभी स्वाध्याय करो तो कभी सत्संग सुनों।

जब तक आप तद्भावित ब्रह्मनिष्ठ न बन जाओ तब तक व्यस्त रहो। और पराई नार का सेवन यमभय के कारण मत करो। कल्याण चाहिए तो शुद्ध रहना ही होगा। यदि आपके सामने कोई अप्सरा भी नंगी हो जाये तो चुपचाप अपनी शर्ट उतारकर उसे पहना दो और माँ समझकर नमस्कार करो। बस इसी में जीवन की सफलता है।

# अध्याय 67
# नारी संदर्भ का सच

नारियाँ अनेक प्रकार की होती हैं। कुछ महान तो कुछ परपुरुषगामी और कुछ महानतर। देखें कुछ प्रकार।

राजसिक नारी – 16 वर्ष की आयु में ही किसी किशोर से प्रेम (आजकल दैहिक सुख) की आंतरिक इच्छा करने लगती है, टेलीविजन के हीरो हीरोइन के प्रेम को देखकर वे भी संसर्ग सुख की लालसा करने ही लगती है पर प्रेम की परिभाषा से इन राजसिक किशोरियों का कोई भी संबंध नहीं होता ये तो बस पराये किशोर के अंगों का स्पर्शसुख चाहती हैं। पर समाज के भय से किसी से कहती नहीं लेकिन कोई कामुक किशोर यदि उसके रूप की झूठी प्रशंसा करे ( भले ही वह रूपवती न हो ) तो तत्काल उसे ही नायक समझकर उससे संबंध स्थापित कर डालती है। अतः इनकी योनी दूषित हो जाती है इनकी नाभि, स्तन व कटि आदि भी दूषित मानी जाती है , पराये ... पुरुष से स्पर्श के कारण ये किशोरियाँ अछूत ( स्पर्श के अयोग्य ) और अदर्शनीय मानी जाती है इनके पिता के द्वारा इनका कन्यादान हो ही नहीं सकता क्योंकि ये विवाह से पूर्व ही योनीपरभोग से स्त्री बन चुकी होती हैं अतः इनके कन्यादान से कोई पुण्य नहीं होता। और जिस घर में ये व्याही जाती हैं उस घर में नवग्रहों का कोप छाया रहता है। ऐसी किशोरी और वह किशोर महापापी ही हैं। फिर इसका ( विवाह से पूर्व) गर्भ रह गया तो पापी जीवात्मा का जन्म होता है। ऐसे संबंधों में अधिकांशतः वर्ण संकर ही जन्मते हैं क्योंकि वासना की भूखी किशोरी या नारी और वासना की भूख से युक्त पुरुष से जल्लाद ही पैदा हो सकते हैं भगवान का अंश या हरि साक्षात् नहीं। ( यहाँ पराशर का नाम न लिया जाये वे त्रिकालज्ञ थे और जानते थे कि सत्यवती नामक क्षत्रिय कन्या का गर्भ ही पूर्व जन्म के पुण्य से हरि के योग्य है ) आजकल ऐसी राजसिक और महत्वाकांक्षी किशोरी ही अधिकांश जन्म ले रही हैं। 100 में से 90 ऐसी ही मिलती हैं और 10 ही शुद्ध। वह

शुद्ध तो देवी स्वधा की सेवा से ही मिल पाती है अन्यथा ऐसी किशोरी से विवाह अशान्ति का ही कारण

बनता है। कहीं कहीं तो इन कामुक किशोरियो का नाजायज बच्चा भी नवीन पति ही पालता है अर्थात शादी से एक 15–20 दिन या एक मास पहले ये परपुरुष से संसर्ग कर डालती हैं और शादी के बाद बच्चे का बोझ नवीन पति पर डाल देती हैं । भविष्य पुराण में ऐसी नारी से विवाह का निषेध बताया है और ऐसी नारी को योनीदूषित नारी कहा है। ऐसी कामुक किशोरी के कल्याण का एक ही विकल्प है वह यह कि वह ऐसे स्ववर्णी किशोर से प्रेम व संसर्ग करे जो विवाह कर सके अन्यथा अन्य दूजे वर का जीवन नष्ट करने का पाप भी भोगती हैं। ऐसी भोगी गई किशोरी ( जो किसी शुद्ध वर से विवाह कर डाले तो उस ) के दर्शन भी पाप ही है। उसके दर्शन के बाद गंगाजल से शुद्ध होने का विधान है। अथवा वह भयंकर प्रायश्चित करे।

ऐसी तनदूषित किशोरियों के पास भले ही अच्छी प्रतिभा हो वह भले ही अच्छी गायिका हो या अच्छी रैंकर या उत्तम नृत्य–संगीत आदि कलाओं में प्रवीण पर यह पाने के व स्पर्श के योग्य नहीं। ऐसी किशोरी के हाथ का बना भोजन व पानी भी न पियें। ऐसी किशोरी शालग्राम को भी न छुये। न ही मंदिर की शिवलिंग को।

आजकल माता पिता का कर्तव्य है कि वे अपनी 15 वर्ष की पुत्री को यथार्थ उपदेश दें कि बेटी ! हिन्दु धर्म में परपुरुष का स्पर्श पाप है अतः चकाचौंध भरे इस माहौल में तू इन्वाल्व्ड मत होना। अन्यथा भयंकर दुष्परिणाम निकलते हैं। और आजकल के माँ बाप अपने चंचल और मनचले पुत्र को भी ज्ञान दे कि –" हे पुत्र! किसी किशोरी या किसी विवाहित नारी को कामभाव से मत छूना न ही परायी नार पर कुभाव रखना अन्यथा पराशक्ति भयंकर दण्ड देती हैं।

## सात्विक नारी –

इसमें वासना का नियंत्रण होता है यद्यपि कामना इसकी भी होती है पर यह समाज और धर्म को देखकर चलती है और अपने ही वर्ण के नर से विवाह

के बाद ही पुरुष सुख प्राप्त करती है तथा यदि यह हरि या शिव की भक्ति भी करे तो उनके अंश को जन्म देने की क्षमता रखती है फिर भले ही इसका पति हिरण्याकशिपु जैसा पापी ही क्यों न हो। जो संध्याकाल के संभोग से जन्मी पापी संतान ही घोषित है। जिसमें तमोगुण कूट कूटकर भरा था। ( पूर्व जन्म से यहाँ कोई ताल्लुक नहीं , वर्तमान के कर्म ही मुख्य है यहाँ )

## देवीय नारी–

( परम धाम की देवियों की प्रधान अंश या कला रूप का अवतार )–ये नारी तीन प्रकार की होती है –

1. हरि या शिव के दर्शन न करने तक अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक रहती है । फिर चाहे जमाना कुछ भी कहे। उदाहरण– संध्या जो कि शिव जी के दर्शन से कृतकृत्य हुई। और तप से अरुन्धती बनी इनके तप से इनका जीवनकाल सात कल्प का हो गया नारियों में यही टोपमोस्ट चिरंजीवी नारी कही गई है। 108 सिद्धपीठों की देवियों में इनका नाम देवी सति ने शामिल किया है क्योंकि सति की अधिकांश कला इनको प्राप्त हो चुकी जिससे सति (पार्वती रूप) और अरुन्धती समान फलदायक हो चुकी।

अथवा

2. आजीवन सुलभा जैसी अखंड ब्रह्मचर्य से युक्त रहती है। और भक्ति में ही मन लगाये रखती है। ये ब्रह्मवादिनी भी हो जाती हैं। 3. ये यदि लक्ष्मी की अंशभूता हैं तो संसार के पुरुष से विवाह नही करती , इनका एक ही संकल्प होता है कि साक्षात भगवान हरि या नारायण ही विवाह करें वे न करें तो संसार के पुरुष तो मेरे पुत्र के समान हैं क्योंकि मैं लक्ष्मी का ही स्वरूप हूँ। ऐसी नारी अति से भी अति दुर्लभ है। इस अक्षयरुद्र को लगता है कि इस शताब्दी में ऐसी नारी एक भी नही। कुछ ऐसी अवश्य ही हैं जो विवाहित हैं और झूठमूठ का ही हरि को पति मानती हैं। वे भौतिक नारी अपने भौतिक आधुनिक पति से भी संसर्ग भोग का सुख लेती हैं और हरि को भी पति समझती हैं ऐसी नारी हरि की पत्नी बनने के लायक नहीं।

ऐसी यदि वास्तव में लक्ष्मी की प्रधान अंश होती तो बिना नारायण के विवाह ही नहीं करती और दृढ़संकल्पित होकर साधना ही करती जस्ट लाईक पार्वती तप। देवी की कलायें माता पिता के मोह में नहीं पिघलती। वे मनसा, पार्वती जैसी कट्टर ब्रह्मचर्य का रूप होती हैं अतः साधारण व संकल्पहीन नारी लक्ष्मी की कला नहीं। यथार्थ कला या अंश संसार के पुरुष से विवाह किसी भी हालत मे नहीं करती उदाहरण– तुलसी का तप, वेदवती का तप, मनसा का तप ।

तुलसी ने शंखचूड से विवाह मात्र ब्रह्मा जी के कहने पर किया कि–" यह शंखचूड श्रीकृष्ण का अंश है और मेरी आज्ञा से आप इसको पति बना लीजिए। कुछ कालखण्ड बाद साक्षात् नारायण आपका वरण कर लेंगे।

और आप शंखचूड से दूषित नहीं मानी जाओगी।"

और

एक तमोगुणी होती है जो विवाह के बाद भी कुलटा बन जाती है।

सुख कब प्राप्त होगा ? दुख से कैसे बचें ?

उत्तर–

1. प्रारब्ध से ऐश्वर्य या पद धन आदि लाभ होने पर भी सुख प्राप्त होता है।
2. जिस काम में स्वार्थ न हो वह यदि (आरंभ के बाद भी पूर्ण ) न भी हो तो हमें दुख नहीं होता।
   अतः हर कार्य बिना स्वार्थ के करें। तो आप सदा सुखी रहोगे।
3. जो वस्तु प्रारब्ध में नहीं है समझ लीजिए कि आपने पूर्व जन्म में उस वस्तु की प्राप्ति लायक पुण्य नहीं किया अतः इस जन्म में पुण्य करो तो अगले जन्म में पा लेना पर रोना किसी भी प्रकार की समस्या का समाधान नहीं।
4. वैसे गीता में इस विश्व को दुखालय कहा है यहाँ चाहे कुछ भी मिल जाए उस उपलब्धि के कारण एक नवीन दुख भी साथ में आता है अतः अक्षयरुद्र के अनुसार निवृत्ति मार्ग पर चलो। और न मानों तो सुख और दुख से भरा हुआ रास्ता चुन सकते हो। सब स्वतंत्र हैं।

जो अज्ञानी हैं वही मरते हैं
जो अज्ञानी हैं वही मरते हैं
ज्ञानवान सदा तरते हैं।
मौत को लेकर कदमों में
शमन दमन सदा करते हैं
जो अज्ञानी हैं वही मरते हैं।।

त्रिविध तापों से पीड़ित होकर
अज्ञानी नित्य जलते हैं।
होकर अभिन्नभावी पराविज्ञानी
ब्रह्मभाव में सदा रमते हैं।
जो अज्ञानी हैं वही मरते हैं।।

योनि चौरासी लाख के चक्रव्यूह से
गुरूतत्त्वज्ञ ही निकलते हैं।
गुरू तज तीरथ, मंदिर में
अज्ञानी ही सदा फिरते हैं।
जो अज्ञानी हैं वही मरते हैं।।

पाने हेतु ब्रह्मनिष्ठ वाणी
जिज्ञासु सदा विचरते हैं।
त्यागकर पत्थर, काष्ठ मूर्ति
परात्पर सेवा करते हैं।
जो अज्ञानी हैं वही मरते हैं।।

काम, संग्रह, लोभदि हैं नाश के कारक
पाप पुंज धारी कहाँ समझते हैं।
होकर निष्पाप पराविद्या से
योगी स्वच्छन्द विचरते हैं।
जो अज्ञानी हैं वही मरते हैं।।

'पर' से श्रेष्ठ समझकर परात्पर मूर्ति को
औपचारिक के फेरे में
शिवतत्त्व लघु समझते हैं
कारण इससे ही सदा पिसते हैं।
जो अज्ञानी हैं वही मरते हैं।।

सर्वज्ञ गुरू से दीक्षा पाकर
सत् शिष्य आनन्द मदिरा चखते हैं
दुःख या काम में क्षणिक भोग वश
वासना मदिरा पी–पीकर
जो अज्ञानी हैं वही मरते हैं।।

होकर अभिन्नभावी सभी अंशभूत
अक्षय आनन्द में रमण करते हैं।
कैवल्य वे नहीं पाते
गुरूद्रोह जो करते हैं।
जो अज्ञानी हैं वही मरते हैं।।

# अध्याय 68
# पुण्य का प्रताप और अटकन

इस लोक में धनाढ्यता ,सुंदर रूप, सुंदर वाणी, वशीकरण शक्ति ये सब गुणधर्म पूर्व जन्मों के पुण्य का प्रताप है इसमें संदेह नहीं। बिना पुण्य पुंजों के एक माचिस की सीक भी नहीं मिलती और न ही प्यास के समय सरलता से पानी मिल सकता है।

और किसी क्वांरी युवती से किसी किशोर या युवा को निष्काम प्रेम मिलना उपर्युक्त पुण्य कर्म से भी 10000 गुना पुण्यों का पर्याय है यह भी सत्य है।

परंतु

परंतु

परंतु

99 प्रतिशत प्रेमी

इसी युवती की चाह मे अटक जाते हैं, बस एक बार कोई नारी मात्र कह दे कि–

मैं तुम्हारे बिना मर जाऊँगी तुम ही मेरे जीवन का मूल हो।

फिर देखो अच्छे अच्छे वरिष्ठ साधक भी अपने चित्त के किसी एक कोने में उसके लिए रिक्त स्थान रख ही लेते हैं...

ऐसे कुछ साधकों को हम जानते हैं।

मात्र श्री हरि या महादेव अथवा मेरी पराम्बा ही चित्त सहित मन व बुद्धि में रहें ये साक्षात् हनुमान जी के समान महापुण्यों का पर्याय है ।

और गोलोक के अधिकारी मात्र वही हैं जो अनन्य हरिमय हों।

( अनन्य मतलब मात्र एक रूप के सुमिरन करता, अन्य का चिंतन कदाचित नहीं)

और किसी शादीशुदा स्त्री का किसी संत के प्रति मात्र ज्ञान विज्ञान या कथा के प्रति चाह रखना भी कल्याणकारक है। और एक बात प्रेम म्रेम की बाते मात्र 50 तक केवल गार्हस्थ्य लोगों को शोभा देती है ( कि वह करती है

या मैं करता हूँ या मुझे आज उसकी याद आ रही है, हालांकि यह भी जड़भरत के हिरण के समान आरंभिक मोह का संकेतक है )

ये भक्ति में 100: बाधक हैं।

हमारे पास तो किसी क्वांरी कन्या के ( एक नहीं दो दो कन्याओं के) 2000 प्रेमपत्र आए थे लगातार आते ही रहे उस कालखंड में और उनको जला चुके हैं और वे हमारे लिए कुछ भी करने को तैयार थी ( जो भी आदेश दें वही )

पर भक्ति और ज्ञान के प्रसार में बाधक जानकर अन्यत्र विवाह के लिए आदेश दे दिया।

ये प्रेम म्रेम आध्यात्मिक जगत ( मात्र गोलोक के इच्छुक )के लिए महामाया की एक चाल होती है पर ग्रहस्थ(25–49 ) के लिए सुख का आधार ( उपनिषदों में स्पष्ट लिखा है) ।

अतः यदि वह जो सेवा ( प्रेम शब्द का उच्चारण करते हुए) वह आपकी करना चाहती है वह प्रेम शब्द उसको तो आप तक अगले जन्म में पहुँचा देगा, पर आपको भी निश्चित ही पुनर्जन्म तक पहुँचा देगा और अगले जन्म में दोनों का मिलन। फिर से बंधन की संभावना।

बस यही प्रेम शब्द का परिणाम है।

परम धाम केवल अनन्य भक्त को ही मिलता है। अतः स्त्री की कामना न करें। वह सहज मिले तो भी पहले प्रभु के दर्शन करने का संकल्प उठायें।

**0000000000000000000000000000000000000000000000000000**

# अध्याय 69
# अद्वैत तत्त्व ही विश्रांति का मूल मंत्र :

मैं स्वयं शिव चराचर में व्याप्त हूँ मैं ही सब कुछ हूँ मुझ ब्रह्म (एकमात्र ऊँ ब्रह्म) के अतिरिक्त कहीं भी दूसरा कोई नहीं है। मैं एक ही सर्वव्याप्त होकर बहुत हुआ हूँ (एकोऽहं बहुस्यामः) सदाशिव, महाकृष्ण त्रिदेव रूप से, मैं स्वयं पराशक्ति (ऊँ) ही लीलारत हूँ। जगत का प्रत्येक प्राणी भी मूल रूप से मैं ही हूँ। सभी ब्रह्मज्ञानी गुरू (सद्गुरू परमेश्वर जो ब्रह्मदाता हैं) अद्वैतवादी ज्ञाननिष्ठ, साधु संत, संन्यासी, श्रावक, जपकर्ता, तपस्वी, पूजनकर्ता भी मैं ही हूँ। सर्वमय मैं (प्रणव ऊँ) और केवल मैं ही हूँ। क्षीर सागर में मैं ही परम पुरूष हरि रूप से पालन कार्य कर रहा हूँ। रूद्रलोक से रूद्र मूर्त्यात्मा भी साक्षात् में ही हूँ। अनुग्रह कर्ता, गुणों से परे (गुणातीत), विश्वनाथ सदाशिव भी मैं ही हूँ। मेरे अलावा अन्य किसी की कहीं भी सत्ता नहीं है। अन्य स्वरूपों से मैं ही समस्त पदार्थ ग्रहणकर्ता हूँ। सोऽहं सोऽहं सोऽहं सोऽहमस्मि, शिवोऽहम, ऊँ कार ब्रह्म तत्त्वोऽहं। मैं ही विशुद्ध ज्ञान हूँ मैं जैसे यहाँ कह रहा हूँ कि गुरू एवं परम तत्त्व शिव एक ही है और वह मैं (ऊँ) स्वयं ही हूँ सर्वमय हूँ वैसे ही मैं स्वयं गुरूगीता रूप और अक्षय आनन्द एवं भगवद्गीता रूपी उपनिषदों के सार रूप से भी स्पष्ट कह रहा हूँ कि एक मात्र मुझ सार तत्त्व (अद्वैत) को देखो दूसरा कोई है ही नहीं। द्वैतभाव से अन्य कुछ देखना मूढ़ता है क्योंकि दूसरा कुछ बना ही नहीं। मक्खी, मच्छर, पतंगे, कुत्ता, बिल्ली, हाथी, घोड़ा, गाय, बैल, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि शरीरों की एक मात्र आत्मा मैं ही परमात्मा हूँ। अलग–अलग रूपों से अलग–अलग कर्मफल नियम के अंतर्गत लीलारत हूँ। मैं ही पंचब्रह्म परमात्मा हूँ। जहाँ–जहाँ मन, वाणी और बुद्धि नहीं जा पाती वहाँ–वहाँ भी मैं ही हूँ। समस्त नाशवान (दृश्य वस्तु) भी मेरी ही मूर्तियाँ हैं। परमूर्ति (सदाशिव, महेश, रूद्र), परात्पर मूर्ति (हरि, ब्रह्मज्ञानी मूर्त्यात्मा का शरीर) एवं अपर मूर्ति (साधारण देह जिनकी आत्मा मूल तत्त्व को सर्वमय नहीं देख रही) भी मेरी ही आकृति है।

हवा, पानी अग्नि, मूर्ति मैं ही हूँ। इस मूर्ति या नाम के अलावा जो शून्य है वह भी मात्र मैं ही हूँ।

श्रावण शुक्ल पूर्णिमा को ब्रह्म (ऊँ) की यह सर्वमय अद्वैतवाणी के श्रवण या स्वाध्याय मात्र से ज्ञान सिद्धि प्राप्त होकर सर्वज्ञता प्राप्त होती है।

माँ पार्वती जी ने भी लीलावश इस प्रणव का उच्चारण (चातुर्मास्य व्रत के बाद विशेष पुण्य पाकर ही) बाद में ही किया, क्योंकि शिव जी ने उन्हें इस रहस्य को स्कंद पुराण में स्पष्ट बताया था। विशेष रूप से ब्रह्मविद्या का अधिकारी वही है जिसकी बुद्धि और हृदय केवल ब्रह्म में ही स्थित होना चाहते हैं जिसे संसार या संसार की नाशवान वस्तुओं के प्रति आसक्ति नहीं है जो केवल संसार की नश्वरता को समझ चुका। वैसे भी नाशवान पदार्थ सच्चा सुख नहीं देते, जितना अधिक संग्रह करते हैं उतना ही अधिक दुःख होता है फिर क्यों न हम भौतिक प्रपंच को छोड़कर अध्यात्म की ओर प्रस्थान करें? संपूर्ण सृष्टि एवं सत्य का सार केवल पुनरागमन से मुक्ति के स्वरों का गुंजन करना ही है न कि दुःख, पीड़ा या संताप अथवा न ही स्त्री, पुत्र, कीर्ति अथवा भौतिक भोगार्थ धन की प्राप्ति। श्रीमद्भागवत में भी प्रभु श्रीकृष्ण ने स्पष्ट ही कहा है कि "मैं गृहस्थ के प्रजा वृद्धि या पालन आदि धर्म, वानप्रस्थ की तपस्या या संन्यासी के यम–नियमों से उतना प्रसन्न नहीं होता जितना कि ब्रह्मविद्या को देने वाले सद्गुरू की सेवा एवं उनके उपदेश अर्थात् ब्रह्मज्ञान (सर्वमय मात्र एक तत्त्व ऊँकार रूपी अद्वैत ज्ञान जिसकी प्राप्ति से अद्वैत अपरोक्ष हो जाता है) से संतुष्ट होता हूँ। परम सत्य का बोध कराना ही मुझ महाकृष्ण का लक्ष्य है न कि व्यर्थ के संग्रह में जीव को भ्रांति में डालना"। (गीता 4/34 का सार यही है) (देवीभागवत सातवां एवं दसम स्कंद अध्याय 36, 80)

## श्मशान अंतिम धाम रे।

नित्य क्यों तू संघर्ष करता,
श्मशान अंतिम धाम रे।
अब तो परिग्रह से मुक्त हो जा,
अंशभूत तेरा नाम रे,
श्मशान अंतिम धाम रे।

जगत में तेरा कोई नहीं है,
होजा शिव का दास रे।
दारा सुत में सुख नहीं है।
सुन रे ज्ञान सार रे,
श्मशान अंतिम धाम रे।

नित्य अर्थी को देखकर भी,
छोड़ता नहीं क्यों राग रे।
खटिया को समझ अर्थी ही,
खेल हरि से फाग रे।
श्मशान अंतिम धाम रे।

स्त्री, पुत्र, धन, बल, माया
सुख जीव को क्या देते रे।
प्रभु पर क्या नहीं भरोसा,
जो कर्ता योगक्षेम राम रे।
श्मशान अंतिम धाम रे।

राम काज को छोड़–छाड़कर,
रति सुख नीचों का काम रे।
शाश्वत आनन्द में जाग जरा,
तू ही सच्चा धाम रे।
श्मशान अंतिम धाम रे।

श्मशान अंतिम धाम रे।

## रूप लावण्य के दर्शन ठीक नहीं

'सौन्दर्य' जगत का इष्ट नहीं,
रूप लावण्य के दर्शन ठीक नहीं।
वसनामयी दर्शन है परिचायक आसक्ति का,
जग में यह किसी का मीत नहीं।
सुन'होकर शान्त' यह कोई गीत नहीं,
रूप लावण्य के दर्शन ठीक नहीं।

माया का भौतिक प्रपंच सारा,
है प्रत्यक्ष शव समान।
प्रभु का भजन करते–करते,
कर ले केवल तत्त्व गुमान।
मैं अंशभूत कहता झूठ नहीं,
रूप लावण्य के दर्शन ठीक नहीं।

मांस पिण्ड में क्या रखा है,
नारी आसक्ति में सुख नहीं।
अब तो शिव का होजा तू,
क्यों तू करता प्रीत नहीं।
मैं अंशभूत कहता झूठ नहीं,
रूप लावण्य के दर्शन ठीक नहीं।

अपने निजरूप को जान जरा,
तू वास्तव में गैर नहीं।
क्यों भटकता बंधन में,
हाड़ मांस का तू दास नहीं।
मैं अंशभूत कहता झूठ नहीं,
रूप लावण्य के दर्शन ठीक नहीं।

मन पर जीभ का वश नहीं,
पशु क्यों छोड़ता लत नहीं।
जो रति सुख को हरियाली माने,
पतझड़ उससे दूर नहीं
मैं अंशभूत कहता झूठ नहीं,
रूप लावण्य के दर्शन ठीक नहीं।

आसक्ति–नाव भंवर में डोले,
सच्चा भगत ही शिवहरि बोले।
जो बात न माने अंशभूत की,
वह सच में नर नहीं।
मैं अंशभूत कहता झूठ नहीं,
रूप लावण्य के दर्शन ठीक नहीं।

## महा तीर्थ :

जलमय तीर्थ तीर्थ नहीं हैं और न ही पत्थर, मिट्टी की मूर्ति ही वास्तविक देवता है। अहो! सच्चे देवता तो प्रभु के अनन्य भक्तों को मानना चाहिए, जिनके दर्शन और स्पर्श से तुरंत पवित्रता आ जाती है। वास्तव में भक्त महान होते हैं, वे ही गीता ज्ञान के श्रवण के योग्य बनते है।

उनकी आँखों से अपने इष्ट के वियोग में सतत् अश्रुधारा रूपी झरने का प्रवाह होता रहता है, वैसे भक्त की पहचान भी यही है। उनकी स्थिति जल बिन मछली की भाँति होती है। ऐसा सच्चा भक्त जिसका भी पुत्र होता है वह माता–पिता महान भाग्यशाली होते है। ऐसा भक्त सतत् 6 वर्षों की इष्ट–भक्ति, गुरुसेवा तथा सत्संग से ही प्रभु कृपा से परोक्ष अभिन्न ज्ञान को भी अपरोक्ष ज्ञान में परिवर्तित कर प्रभु का साक्षात् स्वरूप हो जाता है। ऐसा विरही जहाँ रहता है, वह भूमि भी अपना भाग्योदय मानकर ईश्वर को धन्यवाद देती है। ऐसे अपरोक्ष ज्ञाननिष्ठ भक्तों को मैं अंशभूत शिव आज मकर संक्रांति पर्व पर कोटि–कोटि साष्टांग प्रणाम करता हूँ।

### रोते नयना क्या सुख पाया।

हे कान्हा! 'विरह' क्यों बनाया,
इसने मुझे बहुत रुलाया।
अश्रु झरते जैसे झरना,
रोते नयना क्या सुख पाया,
हे कान्हा! 'विरह' क्यों बनाया।
रोते नयना क्या सुख पाया।

मिलन में है आनन्द अपार,
विरह में होती अश्रु कतार।
क्यों कृष्णा मेरे मन भाया,
यशोदा का भी लाल कहाया।
हे कान्हा! 'विरह' क्यों बनाया।
रोते नयना क्या सुख पाया।

राधा का तू प्रेम प्यारा,
भक्तों का हृदय–निराला।
नटखट तेरी कैसी माया,
इसने जीव को बहुत नचाया।
हे कान्हा! 'विरह' क्यों बनाया।
रोते नयना क्या सुख पाया।

कोमल हृदय देखकर तूने,
अग्नि में घी काहे डाला।
विरह अग्नि सहन न होती,
प्रेम ने फिर भी मन ललचाया।
हे कान्हा! 'विरह' क्यों बनाया।
रोते नयना क्या सुख पाया।

कोई रतिभोग, ऐश्वर्य व समाज में मान सम्मान के साथ साधना, पूजा,तीर्थ आदि चाहता है ।

ठ. कोई मात्र प्रभु को ही चाहता है, फिर चाहे हनुमान जी जैसा गुणधर्म ( नैष्ठिक ब्रह्मचर्य,शम दम, परम पवित्रता 100:) ही क्यों न पालन करना पड़े और चाहे समाज आरंभ में पागल कहे।

पर उपनिषदीय ज्ञान कहता है कि आत्म समर्पित भक्त ही इसी जन्म में जीवन्मुक्त होता है पर जो भोग विलास या वंश परंपरा की रक्षा के लिए प्राजापत्य व्रत का पालन करते हैं वे भी संतान उत्पन्न के बाद आजीवन ब्रह्मचर्य पालन से इसी जन्म में मुक्त हो जाते हैं शेष मध्यम वर्ग के धर्मात्मा लोग यदि तीर्थ में

भी प्राण त्यागते हैं तो सालोक्य मुक्ति मात्र तंतमसल ही sayujya.........

कर्मयोग!

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः ।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा ॥१०॥

जो पुरुष सब कर्मों को परमात्मा में अर्पण करके और आसक्ति को (भी अनिवार्य रूप से ) त्यागकर कर्म करता है, वह पुरुष जल से कमल के पत्ते की भाँति पाप से लिप्त नहीं होता। (१०)

कर्म की आवश्यकता क्यों?

कायेन मनसा बुद्धया केवलैरिन्द्रियैरपि ।

योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्त्वात्मशुद्धये ॥११॥

कर्मयोगी ममत्वबुद्धिरहित केवल इन्द्रिय, मन, बुद्धि और शरीर द्वारा भी आसक्ति को त्यागकर अन्तःकरण की शुद्धि के लिए कर्म करते हैं। (११)

विवेक चूड़ामणि में भी कर्मयोग का पालन मात्र चित्त की निर्मलता के लिए आदेशित किया है और नारद पुराण में

इसी कारण ग्रहस्थ जनक जी ने शुक देव को मात्र यही कहा है कि चित्त निर्मल होकर यथार्थ पराविज्ञान से विश्रांत हो जाये तो उस ज्ञाननिष्ठ के लिए शेष तीनों आश्रमों में प्रवेश की आवश्यकता नहीं अतः हे गुरुपुत्र वीतराग मुनि!

तुम स्वतंत्र हो, तुम्हारे लिए गार्हस्थ्य बंधन आवश्यक नहीं।

तुम सहज ही जीवन्मुक्त हो, तुम यदि एकाकी रहोगे तो भी समाज में निर्भयता और आनंद के दाता बनोगे और यदि सति व ब्रह्मज्ञान से युक्त युवती से विवाह करके गार्हस्थ्य हुये तो गार्हस्थ्य लोगों के लिए आदर्श बनोगे ... ंसजीवनी ंजिमत सपेजमदपदह, ेनीीकमअ उंततपमक हो गए जिसका वर्णन या तो देवी भागवत में है, या गर्ग संहिता या ब्रह्म वैवर्त में और उनकी संतानों का भी वर्णन है)

# अध्याय 70
# सुखद अनुभव का कालखण्ड ही ग्रहस्थ

सुखद अनुभव का कालखण्ड ही ग्रहस्थ कहा जाता है पर इसकी पात्रता भी होना चाहिए।

ग्रहस्थ के लिए धन अनिवार्य है अन्यथा उसका गार्हस्थ्य सुख नष्ट होने में देर नहीं लगती, जो किशोर भविष्य में ब्रह्मचर्य आश्रम की अवधि पूर्ण करके आजीवन संयम का पालन न कर सके या ब्रह्मा जी के सृजन कार्य में सहयोग देकर ( संतान के बाद भी) ब्रह्मचर्य पालन कर सके तो भी उसे पहले धनाढ्य हो जाना चाहिए अन्यथा विवाह करके किसी किशोरी का जीवन दरिद्रता में न डाले। जो गरीब, कामी अपनी इंद्रिय असंयम के कारण विवाह तो कर लेता है पर पत्नि और संतानों को धन न होने से दुख देता है और उत्तम शिक्षा दीक्षा का प्रबंध नहीं करता वह कामी पति इसका भी दंड पाता है और ब्रह्म वैवर्त के अनुसार दरिद्र,दुर्व्यवहार, दुर्व्यसनी और मदिरासेवी वर को कन्या देने वाला पिता भी कन्यादान का फल न पाकर घोर नरकों में उसी कन्या के आँसुओं का पान करता है अतः हर कार्य सोच समझकर ही करें।

अपने काम के वश में होकर किसी का हृदय व्यथित न करें अथवा आपको भयंकर आध्यात्मिक ताप (कोई अनुवांशिक या गंभीर रोग या मनोविकार क्रोध लोभ, ईर्ष्या आदि) हो तो भी किसी कन्या को पीड़ित न करें,

मरना तेरा एक दिन तय है फिर मरने से पहले पाप काहे करता है नादान मुसाफिर।

ऐसी स्थिति में मृत्युंजय साधना से निरोगी होकर और संत शरण से स्थितप्रज्ञ होकर तदोपरान्त कनकधारा या बिल्ववृक्ष की सेवा से धनाढ्य होकर या एक वर्ष तक बिल्ववृक्ष या पीपल के वृक्ष के पास साधना या यमुना उपासना से धनाढ्य होकर ही कन्या वरण करें।

ग्रहस्थ जीवन कोई भौतिक भोग का पर्याय नहीं है एक सुखद अनुभव का कालखंड है।

साँझ ढलेगी तेरी भी......................

# अध्याय 71
# पापी की पहचान

जब तक पवित्र दृष्टि नहीं होगी तब तक कुछ नहीं होने वाला।

राम नाम से यदि आज तक भी विशुद्ध भाव नहीं आये, तो यह समझ लें कि अभी मानव मंजिल से कोसों दूर है।

राम नाम का सुमिरन करने से पहला गुण मनुष्यता का ही आता है।

यदि आज भी हम धोखेबाज हैं, पत्नि का सम्मान नहीं करते, माता और पिता से सीधा और विनम्रतापूर्वक नहीं बोलते मित्रों को सदा नीचा दिखाते रहते हैं...

गुरु में नरबुद्धि है

तो अभी पापपुंज शेष हैं और अभी आप (या हम) दर्शन के लायक नहीं हुए।

0000000000000000000000000000000

# अध्याय 72
# गृहस्थी चौपट कब?

गृहस्थ जीवन का मानव ( 50 वर्ष तक ) अति भजन न करें अन्यथा उसकी गृहस्थी चौपट हो गई तो उसे पाप लगेगा।

यहाँ अति भजन का तात्पर्य–

कमाई छोड़कर तथा स्त्री पुत्र आदि के सुखों का ध्यान न रखकर रात दिन माला, भजन, तीर्थ, स्वाध्याय या सत्संग आदि से है। जरत्कारु मुनि को भी वैराग्य का नशा चढ़ा तो पत्नि को छोड़कर जाने लगे तो भगवान शिव व विष्णु प्रकट हुये और रोक लिया। वे बोले कि – गृहस्थ आश्रम स्वीकार क्यों किया जब जिम्मेदारी नहीं निभाना था तो ........???

सुनकर जरत्कारु ने अपना कर्तव्य निभाया।
ऐसे बहुत से उदाहरण हैं।

और गृहस्थ पुरुष को हम ब्रह्मचारियों की तरह अखंड ब्रह्मचर्य का संकल्प भी नहीं लेना चाहिए। यदि पत्नी आज्ञा दे तो पुत्र व पुत्री संतान के बाद अवश्य

अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक रह सकते हैं पर पत्नी और बच्चों या माता पिता पर भी ध्यान केंद्रित करना होगा।

इसमें शास्त्रोक्त प्रमाण की आवश्यकता ही नहीं।

● यदि पत्नि स्वेच्छा से आपको जाने की आज्ञा दे दे तो भी आपके वन में जाने के बाद उसे या संतान को यदि आर्थिक तंगी का कष्ट सहना पड़ा तो दण्ड पति ही भोगेगा।

● आपके द्वारा 40 साल में यदि पत्नी को छोड़ा गया और पत्नि ने अपनी आंतरिक कामना के कारण परपुरुष से कुसंग कर डाला तो वह पाप आप ही भोगोगे।

अतः शादी की हो तो कर्म मार्ग पर चलो। और भक्ति मन से करो न कि तीर्थ में भागो।

● अपनी संतानों का विवाह करके 50–55 के बाद निकल जाना या शादी ही नहीं करना था।

● यदि आप स्त्री हो और संतान नहीं हुई हो ( पति अति अमीर हो ) पर हे नारी ! वैराग्य आ गया तो आपके

जाने पर पति को दूसरी अनेक पत्नियाँ मिल सकती हैं इस कारण पत्नि को दोष नहीं लगेगा। पर आप पुरुष हो तो (बच्चे भी जन्म हो जाए तो छोड़कर जाओगे तो बेचारी स्त्री को इस समाज में कोई नही अपनाता और कोई उस संतानवती को अपनाये तो उस नारी को भविष्य में दुख भी मिलते हैं सम्मान नहीं मिलता उसे। किसी पति के द्वारा त्यक्त नारी का वो सम्मान नहीं होता जो होना चाहिए। अतः इस कारण भी उसे न छोड़े। 50–55 के बाद समुचित व्यवस्था करके भले ही चले जाना।

000000000000000000000000000

# अध्याय 73
# मरने से पहले विशुद्ध की शरण में जाओ

कुल पुरोहित यदि लोभी हो जाये तो उसे बदल देना धर्म है। गुरुगीता के ज्ञानहीनो गुरुत्याज्यो व श्लोक 104 तथा शिव पुराण विद्येश्वर संहिता अध्याय 18 से जब गुरु को भी बदला जा सकता है तो लोभी कुल पुरोहित कौन से खेत की मूली है। जब तक गुरु या कुल पुरोहित धर्मपरायण रहे तभी तक वह पात्र है। उदाहरण– वसिष्ठ गुरु, अंगिरा गुरु का त्याग और निमि कथा ये इस कल्प के उदाहरण हैं। दण्ड रुप में वसिष्ठ भी पुनर्जन्म लेने पर विवश हुये पहले ब्रह्मासुत थे अब अप्सरा व मित्रावरुण की संतान। तथा गुरु यदि विशुद्ध धर्मपरायण व ब्रह्मनिष्ठ है तो स्त्रीलम्पट और शराबी मनुष्य को शिष्य न बनाये अन्यथा उस मूर्ख चेले के पाप से वह गुरु भी पुनर्जन्म पा सकता है 10 पाप तो भोगेगा ही।

यह गुरु का पनिश्मेंट अब शिष्य का सुनें –

(जो मनुष्य मात्र मंत्रदाता को ही गुरु मानता है पर अध्यात्म विद्या ( सम्यक् ज्ञान) देने वाले धर्मपरायण व सम्यक् ज्ञानी को कुछ नहीं समझता या औपचारिक समझता है वह नरक में जाता है। गरुड पुराण सारोद्धार)

– अक्षयरुद्र

देवी संपदा –

मुक्ति या गोलोक के लिए किन किन लोगों को भय नहीं करना चाहिए?

उत्तर– गीता के 16वें अध्याय में देखें और अपना भविष्य जान लें।

श्रीभगवान बोले :

1. भय का सर्वथा अभाव,
2. अन्तःकरण की पूर्ण निर्मलता,

3.तत्त्वज्ञान के लिए ध्यानयोग में निरन्तर दृढ़ स्थिति
4.सात्त्विक दान,
5.इन्द्रियों का दमन,
6.भगवान, देवता और गुरुजनों की पूजा
7. तथा अग्निहोत्र आदि उत्तम कर्मों का आचरण
8. वेद–शास्त्रों का पठन–पाठन
9.भगवान के नाम और गुणों का कीर्तन,
10. स्वधर्मपालन के लिए रुकष्टसहन
11.और शरीर तथा इन्द्रियों के सहित अन्तःकरण की सरलता।
12.मन, वाणी और शरीर से किसी प्रकार भी किसीको कष्ट न देना,
13. यथार्थ और प्रिय भाषण,
14.अपना अपकार करनेवाले पर भी क्रोध का न होना
15. कर्मों में कर्तापन के अभिमान का त्याग,
16.अन्तःकरण की उपरति

अर्थात् चित्त की चंचलता का अभाव,

17. किसीकी भी निन्दादि न करना
18. सब भूतप्राणियों में हेतुरहित रुदया,
19.इन्द्रियों का विषयों के साथ संयोग होने पर भी उनमें आसक्ति का न होना,
20.कोमलता,
21.लोक और शास्त्र से विरुद्ध आचरण में लज्जा

और

22. व्यर्थ चेष्टाओं का अभाव
23.24.25.तेज, क्षमा, धैर्य,
26.बाहर की शुद्धि
27. किसीमें भी शत्रुभाव का न होना
और

28 अपने में पूज्यता के अभिमान का अभाव

– ये सब तो हे अर्जुन ! दैवी सम्पदा को लेकर उत्पन्न हुए पुरुष के लक्षण हैं।

पर

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।

अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम् ॥४॥

हे पार्थ! दम्भ, घमण्ड और अभिमान तथा क्रोध, कठोरता और अज्ञान भी– ये सब आसुरी– सम्पदा को लेकर उत्पन्न हुए मूर्ख पुरुष के लक्षण हैं।4

दैवी सम्पद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता ।

रुमा रुशुचः ( Dont worry arjun ! )

सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव ॥

दैवी–सम्पदा मुक्ति के लिए और आसुरी–सम्पदा बाँधने के लिए मानी गयी है। इसलिए हे अर्जुन ! तू शोक मत कर, क्योंकि तू दैवी सम्पदा को लेकर उत्पन्न हुआ है।

# अध्याय 74
# भागवत पुराण एक कलश

सर्ग, विसर्ग, स्थान, पोषण, ऊति, मन्वन्तर, ईशानुकथा, निरोध, मुक्ति और आश्रय  इन दस विषयोंका वर्णन है ।

1.सर्ग –

ईश्वरकी प्रेरणासे गुणोंमें क्षोभ होकर रूपान्तर होनेसे जो आकाशादि पञ्चभूत, शब्दादि तन्मात्राएँ, इन्द्रियाँ, अहङ्कार और महत्तत्त्वकी उत्पत्ति होती है, उसको 'सर्ग' कहते हैं।

2.विसर्ग –

उस विराट् पुरुषसे उत्पन्न ब्रह्माजीके द्वारा जो विभिन्न चराचर सृष्टियोंका निर्माण होता है, उसका नाम है 'विसर्ग' ।

3. स्थान –

प्रतिपद नाशकी ओर बढ़नेवाली सृष्टिको एक मर्यादामें स्थिर रखनेसे भगवान् विष्णुकी जो श्रेष्ठता सिद्ध होती है, उसका नाम 'स्थान' है।

4. पोषण–

अपने द्वारा सुरक्षित सृष्टिमें भक्तोंके ऊपर उनकी जो कृपा होती है, उसका नाम है 'पोषण' ।

5. मन्वंतर–

मन्वन्तरोंके अधिपति जो भगवद्भक्ति और प्रजापालनरूप शुद्ध धर्मका अनुष्ठान करते हैं, उसे 'मन्वन्तर' कहते हैं।

6. ऊति ( = वासनाएँ)

जीवोंकी वे वासनाएँ, जो कर्मके द्वारा उन्हें बन्धनमें डाल देती हैं, 'ऊति' नामसे कही जाती हैं ।

7. ईशकथा–

भगवान्के विभिन्न अवतारोंके और उनके प्रेमी भक्तोंकी विविध आख्यानोंसे युक्त गाथाएँ 'ईशकथा' हैं ।

8. निरोध–

जब भगवान् योगनिद्रा स्वीकार करके शयन करते हैं, तब इस जीवका अपनी उपाधियोंके साथ उनमें लीन हो जाना 'निरोध' है।

9. मुक्ति–

अज्ञानकल्पित कर्तृत्व, भोक्तृत्व आदि अनात्मभावका परित्याग करके अपने वास्तविक स्वरूप परमात्मा में एकत्व भाव से भावित होकर स्थित होना ही 'मुक्ति' है ।

यही अपरोक्ष ज्ञान भी कहलाता है। यही ज्ञान की उच्चस्तरीय भूमिका भी कहलाती है देहान्त के बाद ऐसा ही मुक्त पुरुष निर्वाण को प्राप्त होता है इसके विपरीत जो भोगी, अजितेन्द्रिय और स्त्रियों से मोहित हैं वे सभी पुनः जन्म लेकर अपनी वासना की पूर्ति (उनके पुण्यों के स्तर के अनुसार) करते हैं।

000000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

दुखी कौन कौन हो सकते है?

उत्तर–

1. आसक्त
2. रोगी
3. दुर्घटनाग्रस्त

<table>
<tr><td>
4. कर्ज में डूबा<br>
5. निर्धन<br>
6. गुलाम<br>
7. कुलटा व परस्त्रीभोगी का पिता
</td></tr>
<tr><td>
इसी जन्म में दुख किस किस अवगुण से मिलता है फिर चाहे उसके प्रारब्ध में कुछ भी क्यों न हो ।<br>
1. शठता<br>
2. क्रोध<br>
3. अहंकार<br>
4. लोभ ( अति धन की इच्छा से मन और बुद्धि का धन संबंधित दोष )<br>
5. कामभाव की अतीवता ( परिणाम बलात्कार या अपनी ही पत्नी का अति दैहिक शोषण )<br>
6. निन्दा ( खुद तो कुछ करना धरना नहीं, सामने की एक गलती ही पकड़कर बैठ जाना और उसी गलती का प्रचार प्रसार करना )<br>
7. शास्त्र विरुद्ध मनमाना आचरण ( ऊटपटांग कर्म करके मात्र यही रट्टा लगाये रखना कि भगवान तो भाव के भूखे हैं उनको नियमों से क्या मतलब– और ऐसे लोग स्वगोत्र की कन्या से विवाह, परायी नार संभोग, जयंती पर भी होटलों में चरना, 32 भगवद अपराधों में भी संलग्न रहते हैं )<br>
8. ईर्ष्या ( किसी की तरक्की देखकर जलना )<br>
9.छल कपट ( धन और ऐश्वर्य या पद आदि के लिए)
</td></tr>
</table>

0000000000000000000000000000000000000000000000000000000000

# अध्याय 75
# दान कहाँ दे आजकल लोगों पर भरोसा ही नहीं ?

उत्तर–

गौसेवा, अपनी माता और पिता को नगदी या भांजी भतीजी की सेवा में।या वीतरागी संत के भोजन हेतु । ज्ञानदाता ब्रह्मनिष्ठ को अन्न व वस्त्र हेतु या उनकी आध्यात्मिक योजनाओं के लिए। या किसी पर विश्वास न हो तो ऐसे अविश्वसनीय जन भूमि खरीदकर उस धरती के भाग में बिल्ववृक्ष पीपल वट आदि लगाकर एकाध कर्मचारी को नियुक्त कर दे पौधो की देखभाल के लिए।

या ठंड आने वाली है सामर्थ्य अनुसार शॉल या कंबल का दान करे गरीब लोगों में । या जो मर जाए उनकी चिता ( लकड़ी का ढेर) बनाने के लिए काष्ठ का आर्डर कर दिया करे। या ग्रीष्मकालीन ऋतु में प्याऊ हेतु कुछ शीतल बर्तन खरीदकर एक दो नौकर रख दे धन से। अथवा यह भी न कर सके तो अपने क्षेत्र में 60×40 की भूमि खरीदकर उसमे एक भ्ंसस बनवाये जिसमें घोषणा कर दी जाये कि इस क्षेत्र मे जो भी पुराण वक्ता व्यास हो वे श्रीमान जी कृपया इस महाभवन में निशुल्क कथा करें। या कुछ संत आश्रमों में पंखे दान कर दें अथवा गरीब कन्याओं का विवाह करवा दे। या दो तीन प्राइवेट शिक्षकों की नियुक्ति करके अपने गांव या कॉलोनी में निशुल्क विद्यालयकोर्स पढ़वाये या गौचरने हेतु कुछ बीघा जमीन खरीद ले। अथवा गरीब लोगों की झुग्गी झोपड़ी सही कराये। या ग्राम पुजारी को मासिक धन क्षमतानुसार दे सकते हो या मंदिर में नित्य दीपदान हेतु 500ग्राम गौघृत। और इन सबमें अधिक श्रद्धा न हो तो इस शिवांश अक्षयरुद्र अंशभूतशिव की आध्यात्मिक पुस्तकों के प्रकाशनार्थ धन दान करे इससे ज्ञान दान का अतुलनीय फल मिलेगा। क्योंकि अन्य दान से द्वैत बुद्धि बड़ती है पर वेदान्त या उपनिषदों के ज्ञान का प्रसार करने वाले साधु संत या गुरु को दान से अक्षय फल हो जाता है और सब मुक्त होकर सदा सदा के लिए भवरोग से दूर हो जाते हैं।

अति दरिद्र हो तो इस लेखक अक्षयरुद्र को 10–20 वाला पेन या कापी भी दान कर सकते हैं।और किसी पर विश्वास हो या न हो अपने ज्ञानदाता व मंत्रदाता गुरु को दान करें।

# अध्याय 76
# अतिधन और एकदिन वैराग्य

हे अक्षयरुद्र! अति धन कमाकर क्या करते हैं लोग?

सुनें –

दैनिक जीवन की आवश्यकता के लिए धन अनिवार्य है ही पर अति धन के इच्छुक लोग वित्तेष्णा रोग के शिकार कहे गए हैं इनका मन पापी प्रेत की तरह भटकता रहता है।

ये लोग यदि High IQ label के हैं तो ईमानदारी से पदाधिकारी बनकर धन कमा सकते हैं। इन पदाधिकारी लोगों में से 99% आवश्यकता से अतिरिक्त भी अधिक भूमि, प्लॉट, 10–12 दुकानें बनाकर किराये पर लगाना, 5–6 करोड़ की फोर व्हीलर, 7–8 करोड़ का बंगला बना लेते हैं और अपने बच्चो की शादी भव्य रूप से करते हैं बस इनका जीवन यहीं तक सीमित है और ऐसे धन के अति भूखे यदि अति आसक्त हों तो न ही वानप्रस्थ आश्रम में जाते हैं न ही आजीवन संन्यास आश्रम स्वीकार कर पाते हैं। चांदी के पलंग पर ही मर जाते हैं पर पुनर्जन्म अवश्य पाते हैं न कि परमधाम। और इस बीच ये राजसिक ऐश्वर्यपूर्ण लोग जो भी पाप पुण्य करते हैं अगले जन्म में उस पाप से दुख और सुख दोनों ही पाते हैं।

ये लोग अति ब्याज से, धन का लोभ दिखाकर अपनी लेडीज वर्कर से दैहिक शोषण, धन के अहंकार से गरीबों ( पाप फलों से जो दरिद्र जन हैं उन दरिद्रों ) की खिल्लियाँ उड़ाना, धन की अकड़ से दामाद पर अंकुश रखना और धनबल पर बेटी को दामाद पर कन्ट्रोल रखने का बोलने आदि ये इनके पाप हैं ........यदि ये लोग धनाढ्य होकर आध्यात्मिक हो तो उस धन से महान महान पूर्त कर्म करके स्वर्ग लोक में परम सम्मान के अधिकारी हो जाते हैं। दस प्रकार का स्वर्गीय मंडल होता है अलग अलग दान के अनुसार अलग अलग स्वर्ग ये पाते हैं। पर यदि इनके पूर्त कर्म निष्काम भाव से हों तो इनको संसार की नश्वरता और जन्म जरा व्याधि मृत्यु से वैराग्य की उप्लब्धि

अवश्य होती है जिससे ये शान्त होकर दान पुण्य में ही अधिक समय बिताते हैं जिससे वैराग्य के फल से ब्रह्म लोक में एक कल्प तक ( 14 इन्द्र व 14 मनु की मृत्यु अवधि तक) सुख प्राप्त कर पुनः राजघराने में जन्म लेते हैं और पुनः आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर होते हैं उस अगले जन्म में ये लोग धन कमाने का सोचते भी नही और हरि या शिव दर्शन के इच्छुक होकर आगे की तैयारी करते हैं क्योंकि ये इस जन्म में भलीभांति समझ जाते हैं कि धन कमाकर उसके आजीवन दान से भी पुनः जन्म पाना ही पड़ता है अतः इस कारण ये लोग मीरा, ध्रुव की तरह अब अति धन, कीर्ति और ऐश्वर्य के चक्कर से मुक्त हो जाते हैं। उच्च स्तरीय लोकों से आये ये लोग बहुत बुद्धिमान भी होते हैं वे चाहें तो इस जगत में उच्च स्तरीय पद पर भी बैठ सकते हैं पर ... नहीं बैठते। इनको चिता की जलती अग्नि पतित नहीं होने देती

और आठों प्रहर विशुद्ध हृदय से युक्त होकर सद्गुण संपन्न होकर सद्गुरु की शरण से प्रभु के अद्वितीय किंकर हो जाते हैं। और ये यदि द्वादश वर्ष से चौबीस वर्ष तक अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक रहें तो इसी जन्म में इनको अपरोक्ष ज्ञान भी प्राप्त हो जाता है यही है परम निर्वाण का तद्भाव।

यही है जीवन्मुक्ति। और ये वेदान्त व उपनिषदों की मूर्ति कहे जाने लगते हैं क्योंकि उपनिषदों के ज्ञान विज्ञान से युक्त ये तद्रूप परात्पर ब्रह्म ही हो जाते हैं।

# अध्याय 77
# सांझ ढलेगी तेरी भी

संसार सागर में एक ही नियम है वह यह कि भोगी, नाशवान चमड़ी रूपी रूप पर मोहित, लोभी अथवा आसक्त नर –नारी निश्चित ही दुख और पुनर्जन्म पाते हैं। पापी लोग पशु पक्षी की योनी तथा धर्मपरायण सुख और स्वर्ग। भक्त जन जो सब कुछ छोड़कर भगवान को ही समर्पित हैं व स्वाध्याय, सत्संग, नाम जप, पुरश्चरण और अखंड ब्रह्मचर्य पूर्वक जीवन यापन कर रहे हैं उनकी गति परमधाम न कि पुनः गर्भ का कष्ट। और एक है पूर्णतः एकत्व रूपी पराविज्ञान जिससे वह साक्षात भगवान शिव की भांति परात्पर ब्रह्म ही हो जाता है । वह अभेद ज्ञान से तद्‌भावित और तद्रूप हो जाता है। ...

और भोगियों की निशानी है कि वे परनारी और परधन को भी अपनी अमानत समझते हैं तथा अनुचित लीपा पोती से समय नष्ट करना भी धर्म समझते हैं; परंतु पराया धन और पराई नार तलवार की ऐसी भयंकर धार है कि उससे कटकर जीव सीधा नरक ही जाता है । मरना सबको है और जब तक जीता है तब तक हर मनुष्य नित्य 8–10 रोटी से अधिक नही खाता और पाप 10000 रोटी के लायक करता है जो धन वह पाप से कमाता है उसका एक प्रतिशत भी कोई भी मनुष्य उपभोग नहीं करता वह सारा धन ब्याज सहित रोग , दुर्घटना से अस्पताल में , लड़ाई से कोर्ट कचहरी में या उन वस्तुओं में नष्ट होता है जो यहीं छोड़कर जाना है और मरने पर वह जीव यहीँ नाग बनकर उस धन के ही आसपास मंडराता रहता है और कुछ अतिपाप से प्रेत बनकर उसी दौलत और बंगले के आसपास ही भटकते हैं। पाप का अतिरिक्त दण्ड तो अलग है ही। अतः हे मनुष्यों ! आप सब 80 वर्ष के अंदर निश्चित ही चिता पर सोने वाले हो यह अमोघ भविष्य वाणी ही मानो तो फिर काहे पाप ( चोरी, बलात्कार, लूट, कुदृष्टि और,बेईमानी आदि ) करके ईश्वर की सुंदर सृष्टि में खलल मचा रहे हो। इससे आपको भयंकर दुख भोगना पड़ेगा। अतः अक्षयरुद्र की बात मानकर धर्मात्मा बनो। सांझ आपकी भी ढलेगी और इस अक्षयरुद्र के देह की भी .....बचना किसी को भी

नहीं। पर आप धर्म पालन से परिवार, समाज और राष्ट्र को तो सुख दे ही सकते हो  तथा इससे आपको भी दिव्य लोक प्राप्त होगा। और आत्मिक शान्ति।

# अध्याय 78
# मनुष्य को पाप करने का अधिकार नहीं

मनुष्य को पाप करने का अधिकार नहीं। यदि वह आपका स्वर्ण, रजत, कन्या, गाय या गाड़ी (वाहन) अथवा पैसा आदि चुराता है तो अगले जन्म में वह इतनी ही धनराशि ब्याज सहित चुकाता है।

बस यही है कर्मचक्र । अतः आपकी कोई भी वस्तु चोरी हो जाये तो अति दुख न मनाये न ही भगवान को कोसे न ही भाग्य को कोसे। इस धरती पर सभी के नवीन नवीन कर्मफल अपने आप बढ़ते जाते हैं। भगवान ने सबको स्वतंत्र कर रखा है। पर हाँ प्राकृतिक आपदाओं (बाढ़ तूफान, ज्वालामुखी विस्फोट, दुर्घटना में अंग भंग होना )

की चपेट में आना या मौसमीय पीड़ा ( सर्दी गरमी का शारीरिक कष्ट ) अवश्य पाप का दण्ड है। और पुत्र या बहु द्वारा जो कष्ट माता पिता सास ससुर को दिया जाता है वह भी आपके पाप का दण्ड नहीं अपितु उनको ही भयंकर पाप लगता है। पत्नि यदि पड़ोसी के साथ मुख काला कर रही हो तो वह भी आपका पाप नहीं अपितु उसके कुकर्म का फल वही भोगेगी तथा वह परपुरुष भी।

वैसे भी सोचने वाली बात है कि यदि भाग्य में ही स्त्री का परपुरुष से कुसंग लिखा होता तो परपुरुष को दण्ड नहीं मिलना चाहिए था पर विधान केवल इतना है कि परनारी भोग से उस पुरुष को दण्ड अवश्य मिलेगा। अतः इससे भी यह बात सिद्ध होती है कि किसी स्त्री को दूषित करना

पुरुष का कुकर्म मात्र है । अतः पति लोग दुखी न हो। यह आपका पाप फल है ही नही।

# अध्याय 79
# मंत्र, तीर्थ, शास्त्र, गुरु या पिता के सहारे पाप न करें

जानबूझ कर पाप करने पर पाप पीछा नहीं छोड़ते :

अपने भक्तपिता या भक्त पुत्र की भक्ति के सहारे से भी या मंत्र के बल से पाप न करें, तीर्थ पापों का नाश अवश्य ही करते हैं पर पुराणों में यह भी लिखा है कि जो ऐसा सोचता है कि – मैं तो तीर्थों में स्नान से पाप नष्ट लूँगा इस कारण यह  पाप कर रहा हूँ "तो..... वह पाप कभी भी नष्ट नहीं होता।

विष्णुभक्त राजा बलि का पुत्र साहसिक भी ऐसा ही था वह बाप की भक्ति की चर्चा सभी देवताओं से सुनकर गद्गद हो गया और उसने सुन लिया कि जिसके खानदान में बलि जैसा दानी हो उसके प्रत्येक सदस्य को निष्पापता मिल जाती है अतः फिर काहेकी चिंता।

मैं तो उनका पुत्र हूँ।

एक दिन अप्सरा तिलोत्तमा आई और उसने साहसिक पर नयन कटाक्ष करके भाव बता दिया कि मैं आपसे रतिसुख चाहती हूँ........ ( कुलटा और पुंश्चली नारी एक नर से आज तक संतुष्ट नहीं हो पाई और अपनी वासना के क्षणिक सुखों के लिए वह कुछ भी कर सकती है)

बस फिर क्या है?

99.99%  नर तो स्त्री लम्पट होते ही हैं बस केवल कोई भी नारी एक बार ईशारा कर दे फिर तो वे भी अपनी मर्यादा भूल जाते हैं और अपनी पतिव्रता स्त्री की भी परवाह नहीं करते।

फिर क्या था दोनों ने पापक्रिया की।
पर साहसिक ने सोचा मेरे पिता तो धर्मात्मा हैं फिर मुझे काहेकी चिंता, और तिलोत्तमा बोली की आपको चिंता नहीं तो मैं भी तो आपकी ही हूँ मैं भी क्यों चिंता करूँ, आप मुझे पाप से बचा लेना।

Sahsik said -" don't worry Tilottama dear!
I'm the greatest Bali's son-
ही ही ही ही हा हा हा हा चल चलते हैं।
मूर्ख दोनों नरलम्पटी tilottama और ladies देह लम्पट ।

इस पाप से साहसिक तो गधा बना अगले जन्म में जिसको भगवान कृष्ण ने मारा था जो ब्रह्मवैवर्त पुराण में वर्णित है। और तिलोत्तमा को (बलि की शाप से की तूने मेरे पुत्र को धर्म से क्यों डिगाया वो तो साधारण था पर तू तो पुण्यों से बनने वाली अप्सरा .....अतः जा भाड़ में और उसे )स्वर्ग से च्युत कर दिया गया ।

यही तिलोत्तमा अपना पाप का दंड भोगने के लिए अपने दिव्य व सुगंधित शरीर को छोड़कर भौतिक देह वाली बाणासुर की पुत्री ऊषा बनी जो अनिरुद्ध की पत्नि हुई।

इसने रो रोकर क्षमा मांगी थी इस कारण इससे कहा गया कि तू अनिरुद्ध के शरीर को स्पर्श करते ही शुद्ध हो जायेगी इस कारण उनकी पत्नि बनेगी।

अतः पिता, पुत,मंत्र या तीर्थ के बल पर कोई भी पाप न करें अन्यथा दंड से कोई भी नहीं बचा सकता।

# अध्याय 80
# वृक्ष का अतुलनीय माहात्म्य; सांझ ढलने से पहले अवश्य यह अद्भुत कृपा का कार्य करें

कार्तिक मास में श्रीहरि के प्रीत्यर्थे जो पुरुष थोड़ा–बहुत भूभाग क्रय कर या किसी से ( अविवादित भूमि ) दान मे लेकर उस भूखण्ड में पीपल, आंवला और तुलसी का आरोपण करता है वह पुरुष हजार कन्यादान और एक कोटी गौदान का फल पा लेता है। उसे समस्त यज्ञों में दीक्षित होने का फल, तीर्थ यात्रा, तीर्थवास का फल, समूची भूमि दान का फल और पितरों व ऋषियों की तृप्ति का फल  प्राप्त हो जाता है। इसी प्रकार माघ और श्रावण मास में बिल्ववृक्ष, वट वृक्ष का अतुलनीय माहात्म्य है और आश्विन माह के देवीवार (सोम या शुक्रवार ) को महुआ वृक्ष का माहात्म्य है।

यहाँ विचार करने वाली बात है कि

गृहस्थ लोग ( गरीब से गरीब भी ) अपनी एक पुत्री के विवाह में कम से कम एक से दो लाख के मध्य खर्च करते ही है। ( पंगत में 40–50 हजार और सोफा डबल बेड अलमारी फ्रिज टीव्ही आदि सामान में कम से कम 60–70 हजार) अतः उन गरीब या मध्यम वर्ग के लोगों की तीन संताने हैं तो वह रो–धोकर या जोड़कर या कर्ज लेकर कैसे भी उनका विवाह अवश्य करते हैं।

पर केवल उनको दो तीन कन्यादान का फल (मनुष्य योनी तथा एक मन्वन्तर तक एक कन्यादान का फल ) ही मिल पाता है । शायद आप समझ सकते हैं कि यह शिवांश अक्षयरुद्र आपसे क्या कहना चाहता है।

अतः  एकाध लाख का एक विवाह का खर्च आप वृक्ष निमित्त भूखण्ड खरीदने में लगा दो। यह पुण्य यदि आप अपने पास रखते हो तो आप परलोक में ब्रह्मा जी की आयु तक संपूर्ण ऐश्वर्य और स्वर्ग आदि उच्च लोकों की देवकन्याओं से विवाह का सुख ( वहीं ) प्राप्त करोगे तथा निष्काम भाव से किया तो आप इष्ट लोक के अधिकार को पा लोगे।

अतः ऐसा अवसर न छोड़े। इससे पहले एक बार हमने त्रिस्रवण स्नान का माहात्म्य और दीवट की महिमा बताई थी जो अति सरल और सहज थी उन दोनों का 10000000 गुना अधिक माहात्म्य इस वृक्ष के आरोपण से है।

दस पुत्र उत्पन्न करने पर और उनको संस्कारित कर बड़ा करने पर जो फल मिलता है वही फल एक संस्कारी पुत्री को उत्पन्न करने का पद्म पुराण में निहित है और एक संस्कारी बेटी ( जो पतिव्रता हो जाए या भक्तिमति अथवा अखंड ब्रह्मचर्य व्रत से युक्त सुलभा की तरह या ब्रह्मवादिनी) की तुलना मे सहस्र कोटी गुना अधिक फल पीपल, आंवला या बिल्ववृक्ष व महुआ वृक्ष का है। उसी भूखण्ड में आप चाहो तो अशोक वृक्ष भी लगा सकते हैं। इस अशोक वृक्ष का माहात्म्य देवी पार्वती ने बहुत गाया है। जो हमारी पुस्तक शिव चरित मानस में भी किसी अध्याय में है। अतः भूलोक से पलायन करने से पूर्व कृपया भूमाता का ऋण भी चुकाये। देव ऋण, पितृ ऋण, ऋषि ऋण के अतिरिक्त दो ऋण और महत्वपूर्ण होते हैं जिसमें भूऋण और स्त्रीऋण भी है।

भूऋण इस वृक्ष दान से दूर हो जाता है और स्त्री ऋण हर नारी के प्रति पवित्र भाव से भी नष्ट हो जाता है। अथवा अपनी पत्नी, बहन, भांजी आदि से उचित व्यवहार करते हुये मान सत्कार व धन या वस्त्र दान से। अखंड ब्रह्मचारियों के सभी ऋण मात्र नैष्ठिक ब्रह्मचर्य तथा गुरुसेवा और ज्ञानदान से दूर हो जाता है। अधिक विस्तार के लिए आप शिव चरित मानस भाग द्वितीय के तीन अध्यायों का स्वाध्याय करें अध्याय 124,125 और 126 में हमने शिवरूपी वृक्ष माहात्म्य बताया है। और महत्वपूर्ण बात सुनें वृक्ष लगाने से मात्र 21, 101 या 1000 पीढ़ियों का ही उद्धार नहीं होता अपितु शरीर मे जितने रोम हैं उतनी ही पिछली और उतनी ही अगली पीढ़ियों का उद्धार सुनिश्चित है यह आप हमारे महाग्रंथ शिव चरित मानस भाग द्वितीय में ही देखें कृपया। जिनके पुत्र संतान न हो वह ऐसा अनिवार्य करे तो वे वृक्ष सहज ही आपको श्राद्ध कर्म का सविधि फल देते हैं ऐसा पद्म पुराण के वृक्ष माहात्म्य में लिखा है।

# अध्याय 81
# वे वृद्ध आश्रम में भगाने के लिये ही विवश करेंगे

हर माह 40 हजार बचाकर 15 वर्ष में यह भवन और गाड़ी खरीदकर मर जाना मूर्खता है। अतः हरि को भजो।
- शंकराचार्यांश ब्रह्मानंद अक्षयरुद्र

हम हर माह 50 हजार या 1 लाख की तनख्वाह पाने के लिए अनुष्ठान पर अनुष्ठान करते हैं और अनुष्ठान करने पर भी यदि मिलने ही लग जायें तो उस धन में से हम केवल 10 हजार ही भरण–पोषण के लिए खर्च करते हैं तथा शेष धन बड़े भवन व एक दो फोर व्हीलर गाड़ी के लिए (40 हजार मासिक या अधिक) जोड़ना आरंभ कर देते हैं यह भी पागलपना है मात्र भोग बुद्धि है। कच्चा कमरा हो तो बना लो भाई दो तीन रूम पर आप तो 3–4 मंजिल के सपने देखने लगते हो। यह ठीक नही। काल सिर पर नृत्य गान कर रहा है और हमें संग्रह की सूझ रही है। यही है तुच्छ व दूषित भोग बुद्धि ।

चलो माना कि 15 वर्ष के संग्रह से (180 माह में चालीस चालीस हजार प्रतिमाह की रक्षा से और दान में कंजूसी करके भी) 72 लाख हो ही जायें जिसमें से आप 65 लाख का भवन बना भी लो और 7 लाख की कार.. ... और सोचो 2–4 साल भोगकर चिता पर सो ही जाओगे।

और इस महल को छोड़कर सदा के लिए चले जाओगे....... आपका बेटा भी इस महल को आगामी 20 साल में बेंचकर धन को बर्बाद कर डालेगा क्योंकि आपकी बहुयें या आपकी पौत्रवधुएं यहाँ नहीं रहने वाली।

सारे घरो की यही कहानी है मेरे भाई! अतः धन है ही तो कुछ धन को परलोक के लिए खर्च करो। 1000 या 2000 स्क्वेयर फीट का भूखण्ड खरीदो और उसमें पीपल बिल्ववृक्ष आदि लगा डालो तथा एक भव्य मंदिर निर्माण

करो। इसका माहात्म्य अतुलनीय है इससे आपकी रोमतुल्य पीढ़ियाँ तर जायेंगी यह पद्म पुराण की घोषणा है। कुछ धन संतानों को बांटना भी आवश्यक है पर सारा धन बांटना अनुचित है।

सारा धन भोग में नष्ट करना ...... यह कैसी मूर्खता है ।

कैसा मजाक है यह । विचार काहे नहीं करते ?

आपसे अच्छे तो वे लोग हैं जो 10 हजार मासिक कमाकर 1000 रूपी दशांश परोपकार में लगाते हैं।

सुनों पुनः –

जीवन जप तप, ध्यान और अनुष्ठान, पराविज्ञान या गुरुसेवा के लिए मिला है न कि संग्रह के लिए।

न ही अनुचित संग्रह करके चिता की ढेरी पर सोकर रोने के लिए।

और हाँ एक सच सुनों– 90 प्रतिशत परिवार में तो वृद्ध होने पर भी (पिताश्री द्वारा इतना सब कुछ देने पर भी, महल व गाड़ी खरीदकर देने पर भी ) उनको सुख व चैन की दो रोटी भी नहीं मिल पाती रात दिन बहुएं और बेटे यही बकते रहते हैं कि – "बुड्ढा मरता काहे नाहीं ....

बार बार गंदगी फैलाता रहता है।.....

बार बार अस्पताल जाना पड़ता है।......."

अतः सोच लो आप क्यों यह सब संघर्ष करते हो?

क्या इसी कारण यह माल पानी जोड़कर रखा था कि बहु और बेटे रात दिन आपको ही खाते रहें।

सोचो

सोचो

सोचो ।

और अभी आप किशोर हो तो (हे किशोरों!) सावधान हो जाओ ।

जीवन कल्याण के लिए मिला है । भोगों के साथ रमण के लिए नहीं। ये सुरा और सुन्दरी ( नारी रूप पर अति मोह ) ! आपको खोखला कर डालेगे अतः

हे किशोरों !

यदि परम पद नहीं मिला तो आप भी रोओगे और आपके पितर व माता पिता भी।

जब आपको पता है कि संयम, अहिंसा और तप जप से या अनन्य भक्तिभाव से सहस्रों पीढ़ियाँ तर जाती हैं तो क्यों माँ बाप के भोग मार्ग की आज्ञा को चुनते हो।

अतः हरि को भजो। गृहस्थ हो तो कर्तव्य पालन ईमानदारी से करो पर आसक्त मत होना परिवार में घटनाएं घटकर ही रहेंगी सबके घर घटती हैं आप आत्मभाव में रमण करना। तभी शान्ति पा सकोगे।

उनकी यथासंभव सेवा करो पर कुछ हो ही जाये तो रोना मत। सब अपने अपने पाप पुण्य भोग रहे हैं। सबको समझाओ कि गुरुदीक्षा लो, पुरश्चरण करो, रक्षा कवच पढ़ो और अधर्म न करो। पर वे मूर्ख लोग न मानें तो उनके दुख पर या मृत्यु होने पर रोना मत। और सदा ही ब्रह्म से एकरूप रहकर अक्षय ब्रह्म रस का महाभोग भोगो।

शिवोऽहम्

शिवोऽहम्

शिवोऽहम्

सोऽहम् केवलं.....

–शंकराचार्यांश ब्रह्मानंद अक्षयरुद्र

18 अक्टूबर 2024

# •••••प्रार्थना •••••

हे परब्रह्म! आप ही पराशक्ति और सर्वेश्वर कहलाते हो आप ही गुणातीत और रूपातीत होने से गुरु संज्ञा पाते हो। आपकी ही सेवा से इस मन्वन्तर के तथा इस कल्प के सभी देवी देवताओं का अस्तित्व है मैं अक्षयरुद्र आपसे पूर्व काल में की गई गलतियों या अपराधों के लिए क्षमा याचना करता हूँ। तथा आपके प्रतिनिधि ( धर्मदेव, यमदेव, चित्रगुप्त, श्रवण और श्रवणी, इस देह में विराजमान देवताओं, पितरों, लोकमाताओं, सिद्धपीठों पर विराजमान परम चैतन्य सत्ताओं ! सभी दिशाओं के स्वामी!, भू पर विचरण कर रहे सभी देव– ज्ञानी– भक्त आदि! तथा अन्य सभी नर नारियों के प्रति मुझसे तथा मेरे परिवार के सदस्यों ( 1000 पूर्व पीढ़ियों व आगामी वंशजों ) व मेरे शिष्यसमुदाय और शुभचिंतकों से भी जो गलतियाँ हुई हों उनके लिए आप सभी से क्षमा की याचना करता हूँ तथा व्यपोहन स्तोत्र में जो जो नाम आये हैं और जो जो छूट गए उन सभी से भी क्षमा हेतु प्रार्थना करता हूँ । क्षमा तो देवताओं व देवियों का महान आभूषण है अतः सभी इस भुवनेश्वरी–किंकर को अपना शिष्य और सेवक जानकर आशीर्वाद प्रदान करें और इसे आशीर्वाद दें कि यह आपकी पावन धरा पर धर्म की स्थापना का परम माध्यम बने।

मैं यह प्रार्थना व्यवहारिक रूप व द्वैत भाव से भावित होकर करता हूँ। इस भूलोक पर सब कुछ व्यवहार व विनम्रता से ही संभव है। अतः आपको पुनः नमन।

**– शंकराचार्यांश ब्रह्मानंद अक्षयरुद्र अंशभूतशिव जिला गुना मध्य प्रदेश**
**– 9340–53–7971**